ज्ञान सरोवर

(भाग 1)

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

पहला संस्करण : अगस्त 1955
दूसरा संस्करण · नवम्बर 1958
तीसरा सस्करण जुलाई 1971 • आषाढ़ 1893

मूल्य 5 50

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार,
पटियाला हाउस, नई दिल्ली-1 द्वारा प्रकाशित।

क्षेत्रीय कार्यालय ·

बोटावाला चैम्बर्स, सर फीरोजशाह मेहता रोड, बम्बई-1
आकाशवाणी भवन, कलकत्ता-1
शास्त्री भवन, 35, हेडोस रोड, मद्रास-6

राकेश प्रेस, अजीज गज, दिल्ली-6 द्वारा मुद्रित।

भूमिका

देश में हमारी अपनी सरकार के बनते ही उसका ध्यान जिन कामो की तरफ गया उनमे से एक यह था कि नए और कम पढे लोगों के लिए ऐसी किताबे लिखाई जाए जिन्हे वे आसानी से पढ और समझ सकें और उनसे लाभ उठा सके। हमारे देश में हजारों वर्षो से किताबो के बिना पढाई का रिवाज रहा है। पर अब कई कारणो से उस तरह की पढाई उतना काम नही दे सकती जितना पहले देती थी। अब किताबों की माग और उनका प्रभाव दिन-दिन बढता जा रहा है। इसलिए आम लोगो के लिए ठीक तरह की किताबो का तैयार किया जाना और भी जरूरी हो गया है।

सब लोगो को पढना-लिखना सिखाने की नई सरकारी नीति ने इस तरह की किताबो को जल्दी से जल्दी तैयार कराने की माग को और बढा दिया है। पढे-लिखे लोगो की गिनती देश मे बढती जा रही है। अगर उन्हे अच्छी किताबे नही मिलेगी तो पढाई-लिखाई के फैलने से देश का बल बढने की जगह हमारी कठिनाइया बढ सकती है। इन नई किताबो के लिखाने मे इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जहा उन्हे पढ कर लोगो को अपनी सामाजिक और आर्थिक हालत सुधारने मे मदद मिले, उनमे बुद्धि और विज्ञान की कद्र बढ़े और उनमें वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास हो, वहा ऐसा भी न हो कि भारत की पुरानी सभ्यता मे जो अच्छी बाते है उन्हे वे भूल जाएं।

इस माग को पूरा करने के लिए भारत सरकार ने जनसाधारण के लिए 'ज्ञान सरोवर' नाम से एक विश्वकोश लिखाने की व्यवस्था की है। इस विश्वकोश की तैयारी मे यह ध्यान रखा गया है कि आम लोग इसे पढे तो आजकल की दुनिया मे जो नए-नए आर्थिक और राजनीतिक विचार पैदा हो रहे है उनको समझने लगें और विज्ञान और तकनीक में जो दिन-दिन बढती हो रही है उसे भी जान ले।

7 देवी-देवताओ की कथाएं

पुराणो का महत्व 87

(1) सावित्री सत्यवान 93

(2) भीष्म प्रतिज्ञा 99

8. विश्व-साहित्य

(1) कालिदास 103

(2) हिन्दी साहित्य की धारा 111

(3) अंग्रेजी साहित्य की धारा 123

9 लोक-साहित्य

(1) भारत के लोक-गीत 132

(2) भारत की लोक-कथाए 141

चम्पा का फूल 146

10 जीव-जन्तु और पौधे

कीड़े-मकोड़े

चीटी

155

जाने-अजाने पेड़ :

(1) आम

161

(2) बबूल या कीकर

164

(3) कुडजू

166

पक्षियो की दुनिया

169

(1) कोयल

170

(2) मोर

171

(3) पेंगुइन 173
(4) तोता 173
(5) पीरू 174

पशु-जगत की बातें : 177
(1) जेब्रा 178
(2) कंगारू 179
(3) हाथी 181
(4) भेड 183

समुद्र का अजायबघर :
मोती 186

11. कृषि-विज्ञान
खेतीवाडी का साधारण परिचय 189

12 रोग पर विजय
स्वास्थ्य के मूल सिद्धांत 198

13 विज्ञान की बातें
बडे-बड़े आविष्कार 207
(1) रेलगाडी 207
(2) मोटर 211
(3) पानी के जहाज 213
(4) हवाई जहाज 215
(5) बिजली 218

14. इंजीनियरी के चमत्कार
भाखडा बाध 221

15 घरेलू उद्योग-धंधे

(1) साबुन बनाना 225

(2) फल-संरक्षण 230

16 सौंदर्य की खोज मे

(1) ताजमहल 234

(2) मदुरै का मंदिर 239

(3) संगीत 246

17 राजनीति और अर्थशास्त्र

राज्य प्रबन्ध के बदलते रूप 256

18 खेल-कूद

खुले मैदान के खेल 265

(1) फुटबाल 266

(2) हाकी 268

(3) क्रिकेट 271

(4) कबड्डी 274

19 नए भारत के निर्माता

जवाहरलाल नेहरू 276

हमारी पृथ्वी

यह पृथ्वी - जिस पर हम रहते हैं, नारंगी की शक्ल के समान है। इस पर बड़े-बड़े पहाड़, नदियां, समुद्र, तरह-तरह के पेड-पौधे और पशु पाए जाते है। मगर इस विशाल ब्रह्माड में हमारी पृथ्वी का आकार बहुत छोटा है।

पृथ्वी से बडे अनेक तारे, ग्रह और अन्य आकाशीय पिंड है। इन्होंने अरबो वर्ष पहले जन्म लिया था। अब भी वे कुछ तो उसी रूप मे और कुछ ठडे होकर चक्कर लगा रहे है। जो सूर्य हमें प्रतिदिन दर्शन देता है उसके सामने भी हमारी पृथ्वी एक छोटी-सी चीज है। हम जानते है सूर्य भी एक तारा है और हमारी पृथ्वी एक ठोस पिंड है। सूर्य प्रज्ज्वलित गैसों का एक गोला है।

सूर्य और उसका परिवार

सूर्य हमें अपनी पृथ्वी से बहुत दूर मालूम होता है, मगर उसके प्रकाश को हम तक पहुंचने में लगभग आठ मिनट ही लगते हैं। प्रकाश की गति एक सेकेन्ड में 1 लाख 86 हजार 300 मील है। (1 मील=1 6 किलोमीटर) लेकिन बहुत-से तारे ऐसे

भी है जिनके प्रकाश को हम तक पहुचने मे सैकडो साल लग जाते है। अगर रात-दिन चलने वाली डाकगाडी से भी किसी एक तारे की यात्रा की जाए, तो उन तक पहुचने मे करोडो साल लग जाएगे।

तनिक सोचिए तो, क्या यह आश्चर्य की बात नही है कि पृथ्वी बृहस्पति, शुक्र, मगल और दूसरे कई ग्रहो के साथ सूर्य के चारो ओर चक्कर लगा रही है। लेकिन सूर्य के चारो ओर ग्रह वृत्ताकार कक्षा मे चक्कर नही लगाते। उनकी कक्षाए दीर्घवृत्ताकार होती है। इसीलिए सूर्य से ग्रहो की दूरी बदलती रहती है। यह दूरी नापते समय हम एक सख्या निर्धारित करने के लिए औसत दूरी लेते है।

सूर्य से हमारी पृथ्वी की अधिकतम दूरी लगभग 9 करोड 30 लाख मील और न्यूनतम दूरी 9 करोड 15 लाख मील रहती है। इस प्रकार औसत दूरी 9 करोड 30 लाख मील हुई। (1 मील=1 6 किलोमीटर)

इन ग्रहो को लिए हुए सौरमण्डल एक घूमती तश्तरी के समान है। सूर्य इन सब के वीच मे है।

सौरमण्डल मे सूर्य सब ग्रहो का पिता है। इसलिए हम पहले सूर्य के वारे मे कुछ वाते वताएगे।

सूर्य ने केवल हमारी पृथ्वी ही को पैदा नही किया, वल्कि धरती पर जो भी जिन्दगी है, वह उसी के कारण है।

सूर्य करोडो साल से रात-दिन अपने चारो ओर गर्मी और प्रकाश फेंक रहा है। क्या गर्मी के मौसम मे आपने कभी दोपहर मे सूर्य की गर्मी सही है? कैसी झुलसा देने वाली होती है। फिर भी सूर्य के प्रकाश और गर्मी के दो अरब भागो मे से केवल एक भाग ही पृथ्वी तक पहुचता है।

सूर्य वहुत वडा है। अगर उसे दस लाख टुकडो मे तोड दिया जाए, तो भी उसका हर टुकडा पृथ्वी से वडा होगा। वह इतना गर्म है कि यदि हमारी पृथ्वी उतनी गर्म हो जाए, तो पृथ्वी और उसकी सारी चीजे पिघलकर गैस और हवा वन जाएगी।

सूर्य ने अपने कुटुम्ब को कैसे पैदा किया? इसका केवल अनुमान ही किया जा सकता है। ग्रहो के जन्म के वारे मे वहुत-से लोगो ने अटकले लगाई हैं। लेकिन जो

सबसे लोकप्रिय अटकल है, वह इस प्रकार है

आज से करोडो वर्ष पहले सूर्य अकेला ही था। वह बिना किसी ग्रह को साथ लिए आकाश में चक्कर लगा रहा था। अचानक उससे भी एक दूसरा बडा सूर्य घूमता-फिरता उसके पास आ निकला।

यदि वह बडा सूर्य हमारे सूर्य के और पास आ जाता, तो दोनो मे बडी भयानक टक्कर हो जाती और हमारे सूर्य का तो काम ही तमाम हो जाता। लेकिन सयोग की बात, वह बडा सूर्य अधिक पास नही आया। दोनो सूर्यो मे केवल खीचतान होकर रह गई। फिर भी जो ताकतवर और बडा था वह जीता। जो छोटा और कमजोर था, वह हार गया।

फल यह हुआ कि हमारे सूर्य की सतह से कुछ गैस एक बडी लहर के रूप मे उठी और टूटकर सूर्य से इस तरह अलग हो गई, जैसे दो बच्चो के झगडे और खीचतान मे एक का कपडा फट कर अलग हो जाए। लेकिन वह बडा सूर्य हमारे छोटे सूर्य का फटा कपडा, यानी वह गैस जो अलग हो गई थी, अपने साथ नही ले जा सका। वह उसे छोडकर आगे बढ गया। वह गैस दोनो तरफ से खिचने के कारण शकरकन्द की तरह लम्बी हो गई—सिरे पतले, बीच का भाग मोटा, फिर उस गैस ने हमारे सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाना शुरू किया।

कहा जाता है कि पृथ्वी और दूसरे ग्रह सूर्य से पैदा हुए है। चित्र मे दिखाया गया है कि जब एक दूसरा बडा सूर्य हमारे सूर्य के पास से निकला, तो कुछ गैस एक बडी लहर के रूप मे उठी और टूट कर सूर्य से अलग हो गई।

धीरे-धीरे यह गैस ठडी होती गई और उसमे जगह-जगह गाठे पडती गई। ज्यो-ज्यो समय बीतता गया वे गाठे ठोस और अधिक ठडी होती गईं। आखिर मे वे उन ग्रहो में बदल गईं जिन्हे हम सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाते देखते है। उन्ही ग्रहो मे से पृथ्वी भी एक है।

सूर्य और उसका पूरा कुटुम्ब एक तरह परिवार बनाता है। उनकी चाल के नियम भी एक जैसे हैं। जहां तक मालूम हो सका है, सब के सब एक ही प्रकार के पदार्थों से बने है। हो सकता है कि वे छोटे-बड़े, नए-पुराने हों, पर सूर्य के सिवा सभी देखने में लगभग एक-जैसे लगते हैं। वे सूर्य के चारों ओर एक ही दिशा में घूमते रहते हैं।

सूर्य से पैदा इन बड़े-बड़े ग्रहों की गणना 9 है। छोटे-छोटे भी अगणित हैं, जो दिखाई भी नही पडते। 9 बडे ग्रहो के नाम हैं —बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति, शनि, वरुण (यूरेनस), वारुणी (नेपच्यून) और यम (प्लूटो)। इनमें से कुछ पृथ्वी से भी बडे हैं। पर वे सभी सूर्य से बहुत छोटे है।

पृथ्वी सूर्य के चारो ओर एक चक्कर 365¼ दिनो मे पूरा करती है। हम इस अवधि को एक वर्ष कहते हैं। इसी प्रकार सब ग्रह अलग-अलग अवधि मे सूर्य के चारो ओर अपना-अपना चक्कर पूरा करते है। इसलिए किसी ग्रह का साल छोटा होता है, किसी का बडा।

यदि बडे गोले को सूर्य मान लिया जाय तो अन्य ग्रह कितने छोटे होंगे। इस प्रकार मगल बुध और यम बिन्दु मात्र होंगे।

अन्य ग्रह सूर्य से कितने छोटे हैं ?

बुध और शुक्र दो ऐसे ग्रह हैं जो पृथ्वी के मुकाबले मे सूर्य से अधिक नजदीक है। बुध सूर्य के सबसे ज्यादा करीब है, फिर भी वह सूर्य से 3 करोड 60 लाख मील दूर है। वह सूर्य का एक चक्कर केवल 88 दिनो मे पूरा कर लेता है, यानी उसका साल केवल 88 दिनो का हुआ। उसके बाद शुक्र आता है जो सूर्य से 6 करोड 70 लाख मील दूर है। वह एक चक्कर 225 दिनो में पूरा कर लेता है, इसलिए शुक्र का साल 225 दिनो का हुआ। तीसरा नम्बर पृथ्वी का है। वह सूर्य से 9 करोड 30 लाख मील दूर है और एक चक्कर 365¼ दिनों मे पूरा करती है। मगल, बृहस्पति, शनि, वरुण, वारुणी और यम सूर्य से और

सूर्य—आग का दहकता हुआ गोला

भी दूर है ! इसलिए वे सूर्य के चारो ओर चक्कर लगाने में अधिक समय लेते है। यानी उनके साल की अवधि भी ज्यादा होती है। यह जानकर आपको आश्चर्य होगा कि यम नाम का गह जो सबसे छोटा है, अपना एक चक्कर लगभग 248 वर्षो में पूरा करता है, यानी उसका एक वर्ष हमारे 248 वर्षों के वरावर है। वह सूर्य से 3 अरव 67 करोड़ मील दूर है। (1=मील 1·6 किलोमीटर)

इससे आप अनुमान कर सकते है कि सूर्य का परिवार कितनी वडी जगह में फैला हुआ है।

पृथ्वी और उसकी वनावट

क्या आप जानना चाहते है कि पृथ्वी सचमुच कितनी वडी है ? तो सुनिए। हमारी पृथ्वी इतनी बड़ी है कि अगर आप मोटर पर 300 मील रोज के हिसाब से चले, तो पृथ्वी के चारो ओर एक चक्कर लगाने में लगभग तीन महीनें लगेगे। यानी पृथ्वी का घेरा लगभग 25000 मील है। इसी प्रकार उसके आर-पार की लम्वाई कोई 8,000 मील है।
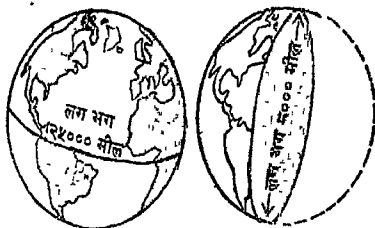
पृथ्वी का घेरा लगभग 25,000 मील है और आर-पार की लम्वाई लगभग 8,000 मील।

अगर आप पहाडियों और गड्ढो का विचार न करे और पृथ्वी पर दृष्टि डाले तो वह चिपटी जान पड़ेगी। पर असल में पृथ्वी नारंगी की तरह है, दोनो सिरो पर कुछ-कुछ चिपटी। उसके गोल होनें के वहुत-से प्रमाण है ! पहला तो यह कि अगर किसी जगह से सीधे चलना शुरू करे, तो कुछ समय वाद पृथ्वी का पूरा चक्कर काटकर उसी जगह पर आ जाएगे, जहा से
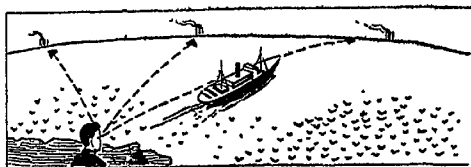
चले थे। दूसरे यदि आप समुद्र के किनारे खडे होकर दूर से आने वाले जहाज को देखे, तो सबसे पहले जहाज का मस्तूल दिखाई देगा, फिर बीच का भाग और अन्त मे निचला भाग। यदि पृथ्वी चिपटी होती, तो सारे का सारा जहाज एक दिखाई दे जाता।

पृथ्वी सूर्य के चारो ओर तो घूमती ही है, साथ ही वह लट्टू की तरह अपनी धुरी पर भी घूमती है। इसीलिए पृथ्वी के उस हिस्से मे दिन होता है जो सूर्य के सामने रहता है। जो सामने नही रहता, वहा रात होती है। लट्टू की तरह चक्कर लगाने से पृथ्वी का हर भाग बारी-बारी से सूर्य के सामने आता रहता है। रात के बाद दिन और फिर दिन के बाद रात का क्रम चलता रहता है।
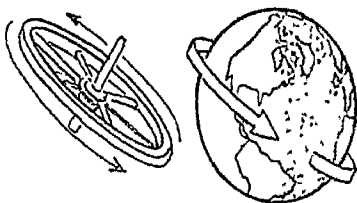
पृथ्वी अपनी धुरी पर एक पहिए की तरह घूमती है। इससे दिन और रात होते है।
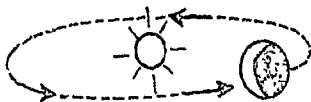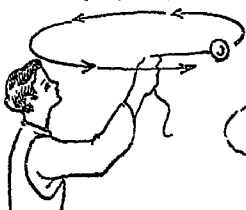
पृथ्वी सूर्य के चारो ओर इस प्रकार घूमती है जिस प्रकार एक पत्थर रस्सी के सिरे पर बाधकर घुमाया जाये। इससे मौसम होते है।
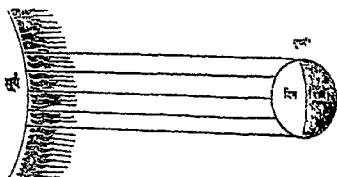
पृथ्वी का जो हिस्सा सूर्य के सामने होता है, वहा दिन होता है और जो सामने नही होता, वहा रात होती है।

आप पूछ सकते हैं कि हमें पृथ्वी का यह सब हाल कैसे मालूम हुआ ? इतनी गहराई तक कुए या सुरंगे तो खोदी नही जा सकती। बात यह है कि ज्वालामुखी पहाड़ पृथ्वी के सैकड़ो मील अन्दर की धातुए और चट्टाने धरती पर उगलते रहते है। उन पिघलते हुए पदार्थों को हम लावा कहते है। उन्हे देखकर हम पृथ्वी के

पृथ्वी का छिलका
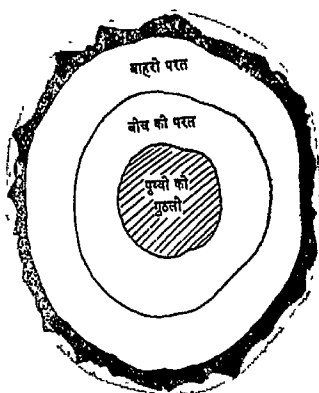
कहा जाता है कि जब पृथ्वी ठडी हुई तो सबसे भारी गैस और दूसरी वस्तुओ से पृथ्वी की गुठली बन गई, उससे हल्की वस्तुओ से बीच की परत बनी और सबसे हल्की वस्तुओ से पृथ्वी का छिलका बना।

अन्दर की बहुत-सी बाते जान सकते हैं। इसके अलावा भूकम्प बताने का एक यन्त्र होता है। वह हमे बताता है कि भूकम्प की लहरे पृथ्वी के किन-किन भागो से आई हैं और वे भाग किन-किन पदार्थों के बनें हैं।

आप जानते हैं कि पृथ्वी का धरातल सब जगह समान नही है। जब आप कही की यात्रा करते है, तो पहाड़, मैदान, नदिया, झीलें, समुद्र, दलदल, चौडी वादिया सकरी घाटिया, रेगिस्तान और जगल, यानी भाति-भाति की चीजें देखते हैं। ये सब चीजें पृथ्वी पर सदा से नही हैं और न अचानक हो गई हैं। वे बनती और बिगडती रहती हैं और उन्हे उन बडी शक्तियो ने जन्म दिया है, जो दिन-रात जमीन की तोड़-फोड़ मे लगी रहती हैं। सबसे पहले हम यह देखें कि आरम्भ मे पृथ्वी का धरातल कैसा था।

शुरू मे पृथ्वी सूर्य के समान बहुत गर्म थी। ज्यो-ज्यो समय बीतता गया, वह ठडी होती गई और उसका ऊपर का छिलका कड़ा होकर चट्टान बन गया। उस समय सब तरफ चट्टाने ही चट्टानें थी। मगर जीवन के लिए मिट्टी की जरूरत थी। इसलिए अभी उन चट्टानो को पीसकर मिट्टी बनना बाकी था। परन्तु उन्हे

गुब्बारे में मनुष्य की सबसे ऊँची उडान
72395 फुट
हवाईजहाज की सबसे ऊँची उडान
56046 फुट
एवरेस्ट की चोटी
29002 फुट
आदमी 420 फुट तक डुबकी लगा सकता है।
पनडुब्बी नाव 600 फुट तक डुबकी लगा सकती है।
सबसे गहरी खान 9000 फुट
सबसे गहरा तेल का कुआँ 16000 फुट
हवा की दूसरी परत
गुब्बारे की उड़ान
हवाई जहाज की उडान
सबसे ऊँचे बादल
हवा की पहली परत
तरह तरह के बादल
समुद्र की सतह
आदमी की डुबकी
पनडुब्बी नाव
पृथ्वी की औसत ऊंचाई ६२५ फुट
सबसे गहरी खान
समुद्रों की औसत गहराई २½ मील
सबसे गहरा तेल का कुआँ
समुद्र की अधिक से अधिक गहराई लगभग पौने सात मील

पीसता कौन ?

आपने यह कहावत सुनी होगी कि 'प्रकृति की चक्की बहुत धीरे-धीरे पीसती है, लेकिन बहुत बारीक पीसती है'। प्रकृति की चक्की ने पीसना आरम्भ किया। वर्षा और हवाए, बर्फ और ओले यानी प्रकृति के बहुत-से कर्मचारी पहाडो और चट्टानो को तोडते-फोडते, घिसते-पीसते रहे और मिट्टी बनती रही।
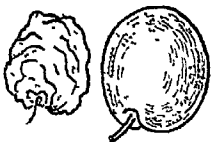
पृथ्वी ठडी हुई तो उसमे सूखे सेब की तरह झुरिया पड गई है। इस प्रकार पृथ्वी पर पहाड बन गए।

पृथ्वी का छिलका कडा हुआ, तो ठडा होकर सिकुडने भी लगा। उसमे जगह-जगह झुरिया और सिलवटें पडने लगी। वे सिलवटे ही बडे-बडे पहाड़ बन गई। कही-कही जमीन फट गई और उसकी बडी-बडी दरारो मे से भाप और लावे की धाराए बह निकली। पृथ्वी के भीतर का गर्म पदार्थ पृथ्वी का खोल या परते तोड-तोड कर निकलता रहा। हर जगह ज्वालामुखी पहाडो ने राख और गैस उछालनी शुरू की। आकाश धूल और राख के बादलो से भर गया।

पृथ्वी से निकली हुई गैस पृथ्वी के चारो ओर लिहाफ की तरह लिपटती चली गई और इस प्रकार वायुमण्डल बन गया। भाप के बादलो ने पानी बरसाना शुरू किया, तो जल-थल एक हो गए। फिर वह सब पानी नदी-नालो से होकर बडे-बडे गड्ढो मे जमा हुआ, तो दुनिया के समुद्र बने और स्थल के बड़े-बडे भाग महाद्वीप बन गए। पहाड़ो की चोटियो पर बर्फ जम गई और वहा से नदिया समुद्र की ओर बह निकली।

करोडो वर्षो तक यह तोड-फोड़ जारी रहा। ज्वालामुखी पहाडिया चीखती चिल्लाती लावा उगलती रही। पृथ्वी का धरातल तडप-तड़प कर करवटे बदलता रहा। पहाड बनते रहे

कहा जाता है कि जब पृथ्वी बन रही थी तो उसका धरातल बहुत गर्म और उजाड था। ज्वालामुखी पर्वत बहुत थे। गर्मी के कारण सारा पानी भाप बन गया था और राख के बादल आकाश पर छाए हुए थे। उस समय पृथ्वी पर कोई जीव न था।

और चट्टानें पिस-पिस कर मिट्टी बनती रही। इस उथल-पुथल में कई बार ऐसा हुआ कि समुद्रों में से ऊचे-ऊचे पहाड उठ पडे और सूखी धरती बडे-बडे समुद्रो के पेट मे समा गई।

बहुत समय के बाद जब पृथ्वी का खोल काफी कडा हो गया, तो ज्वालामुखियों का आग उगलना भी कम हो गया और उसी के साथ-साथ धरातल पर अचानक उलट-फेर और परिवर्तन भी कम हो गए। फिर भी परिवर्तन होते रहे। आग, पानी, हवा, पाला और जीव पृथ्वी के धरातल को तोडते-फोडते रहे।

प्रकृति के ये कर्मचारी आज भी अपने-अपने काम में लगे हुए है। नदिया अपने साथ मिट्टी बहा-बहा कर ले जाती है और समुद्र में डालती रहती है। समुद्र अपने किनारो को काटता रहता है। हवाए करोडो मन मिट्टी इधर-उधर करती रहती है। धरती का कोई न कोई भाग बहुत धीरे-धीरे उभरता रहता है। कौन जाने, कोई ज्वालामुखी किस समय और कहा फट पडे और सब कुछ उलट-पलट डाले ?

वायुमण्डल

जिस प्रकार पृथ्वी के भीतर बहुत-सी परते या खोल है, उसी प्रकार उसके ऊपर हवा का एक गिलाफ भी चढा है। जिस प्रकार मछलिया समुद्र की तह मे रहती है, उसी प्रकार हम भी हवा के बहुत बड़े समुद्र की तह मे रहते है। यह हवा बहुत-सी गैसो से मिलकर बनी है। अगर हवा न होती, तो धरती पर कोई प्राणी न होता, हवा पृथ्वी के चारो ओर कई सौ मील मोटे कम्बल की तरह लिपटी हुई है और मिट्टी पानी की तरह पृथ्वी के साथ-साथ घूमती है।

हवा बहुत हल्की चीज है। समुद्र के धरातल पर एक घन फुट, यानी एक फुट लम्बी, एक फुट चौड़ी और एक फुट ऊची, हवा का भार एक औंस या करीब आधी छटाक है। हम जितना ऊपर जाते है, हवा का भार भी उतना कम होता है। हवा कितनी भी हल्की क्यो न हो, उसकी मात्रा इतनी ज्यादा है कि पृथ्वी पर उसका भारी दबाव पड़ता ही रहता है।

समुद्र के धरातल पर हवा का दबाव 14.7 पौंड (1 पौंड = 453 ग्राम) प्रति वर्ग इंच होता है। हवा का दबाव हम पर भी पड़ता है, लेकिन हम इससे कुचल नहीं जाते, क्योंकि वह दबाव हर दिशा मे बटा होता है। जितना दबाव हमारे शरीर के बाहर होता है, उतना ही हमारे शरीर मे भी होता है। हा, अगर हम बहुत ऊचाई पर चले जाए, वहा हवा का दबाव काफी कम हो जाता है, तो शरीर मे खून के अधिक दबाव के कारण कान और नाक से खून बहने लगेगा।
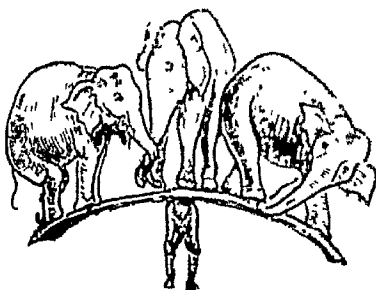
किसी आदमी के लिए पीठ पर तीन हाथियों का भार लेकर चलना असभव है, परन्तु प्रत्येक आदमी अपनी पीठ पर तीन हाथियो के भार के बराबर हवा का दबाव लिए फिरता है और उसे यह भार मालूम भी नहीं होता।

पृथ्वी की तरह वायु मण्डल को भी हम कई परतो मे बाट सकते है। सबसे निचली परत जो पृथ्वी से मिली हुई है, 'घूमनेवाली परत' कहलाती है। इस परत मे हवा हमेशा चलती रहती है। हम इसी परत या खोल मे रहते और सास लेते है। जलवायु और मौसमो का सम्बन्ध भी इसी मे है। यह परत आठ-दस मील मोटी है। इसमे मिट्टी, धूल, भाप और बादल मिलते है।

इस घूमनेवाली खोल के ऊपर एक और खोल है जिसकी मोटाई 50 मील है। उस खोल के बीच मे 'ओजोन गैस' की एक मोटी परत है। वह सूर्य से आने वाली अति-बैगनी किरणो को अपने मे सोख लेती है। वे किरणें बहुत तेज होती हैं। यदि वह गैस इन किरणो को न सोख ले, तो पृथ्वी के सारे प्राणी मर जाए।

उस दूसरे खोल के ऊपर हवा का तीसरा और आखिरी खोल है। उसकी मोटाई 500 मील है। यही वह खोल है जिसमे रेडियो तरगे यात्रा करके दुनिया के हर भाग मे पहुच जाती है।

सभ्यता के उदय तक

बडे-बूढे सदा से यह कहते आए हैं कि उनके बचपन मे दुनिया की हालत कुछ और थी, अब कुछ और है। यह बात ठीक है। जीवन बदलता रहता है और बदलता रहेगा। जब से आदमी दुनिया मे आया, तब से जीवन इतना बदल गया है कि उसका हम अनुमान भी नही कर सकते। कभी आदमी वनमानुसो की कुछ जातियो से बहुत भिन्न न था। वह जानवरो की भाति अपना जीवन बिताता था। आज उसकी चौमुखी प्रगति देखकर सिर चकरा जाता है। कहा वह भयानक जगली जीवन और कहा आज-कल के शहरो की चहल-पहल, बिजली का प्रकाश, मोटर, रेल, हवाई-जहाज और वे सब सुविधाए जो आदमी का जीवन आनन्दमय बनाती है। इस उन्नति का कारण यह है कि आदमी सोच सकता है और सोचता रहता है। उसकी कहानी इसी सोचने, समझने और समझकर काम करने की कहानी है।

विद्वानो का मत है कि बच्चा आरम्भ में मस्तिष्क से नही, अपने हाथों से सोचता और समझता है। इसीलिए वह जिस चीज को देखता है, उसकी ओर हाथ

वढाता है और उसे छूना चाहता है, चाहे वह किसी आदमी का मुह हो, या कोई फूल हो, या आग का अगारा हो। आदमी की कहानी इससे आरम्भ होती है कि उसके हाथ थे। आदमी न होता यदि उसके हाथ न होते।

पहले मनुष्य की आखें पेडो के फलो को देखती होगी। उन्हे वह हाथो से तोडकर खाता होगा। आखे पौधो को भी देखती होगी। हाथ उन्हे उखाडकर उनकी कोमल जडों को जमीन से निकाल लेते होगे। पशुओ की भांति आदमी के जीवन का सारा समय भोजन की खोज मे वीतता होगा। परन्तु उसके हाथो ने वताया होगा कि कुछ काम ऐसे है, जिन्हे वह नही कर सकता। उधर वे काम इतने जरूरी थे कि उनके विना उसका जीना कठिन था।

काटने, खुरचने, छीलने और खोदने का काम आदमी के हाथ नही कर सकते थे। इससे दो वडी हानिया थी। एक तो यह कि आदमी पशुओ से और दूसरे आदमियो से अपना वचाव नही कर सकता था। दूसरे वह फलो, जडो और कुछ छोटे पशुओ के सिवा और कुछ नही खा सकता था।

आदमी ने अपने ही हाथो से यह वात जानी कि एक चीज दूसरी से अधिक मजवूत होती है। मोटी लकडी पतली से और पक्की लकडी कच्ची से अधिक मजवूत होती है। पत्थर सूखी लकडी से अधिक मजवूत होता है और कुछ पत्थर ऐसे भी होते है जिन्हे दूसरे पत्थरो से तोडा जा सकता है। इस प्रकार आदमी ने पहले ऐसे औजार वनाए जिनसे वह काटने, खुरचने और खोदने का

काम ले सकता था। इस तरह औजार आदमी के हाथो के सहायक बन गए।
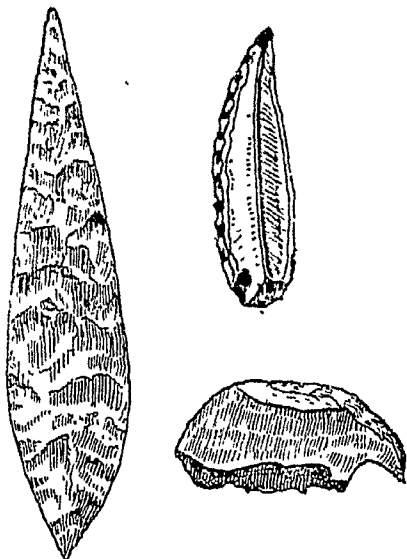
सर्द रातों मे आदमी को गर्मी की आवश्यकता महसूस होती होगी। दिन बीतने पर जगलों के रास्ते शिकार से लौटते समय कभी-कभी वह देखता होगा कि पेड़ो मे अकस्मात् आग लग जाती थी। वह अपने दैनिक कामों में बडे पत्थर से छोटे

पत्थर को तोडते हुए उनकी रगड से आग की चिनगारिया छिटकती भी देखता होगा। इन दोनों चीजों को देखकर उसने जाना और सीखा कि पत्थरो को रगड़कर आग और गर्मी पैदा की जा सकती है। आग आसानी से पैदा न होती थी। इस-लिए उसे एक बार जलाने के बाद बुझने न दिया जाता था। जहा आग जलती थी, वहा जंगली जानवर न आते थे। वहा मास भूना जा सकता था और जाडो मे गर्मी पैदा की जा सकती थी। इस तरह

आग की जानकारी ने आदमी के रहन-सहन को बहुत कुछ बदल दिया।

तेज बरसात, बर्फीली और गर्म हवाओ से बचने के लिए आदमी ने ऐसी गुफाए ढूढी, जिनमे वह बराबर रह सके और जिनके दरवाजो पर आग जलाकर खतरनाक जगली जानवरो से अपनी रक्षा कर सके। इस तरह आदमी पेडो तथा उनके तनो के खोखलो की बजाय गुफाओ मे रहने लगा।

यह युग, जब आदमी पत्थर के औजार बनाने लगा और गुफाओ मे रहने लगा, 'पत्थर का पुराना युग' कहलाता है।

इस पडाव से गुजरने मे आदमी को हजारो वर्ष लग गए। इन हजारो वर्षो मे एक बार ऐसा हुआ कि ससार मे सर्दी अचानक बढ गई। बीच के भाग के सिवा सारी धरती बर्फ से ढक गई। फिर सर्दी कम हुई, बर्फ पिघली और बडे-बडे जगल उग आए। ससार मे चार बार बर्फ का दौर आया और गया। इसके बाद आदमी की दशा बिल्कुल बदली हुई थी।

झुड मे रहने का स्वभाव तो आदमियो मे बहुत पुराना है। जब उन्होने पौधे उगाने शुरू किए, तो कई परिवार एक साथ रहने लगे। इस प्रकार सामाजिक जीवन की नीव पडी। उन्होने समझा कि साथ रहने से लाभ तभी होगा जब काम का बटवारा कर लिया जाए। इससे कारीगरी और कारीगरियो को काम मे लाने वाले पैदा हुए।

उन्होने समझा कि जब आदमी साथ रहें और उनमे काम का बंटवारा हो, तो कोई ऐसा भी होना चाहिए जो सबसे वे नियम मनवाए, जिन्हे सब उपयोगी मानते हो। इसलिए उन्होने अपने झुण्ड या समूह के सबसे बड़े बुजुर्ग या सबसे अधिक ताकतवर आदमी को अपना नेता या सरदार माना; जो समय पड़ने पर उन्हें राय देता था, उनका झगड़ा निपटाता था। सरदार की बात सभी मानते थे। वह जैसा चाहता था गिरोह के लोग वैसा ही करते थे। सरदार का काम केवल यही तक सीमित न था बल्कि दवा-दारू और जादू-मन्तर के काम भी वही करता था। आगे चलकर जब आदमी खेती करना सीख गया तब उसे अपने खेतो और घरेलू जानवरो की हिफाजत के लिए कानून-कायदो तथा इन्साफ की जरूरत पड़ी और झुण्ड या कबीले के सरदार की ताकते बढती गई। इस प्रकार राज्य और राजनीति का आरम्भ हुआ।

आदमी ने देखा कि कुछ बाते बराबर होती रहती है। सूरज निकलता है, डूबता है और फिर निकलता है। एक विशेष समय पेडों में नई कोपले निकलती है, फूल-फल आते है, पत्तियां झड़ जाती है, गर्मी होती है, सर्दी होती है, फिर गर्मी होती है। इस प्रकार उसने अपने स्वभाव और रहन-सहन को धीरे-धीरे इस जगत की बदलती हुई चीजो के अनुसार बदलना सीखा। उसने यह भी देखा कि आदमी पैदा होते है और फिर मरते है। इस बात ने उसके मन मे वे विचार पैदा किए होगे जिन्होने धीरे-धीरे धर्म का रूप लिया।

अनुभव से आदमी ने यह भी समझा कि जगली फलो और जगली जानवरो के मास पर जीवन बसर करना असम्भव है। उसने यह देखा था कि पेडो और कुछ पौधो के फलो मे बीज होते है। जब वे जमीन पर गिरते है, तो उनसे नए पौधे होते है। अत उसने बीजो को इकट्ठा करके बोना आरम्भ कर दिया।

भोजन के लिए अक्सर खाने भर से अधिक जानवर इकट्ठे हो जाते होंगे। मरे पशुओ का मांस जल्दी सड जाता होगा। इसलिए उन्हे अगले ही दिन खा लिया जाता होगा। घायल पशुओ को बचाकर उस दिन के लिए रखा जाता होगा जिस दिन कोई शिकार न मिले। ऐसे जानवरो मे से कुछ ऐसे होते होगे जिनका रखना कठिन होता होगा और कुछ ऐसे जो आसानी से रखे जा सकते होगे। इस प्रकार मनुष्य ने अनुभव

से यह जाना होगा कि किन पशुओ को रखना चाहिए और किन्हे नही। रखे जाने वाले जानवरो मे से बहुतेरे कई-कई दिनो या हफ्तो तक रह जाते होगे। उस बीच आदमी ने मादा पशुओ के बच्चो को अपनी मा का दूध पीते भी देखा होगा। उस दूध को मनुष्य ने भी चखा होगा। इस तरह उसने मीठे और अधिक दूध देने वाले पशुओ को
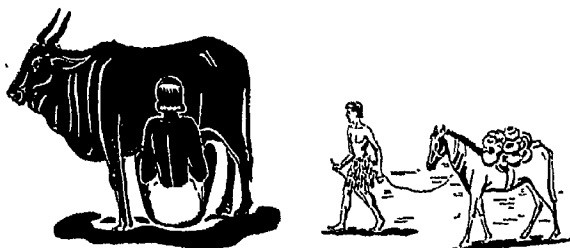
पहचाना और उन्हे अधिक चाव से रखना शुरू किया। धीरे-धीरे मनुष्य ने नर-पशुओं की उपयोगिता भी पहचानी और उन्हे बोझ आदि ढोने के काम मे इस्तेमाल किया।

खेती के लिए आदमी ने पानी की जरूरत भी महसूस की। उसकी वह जरूरत उसे नदियों के किनारे ले आई। नदियों के किनारे के मैदानो मे फसल को अच्छी होते देखकर आदमी ने वहीं रहना ठीक समझा। धीरे-धीरे आदमियो के ज्यादातर गिरोह नदियों के किनारे ही बसने लगे।

इस तरह आदमी ने अपना सामाजिक जीवन शुरू किया। अपना वचाव करना, खेती करना, औजार, बर्तन और दूसरी जरूरत की चीजें बनाना समाज के अलग-अलग लोगो मे बांट दिया गया। इसी युग को 'पत्थर का नया युग' कहते है। अनुमान है कि वह युग अब से दस-बारह हजार साल पहले आरम्भ हुआ होगा।

उस युग के पदार्थ ससार के अलग-अलग भागों में मिले है। उनसे पता चलता है कि आदमी ने उस समय तक कितनी उन्नति कर ली थी। पत्थर के औजार अब सुघड और पहले की अपेक्षा बहुत अधिक काम के होने लगे थे। मिट्टी के बर्तन बनने लगे थे और आदमी बस्तियो मे रहते थे। इन बस्तियों की रक्षा का प्रबन्ध था और यह बस्तिया काम के बटवारे के कारण अपनी आवश्यकताएं स्वय पूरे कर लेती थी।

काम का बंटवारा हो जाने के कारण लोग अपने-अपने काम में अधिक कुशल हो सकते थे। औजार बनाने वालो ने पत्थर से अच्छी चीज की खोज में धातुओ का पता लगा लिया था। वे तावे और कासे की चीजे बनाने लगे थे। पत्थर और धातुओ का काम करने वालो में से कुछ ने सुन्दर पत्थरो के और कुछ ने सोने-चादी के गहने बनाने शुरू कर दिए थे। मिट्टी के बर्तन बनाने वाले चाक से काम लेते थे। इस प्रकार बहुत सुडौल बर्तन बनने लगे थे।

आदमियो मे अच्छी चीजो का शौक पैदा हो गया था। इसका फल यह हुआ कि एक जगह बनी हुई चीजे दूसरी जगह पहुचाई जाने लगी।

व्यापार का माल पहले बोझा ढोने वाले पशुओं पर लादकर एक जगह से दूसरी जगह पहुचाया जाता था। फिर पहिया बना और दो पहियो की गाड़िया सामान ले जाने के लिए काम में लाई जाने लगी। गाड़ी की सवारी का चलन भी इसी समय आरम्भ हुआ।

इसी समय भाषाए भी बोली जाने लगी। पहले आमदनी और खर्च का हिसाब रखने, फिर अपने विचार प्रकट करने के लिए लिखने के ढंग निकाले गए।

आदमी ने यह भी देखा कि कुछ बातें ऐसी होती रहती है, जिन पर उसका बस नही चलता और वे बाते ऐसी है जिन पर उसका सुख-दुख और भलाई-बुराई निर्भर है। सूरज निकलता है, डूबता है, और फिर निकलता है। सूरज की गर्मी और उसका प्रकाश मनुष्य को सुख भी पहुचाता होगा। सूरज के डूब जाने पर अन्धकार मे उसे कष्ट होता होगा। इसी प्रकार उसने देखा कि एक विशेष समय वर्षा होती है, जाड़ा आता है, पेडो मे नई कोपलें फूटती है, फूल-फल आते है। खेतो मे फसल लहलहा उठती है। ऐसा होते वह बार-बार देखता रहा। इस प्रकार सूर्य, वर्षा, हवा और आग जैसी चीजो के लिए उसके मन मे आदर और भय दोनो पैदा हुए। कुशल-मगल और उन्नति की इच्छा से इन महान् शक्तियो की वह पूजा करने लगा। इस तरह मन्दिरो और पूजा-पाठ का चलन हुआ।

सुमेर
चीन
सभ्यता का उदय
मिस्र
सिन्ध
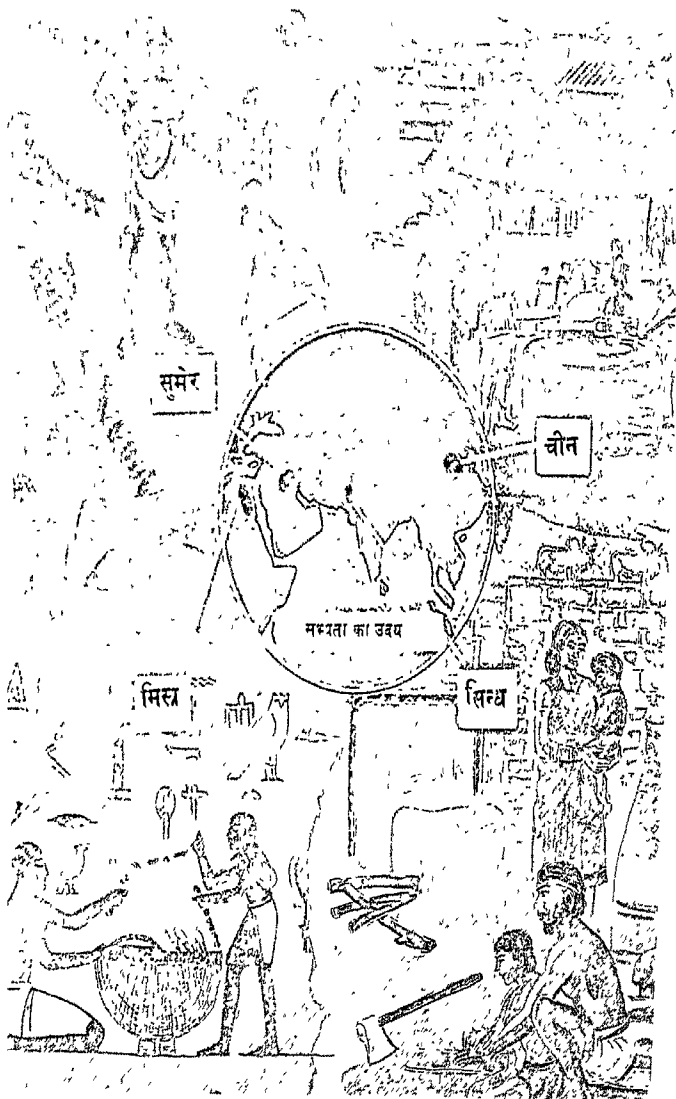
इस प्रकार उस चीज का आरम्भ हुआ, जिसे आजकल हम सभ्यता कहते हैं।

इस युग के बाद उन्नति की गति बहुत तेज हो गई। इसका बड़ा कारण यह था कि लिखने के ढंग निकल चुके थे। ज्ञान को सुरक्षित करने और एक-दूसरे तक पहुँचाने की सुविधा हो गई थी। पत्थर के पुराने युग मे भी आदमी बोलते रहे होंगे, परन्तु जितनी समझ थी उतना ही वह समझते और बतलाते थे। धीरे-धीरे एक ओर जानकारी बढ़ी, दूसरी ओर जबान और ओंठो से ध्वनि को ठीक निकालने की योग्यता आई।

पत्थर के पुराने युग मे जिन गुफाओं मे आदमी रहते थे, उनमे पशुओ के चित्र बने हुए मिले हैं। हम नही जानते कि वे चित्र समृद्धि के विचार से बनाए गए थे या शिकार मे सफलता की आशा से या केवल शौक के लिए। परन्तु कुछ चित्रो

को देखकर विश्वास होता है कि उनका उद्देश्य केवल आकार बनाना नही, वल्कि कुछ कहना भी था। इसी कारण से समझा जाता है कि लिखने का जो ढग सबसे पहले चला, उसमे जिस चीज का जिक्र होता था, उसका चित्र बनाया जाता था।

मिस्र मे इसका बहुत अधिक चलन था और इसके बहुत-से नमूने अब तक पाए जाते है। मिस्र ही मे पूरा चित्र बनाने के बदले उसका चिह्न बनाया जाने लगा। इस प्रकार लिखने मे कुछ सरलता हो गई। उस के बाद यह हुआ कि चिह्न किसी चीज का चिह्न माने जाने के बदले किसी ध्वनि का चिह्न माना जाने लागा। फोनेशिया की भाषा में घर को 'बेत' कहते थे। लिखने के लिए पहले घर का चित्र बनाया जाता था। फिर इस चित्र के बदले एक चिह्न बनाया जाने लगा और उसको 'बेत' कहने लगे। उससे 'बे' की ध्वनि निकली और 'बे' एक अक्षर बन गया।
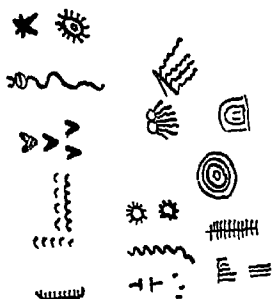
यह उन्नति इस कारण हुई कि आदमियो के अलग-अलग समाजो मे आपसी सम्बन्ध थे। यदि फोनेशियावालो का ऐसे लोगो से सम्बन्ध न होता, जिनकी भाषा मे घर को बेत नही कहा जाता, तो बेत के चिह्न से 'बे' का अक्षर नही बनता।

चीन के रहने वालो का सम्बन्ध दूसरे देश वालो से उतना नही था, इसी कारण उनकी लिखाई का ढग अब तक अधिक उन्नति न कर सका। उनकी भाषा की अब तक कोई वर्णमाला नही है। वे पूरे शब्द ही लिखते है। कागज बनाना और छापना सबसे पहले चीन मे शुरू हुआ और यह भी एक वजह हुई कि वे अपनी लिपि नही बदल सके।

मिस्र में लिखने के लिए बास की कलम और कागज की जगह एक पौधे की छाल काम में लाई जाती थी। बाबुल में कागज के स्थान पर मिट्टी की तख्तिया और कलम के स्थान पर एक नोकदार औजार काम में लाया जाता था। चीनियों ने कागज बनाकर और छपाई का ढंग निकाल कर दुनिया का बहुत बडा उपकार किया।

ससार मे सभ्यता के पहले केन्द्र नील, फरात, सिन्ध और याग्त्सी नदियो के किनारे थे। वहा खेती के लिए भमि थी, सिंचाई के लिए पानी था, और जलवायु ऐसी थी कि आदमी गर्मी और सर्दी दोनो के कष्टो से बचा रहे। वहा सभ्यता ने बहुत उन्नति की। संसार के दूसरे भागो से कम सभ्य या जगली कबीले, सभ्यता के उन केन्द्रों की ओर उसी प्रकार खिच-खिच कर आते रहे जैसे दीये के प्रकाश की ओर पतगे। इससे एक सघर्ष छिड़ा, जिसने सभ्यताओं को मिटाया और मिटा कर बनाया, हानि पहुचाई और उस हानि से लाभ के रास्ते निकाले।

धरती की रूपरेखा

यह धरती जिस पर हम रहते है, हमारा घर है। वैसे तो सबको अपना घर अच्छा लगता है, परन्तु हमारा यह घर सचमुच ही बहुत अनोखा और मन-भावन है। यह इतना बडा है कि हम उसे पूरा देखने का भी अवसर नही पाते। फिर भी बहुत-से ऐसे लोग हैं और हुए हैं जिन्होने घूम-घूम कर उसका कोना-कोना देखा है। उनकी बताई बातो को सुन या पढकर अब सभी जान सकते है कि हमारी धरती कैसी है और उस पर कहा क्या है।

पृथ्वी पर कही स्थल के बडे-बडे भाग है और कही जल के। स्थल के बड़े भागो को महाद्वीप और पानी के बड़े भागो को महासागर कहते है। एशिया, अफ्रीका, यूरोप, उत्तरी अमरीका, दक्षिणी अमरीका और आस्ट्रेलिया स्थल के बडे-बडे भाग

यानी महाद्वीप है। इनके अलावा बर्फ से ढका हुआ एक उजाड़ महाद्वीप भी है। वह पृथ्वी के दक्षिणी भाग यानी दक्षिणी ध्रुव-प्रदेश मे है। प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर, भूमध्य सागर, हिन्द महासागर और आर्कटिक महासागर पृथ्वी पर पानी के बड़े भाग है।

हमारी दुनिया में कुल कितनी जमीन है और कितना पानी

पहाड़ों और समुद्रों के बीच में मैदान हैं और अधिकतर मनुष्य इन्हीं मैदानों में बसते हैं।

हिसाब लगाने से मालूम हुआ है कि पृथ्वी का दो-तिहाई भाग पानी से ढका है। केवल एक-तिहाई भाग स्थल है। इसी एक-तिहाई भाग मे आदमी रहते हैं और करोड़ों प्रकार के पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े और पेड़-पौधे पाए जाते हैं। परन्तु हम देखते है कि स्थल के भी सब भाग ऐसे नही, जिनमें प्राणी रह सकें।

हमारी यह धरती बड़ी ही रंग-बिरंगी है। कहीं सूखे और सफेद पहाड़ हैं, तो कहीं हरियाली ही हरियाली है। कहीं सूखे रेगिस्तान हैं, जहाँ रेत के सिवा और कुछ दिखाई नहीं देता, तो कहीं गर्मी और पानी अधिक होने के कारण घने-घने जंगल हैं;

ऊचे-ऊचे पहाडो की चोटिया तो बर्फ से ढकी हैं ही, कई जगह धरातल पर भी बर्फ ही बर्फ है—सफेद और जगमगाती हुई बर्फ। कही पहाडो से फूटकर सोते बह रहे हैं, तो कही पछाड खाती नदियां पहाड़ी ढालो से उतरकर मैदानो मे रेंगती हुई समुद्र की ओर जा रही हैं।
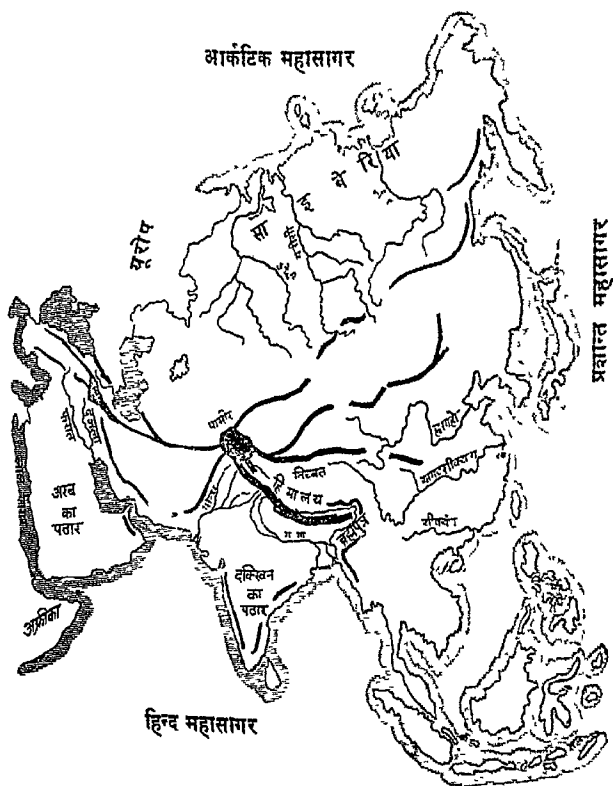
धरती पर ऊंचे-ऊंचे पहाडों के कई सिलसिले है। एशिया के पश्चिम से दो पर्वत-मालाएं आरम्भ होती है और बहुत दूर तक एक-दूसरे के बराबर-बराबर चलकर पामीर के पठार में एक-दूसरे से मिल जाती है। पामीर के पूर्व में एक पर्वतमाला ऊंची दीवार की भांति चली गई है। बर्मा और वियतनाम पहुंचकर यह पर्वतमाला अचानक दक्षिण की ओर मुड़ जाती है।

हिमालय दुनिया का सबसे ऊंचा पहाड़ है। वह इतना ऊंचा है कि आकाश को छूता हुआ जान पड़ता है। उसकी चोटिया हमेशा बर्फ से ढकी रहती है। हिमालय का अर्थ है—'बर्फ का घर'। उसकी सबसे ऊंची चोटी एवरेस्ट है, जो 29,002 फुट या लगभग साढ़े नौ किलोमीटर ऊंची है। उस पर कुछ वर्ष पहले तक किसी आदमी ने पैर नही रखे थे। परन्तु बराबर कोशिश करने के बाद मई 1953 ई० मे एवरेस्ट की चोटी पर आदमी ने विजय पाई। तेनजिग और हिलेरी नाम के दो वीरों ने एवरेस्ट की चोटी पर सफलता का झण्डा फहराया। तेनजिग भारतीय है और हिलेरी न्यूजीलैंड के। इसके बाद भारतीय पर्वतारोहियों ने भी दो बार, एवरेस्ट पर विजय प्राप्त की। हाल मे एक जापानी पर्वतारोही दल भी एवरेस्ट पर चढ़ने में सफलता प्राप्त की है।

हिमालय के दक्षिणी ढालो पर वर्षा अधिक होती है, इसलिए उन ढालों पर बड़े-बड़े और घने जंगल है।

बड़े-बड़े पहाड़ों के बीच ऊंचे-ऊंचे पठार हैं। पठार सपाट होते है। वे न ता पहाडों की भांति ढालू होते है, और न उनकी भांति ऊंचे। फिर भी उनमें कही-कही पहाड़ियां उभरी हुई दिखाई पड़ती है। उन्हे जगह-जगह काट कर नदियों ने अपने लिए रास्ते बना लिए है, जिन्हें घाटियां कहते है।

तिब्बत का पठार चारो तरफ ऊचे पहाडो से घिरा है।

दुनिया का सबसे ऊंचा पठार पामीर है, जो अपनी ऊचाई के कारण 'दुनिया की छत' कहलाता है। मध्य एशिया में और भी कई ऊचे-ऊचे पठार हैं। पामीर के पूर्व मे तिब्बत का लम्बा-चौड़ा पठार है। दक्षिणी एशिया मे अरब और दक्षिणी भारत के पठार आसपास की जमीन से अलग उभरे हुए दिखाई देते है। पहाडो के चारो ओर लम्बी लम्बी नदियां बहती है। उनके किनारे बडे-बडे शहर बसे हुए है और खूब चहल-पहल है।

नदिया अपने साथ बहुत अधिक मिट्टी लाकर मैदानो में बिछाती रहती है। आदमी की उगलियो की हल्की-सी गुदगुदी से यह मुलायम मिटटी खिलखिला उठती है और थोडे परिश्रम से अच्छी-अच्छी फसलें तैयार हो जाती हैं।

एशिया मे हिमालय से दूर उत्तर मे एक बडा मैदान है। उसका ढाल दक्षिण से उत्तर को है। उसे साइबेरिया का मैदान कहते है। उसका बिल्कुल उत्तरी भाग बहुत ठण्डा है। जमीन बर्फ से ढकी रहती है। वहा कोई चीज उग नही सकती। इसलिए जो लोग वहा रहते हैं, वे बर्फ में रहने वाले जानवरो और मछलियो का गोश्त खाते और उनकी खालो के कपडे बनाकर पहनते है। साइबेरिया के मैदान मे ओबी, यनीसी और लीना नाम की बड़ी नदिया हैं। वे इस इलाके मे उत्तर की ओर को बहती हुई आर्कटिक महासागर मे गिरती हैं। साल के अधिकतर भाग मे उनके मुहानो पर बर्फ जमी रहती है, जिससे उनका बहाव रुक जाता है और पानी आस-पास के इलाको मे फैल जाता है। इससे बड़ी-बड़ी दलदले बन जाती हैं।

दक्षिणी एशिया में नदियों के बनाए दो बड़े मैदान हैं। एक गंगा, सिंधु और ब्रह्मपुत्र का मैदान और दूसरा दजला और फरात का। ये दोनों दुनिया के बहुत ही उपजाऊ प्रदेशों में से हैं। इनमें मनुष्य की जरूरत की सब चीजें बहुतायत से होती हैं। इसलिए यहां आबादी भी बहुत घनी है।

हिमालय से पूर्व की ओर बहने वाली नदियों ने चीन में बड़े-बड़े उपजाऊ मैदान बनाए हैं। एक ह्वांगहो या पीली नदी का मैदान है। इस मैदान में करोड़ों चीनी बसते और खेती-बारी करते हैं। दूसरा याग्त्सीक्याग या नीली नदी का मैदान है। यह नदी तिब्बत से निकलकर एक संकरे पहाड़ी रास्ते से होकर ऐसे मैदान में जा पहुंचती है जहा झीलों और तालाबों की भरमार है। इस इलाके में बारिश भी काफी होती है और गर्मी भी अच्छी पड़ती है। पानी और गर्मी की अधिकता के कारण यहां धान बहुत होता है। इसलिए चावल यहा के रहनेवालो का मुख्य भोजन है।

जिस प्रकार एशिया मे हिमालय बहुत बड़ा पहाड है, उसी प्रकार यूरोप में आल्प्स है। यूरोप के बीचो-बीच आल्प्स की शाखाएं चारो ओर फैली हुई है। उसकी कुछ चोटिया समुद्र की सतह से लगभग 14,000 फुट या 4 किलोमीटर ऊंची है और उन पर हमेशा बर्फ जमी रहती है।

यूरोप के पूर्व में यूराल नाम का पहाड़ है, जो यूरोप को एशिया से अलग करता है। यूराल के पश्चिम मे इसका बड़ा मैदान है। जाड़े मे वहा कड़ाके की सर्दी पड़ती है, लेकिन गर्मियो में इतनी ही गर्मी हो जाती है कि गेहू खूब पैदा हो सके। इस मैदान का दक्षिणी भाग गेहू की पैदावार के लिए दुनिया भर मे मशहूर है। यूरोप की सबसे बड़ी नदी वोल्गा इस मैदान से होकर उत्तर से दक्षिण को बहती है। जाड़े मे उस पर बर्फ जम जाती है। इसलिए उसमें जहाजो का चलना बन्द हो जाता है। हा, पश्चिमी यूरोप की नदिया राइन, सीन, लोएर, रोन और डैन्यूब विशेष उपयोगी है। इनमे बहुत व्यापार होता है। वैसे यूरोप की नदिया व्यापार के लिए बहुत उपयोगी नही हैं, फिर भी उनसे दूसरे बहुत-से लाभ हैं। जगह-जगह उनसे सिंचाई होती है और उन-के झरनो से बिजली भी तैयार की जाती है।

राकीज पहाड़ियों से घिरा हुआ कोलोरेडो का पठार है। इसी पठार से होकर कोलोरेडो नाम की एक अनोखी नदी बहती है। वह दो हजार मील तक बहुत ही संकरी और गहरी घाटी में होकर गुजरती है। उसकी मील भर गहरी घाटी की

मध्य सागर
अटलस
एशिया
काहिरा
सहारा का रेगिस्तान
घास का मैदान
अतलांतिक महा सागर
हिन्द महा सागर
कालाहारी
केपटाउन
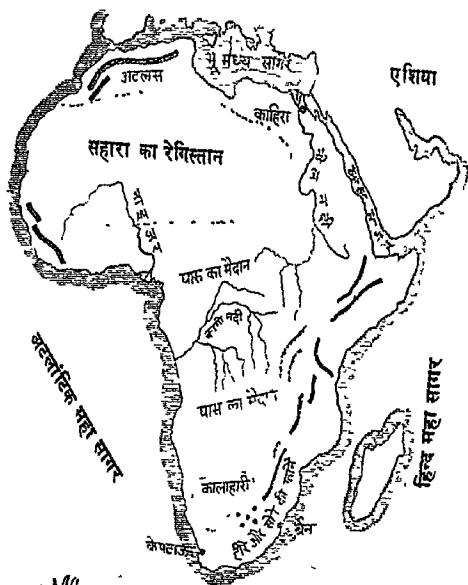
अच्छी गायें आस्ट्रेलिया की बडी सम्पत्ति हैं

होना और इतना आबाद होना इसी नदी पर निर्भर है। यदि नील नदी न होती, तो मिस्र भी रेगिस्तान होता।

अफ्रीका में नील के सिवा और भी कई बडी-बडी नदियां है। कांगो नदी घने, अंधेरे और भयानक जंगल में चक्कर काटती है। इस जंगल और उसके उत्तर और दक्षिण के मैदानों में बहुत-से ऐसे जानवर पाए जाते है जो दुनिया में और कही नही

जिराफ

जेबरा
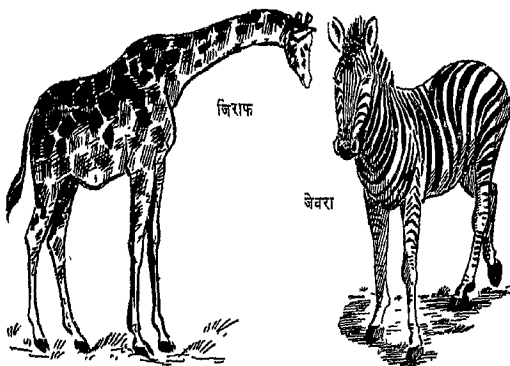
मिलते, जैसे दरियाई घोडा, गैंडा, जेबरा और जिराफ। नाइजर नदी सहारा रेगिस्तान की दक्षिणी सीमा पर पश्चिम से पूर्व की ओर धनुष के रूप में बहती हुई अटलांटिक महासागर से मिल जाती है। दक्षिणी अफ्रीका की प्रसिद्ध नदी जेम्बजी है। जब वह विक्टोरिया झरने पर एक सौ दस मीटर की ऊंचाई से गिरती है, तो छींटो के बड़े-बडे बादल उड़कर सैकड़ो फुट तक जा पहुंचते है।

दरियाई घोडा

क्षेत्रफल की दृष्टि से अफ्रीका दुनिया का दूसरा बडा महाद्वीप है। एशिया सबसे बड़ा है और आस्ट्रे-

लिया सबसे छोटा। आस्ट्रेलिया की धरती कही भी बहुत ऊची नही है। ऊची से ऊची चोटी केवल 2100 मीटर है। पूर्वी किनारे पर 3200 किलोमीटर तक फैली पर्वतमाला 'ग्रेट डिवाइडिंग रेंज' कहलाती है। पूर्वी
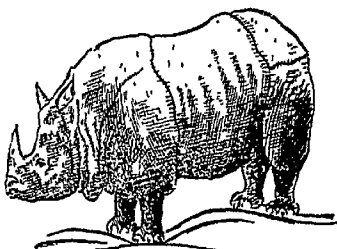
गैंडा

किनारे के सिवा यह पूरा का पूरा महाद्वीप बहुत ही सूखा है। नदियो मे वैसे भी बहुत पानी नही होता। गर्मी मे तो रहा-सहा भी सूख जाता है। इन नदियों में केवल मरे और डार्लिंग ही ऐसी हैं जिनका नाम लिया जा सकता है। अधिकतर आबादी
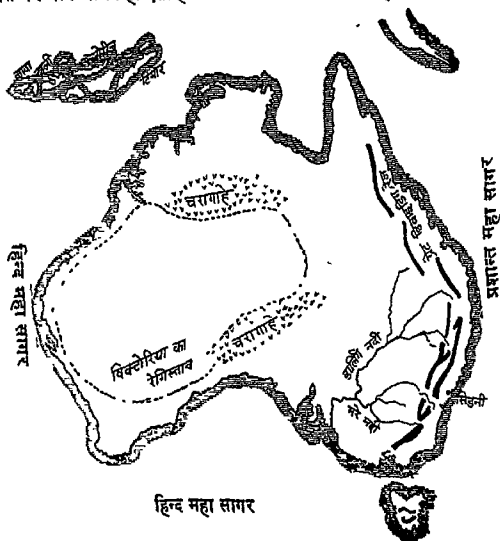
आस्ट्रेलिया की दूसरी बड़ी सम्पत्ति उसकी भेड़ें हैं।
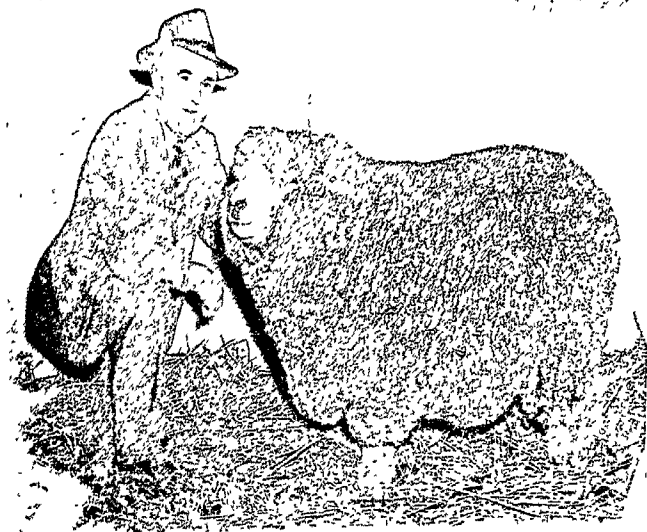
क्षेत्रफल में आस्ट्रेलिया से दुगुना एक महाद्वीप अंटार्कटिका है। यह दक्षिणी ध्रुव में फैला हुआ है। अंटार्कटिका बारहों मास बर्फ से ढका रहता है और बिल्कुल उजाड़ है। पेंगुइन चिड़ियों के सिवा यहां दूर-दूर तक किसी और जीव-जन्तु के दर्शन नहीं होते।

चीन

हमारा पडोसी चीन आवादी मे दुनिया का सवसे वडा देश है। सन 1953 की जनगणना के अनुसार चीन की जनसख्या 60 करोड़, 19 लाख 38 हजार थी। उसके पश्चात् चीन की जनसख्या के सम्वन्ध मे सरकारी आकडे उपलव्ध नहीं है। फिर भी अनुमानत. चीन की वर्तमान जनसंख्या 70 करोड से अधिक ही है। यह विशाल देश हिमालय के उस पार लगभग 37 लाख वर्ग मील (1 वर्ग मील=1 6 किलोमीटर) मे फैला हुआ है। पहाडो का एक सिलसिला देश को दो भागो मे वाटता है—उत्तरी चीन और दक्षिणी चीन। चीन की भूमि वहुत उपजाऊ है। उत्तरी चीन मे गेहू अधिक होता है। वर्षा वहुत होने के कारण दक्षिणी चीन मे सव देशो से अधिक चावल पैदा होता है। यहा शहतूत के पेड भी वहुत हैं। रेशम, चावल, चाय, सूत, समूर और अडे चीन से दूसरे देशो को भेजे जाते हैं।

अव तक की खोज से पता चलता है कि मिस्र, सुमेरिया, सिन्धु घाटी और चीन की सभ्यताएं दुनिया मे सबसे पुरानी हैं।
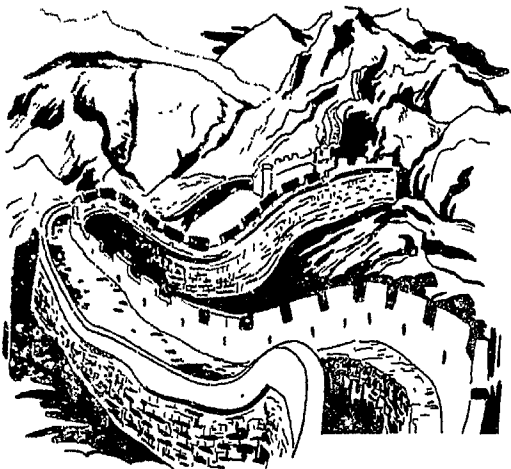
चीन की दीवार

कोई पाच हजार साल पहले नील, दजला, फरात और सिन्धु नदियो के किनारे सभ्यता का विकास हो रहा था। लगभग उसी समय दक्षिण-पश्चिम की ओर से कुछ लोग चीन पहुचे और ह्वांगहो नदी के किनारे-किनारे बस गए। उन्होंने याव नाम के एक आदमी को अपना राजा चुन लिया। याव जब बूढा हुआ, तो उसनें एक योग्य आदमी को अपना उत्तराधिकारी बनाया। याव के बाद उस आदमी नें और फिर उसके परिवार वालो ने कोई 400 साल तक चीन पर राज किया। उसके बाद चीन में शुग और चाओ वंशो का राज रहा। यह बात ईसा से कोई पाच सौ वर्ष पहले की है। इसी समय चीन में कन्फ्यूशियस और लाओत्जे नाम के दो बड़े दार्शनिक और सुधारक हुए। चाओ वश के बाद चीन का विशाल देश टुकड़े-टुकड़े हो गया। फिर सम्राट् चिन ने पूरे देश पर अधिकार कर लिया। देश का नाम. चीन उसी सम्राट् के नाम पर पडा। चीन की मशहूर दीवार भी उसी समय बनी। यह दीवार ससार की सात अनोखी चीजों मे से एक है।

जिस समय चीन मे चिन वंश का राज शुरू हुआ, उस समय भारत मे सम्राट अशोक का राज था। यह ईसा से कोई ढाई सौ साल पहले की बात है।

चिन वश के बाद कई और वशो ने चीन पर राज किया। उनमे तुग वश का समय चीन के इतिहास का सबसे शानदार काल समझा जाता है। तुग वश के सम्राटो ने लगभग 600 ई० से 900 ई० तक तीन सौ साल राज किया। इस काल मे न सिर्फ सभ्यता और सस्कृति उन्नति की चोटी पर पहुच चुकी थी, बल्कि जनता भी बडी सुखी थी। प्रसिद्ध यात्री हुएनसाग उसी काल मे भारत आया था। उस समय भारत मे सम्राट हर्षवर्द्धन राज करते थे।

तुग वश के बाद चीन के इतिहास मे दूसरा जगमगाता युग मिग वश का है। 'मिग' शब्द का अर्थ है—चमकदार। उस राज-घराने ने चौदहवी सदी से लेकर सत्रहवी सदी तक राज किया। उनके समय मे देश में शान्ति रही और विदेशो से भी अच्छे सम्बन्ध रहे। भारत मे सोलहवी और सत्रहवी सदी मे मुगलो का जमाना था।

सम्राटो के समय की दीवार, जिसमे 9 अजगर बने हैं।
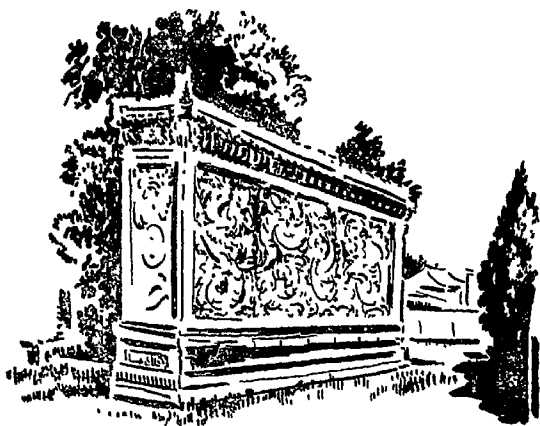
चीन का आखिरी राजवश माचू था, जिसका शासन 1911 ई० तक रहा। मांचू वंश में कोंग ही सबसे योग्य राजा हुआ है। उसने चीनी भाषा का एक बहुत बडा शब्दकोष और कई सौ खण्डो का विश्वकोष तैयार कराया।

लेकिन मांचू वश के सम्राटो के जमाने मे ही यूरोप के देशो का साम्राज्यवादी विस्तार शुरु हुआ था। जिस तरह भारत मे व्यापार के नाम पर अग्रेज, फ्रान्सीसी और दूसरे यूरोपीय साम्राज्यवादी अपना कब्जा जमा रहे थे, उसी तरह चीन में भी वे अपना जाल बिछाने लगे। आखिरी माचू सम्राट् इतने कमजोर और भ्रष्टाचारी थे कि वे आसानी से विदेशियो की चाल के शिकार होते गए। इसलिए चीन की जनता उनके खिलाफ होती गई और 'कुओ-मिन्ताग' नाम का एक राष्ट्रीय सगठन बन गया, जिसमे सभी विचार के चीनी शामिल थे। इस सगठन ने विदेशी हस्तक्षेप के खिलाफ राष्ट्रीय आजादी का आन्दोलन आरम्भ किया। 'कुओ-मिन्ताग' के सबसे बडे नेता डाक्टर सन यात सेन थे। सन 1911 ई० में एक भारी क्रान्ति हुई और माचू शासन का अन्त हो गया। उस क्रान्ति के साथ ही राजतन्त्र भी समाप्त हो गया और एक राष्ट्रीय सरकार बनी।

१९२५ मे डाक्टर सन यात सेन की मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद कुओ-मिन्ताग की बागडोर च्यागकाई-शेक नामक नेता के हाथ मे आई। कुछ समय कुओ-मिन्तांग दल मे फूट पड गई। कुओ-मिन्ताग दल अपने भ्रष्टाचार के लिए शुरू से ही काफी बदनाम था। उधर एक ओर तो सन यात सेन के जीवनकाल मे 1921 में ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना हो चुकी थी और दूसरी ओर देश मे विशेषकर किसानो की दशा दिन प्रतिदिन खराब होती जा रही थी। सिंचाई की सुविधाओ का नितान्त अभाव था। खेती वास्तव मे काश्तकार करते थे पर उत्पादन का एक बडा

भाग जमीदार जो कि जमीन के केवल मालिक होते थे, हडप जाते थे। व्यापारी किसानो से सस्ते दाम पर अनाज खरीद लेते थे और सरकार भी किसानो से अधिक से अधिक लगान वसूल करने मे लगी रहती थी। इसलिए चीनी कृषक बहुत असन्तुष्ट थे और हुनान प्रान्त मे तो काश्तकार जमीदारो की भूमि पर बलात् कब्जा भी करने लगे थे।

कम्युनिस्ट पहले से ही किसानो के असन्तोष का लाभ उठाने को तैयार बैठे थे, परिणामस्वरूप कम्युनिस्टो और कुओ-मिन्ताग दल में सशस्त्र लडाई शुरू हो गई। इस घरेलू लडाई मे देश की सारी ताकत नष्ट होने लगी।

इस बीच कुओ-मिन्ताग दल की सरकार को सन 1937 मे जापानी आक्रमण का भी सामना करना पडा। इस तरह कुओ-मिन्ताग शासन को एक साथ दो शत्रुओ से निपटना पडा।

जापान से चलने वाली लडाई तो द्वितीय विश्वयुद्ध के साथ ही समाप्त हो गई। परन्तु गृह-युद्ध 1949 तक चलता रहा। अन्त मे च्याग-काई-शेक की हार हो गई और कम्युनिस्टो के नेतृत्व में नए राज्य की स्थापना हुई। माऊ-त्से तुग उसके पहले प्रधान चुने गए।

च्यांग-काई-शेक कम्युनिस्टों से हार जाने के पश्चात् फारमोसा नामक टापू में चले गए। इस टापू का क्षेत्रफल 13-885 वर्ग मील है। सन 1895 में शिमोनोसेकी सन्धि के अन्तर्गत इसे जापान को दे दिया गया था। द्वितीय विश्वयुद्ध मे जापान की हार हो जाने के पश्चात् इस पर च्याग-काई-शेक की सरकार का पुन कब्जा हो गया था।

भारत और चीन के सम्बन्ध दो हजार वर्ष पुराने हैं। चीनी सस्कृति पर भारत की गहरी छाप है। चीन मे बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ तथा कुमारजीव, धर्मक्षेप और परमार्थ जैसे कई बौद्ध प्रचारक व विद्वान् वहा समय-समय पर जाते रहे। कई चीनी यात्री भी समय-समय पर भारत आए। इनमे कुछ प्रसिद्ध नाम हैं—फाहियान, ह्वेनसाग व इ-त्सिग। इन्होंने भारत की यात्राओ के रोचक वर्णन लिखे है।

चीनी जनतन्त्रीय आन्दोलन से भारत को सदा ही सहानुभूति रही। सन् 1949 मे जब चीन मे कम्युनिस्ट सरकार स्थापित हुई तो भारत उसको मान्यता देने वालो मे सबसे पहले देशो में से एक था। यही नही भारत ने चीनी मित्रता के लिए तिब्बत मे अपने सभी क्षेत्रीय अधिकार जो उसे काफी समय से प्राप्त थे, छोड दिए और तिब्बत को चीन का एक प्रान्त मान लिया। चीन और भारत के बीच सन् 1954 मे एक समझौता हुआ जो पचशील के नाम से विख्यात है। इस समझौते की प्रस्तावना मे इन दोनो देशो ने यह घोपणा की थी कि वे इन पाच सिद्धान्तो का पालन करेंगे

1. पारस्पिरिक क्षेत्रीय अखडता और प्रभुसत्ता का सम्मान।

हमारे पड़ौसी (2)

इण्डोनेशिया

हमारे देश के दक्षिण-पूर्व मे हिन्द महासागर से लेकर प्रशान्त महासागर तक छोटे-वडे टापुओ की एक शृखला चली गई है। यह लगभग 4800 किलोमीटर लम्बी और 1760 किलोमीटर चौडी है। टापुओ के इस समूह का नाम 'इण्डोनेशिया' है। गिनती मे कुल टापू कोई तीन हजार है। इनमे वडे टापू सुमात्रा, जावा, सुलावेज (सेलीवीज), कालिमन्तान (वोर्नियो) और इरियन (न्यू गिनी) है। इरियन सवसे वडा है। इण्डोनेशिया का कुल क्षेत्रफल 5 लाख 75 हजार 450 वर्ग मील है (1 वर्गमील=1 6 किलोमीटर)।

टापुओ की अधिकतर भूमि पथरीली है। ससार मे ज्वालामुखी पहाडो का सवसे वडा सिलसिला इण्डोनेशिया मे ही है, जिनसे निकले हुए लावे ने यहा की भूमि को उपजाऊ वना दिया है। इण्डोनेशिया की कुल भूमि का एक-तिहाई भाग खेती के योग्य
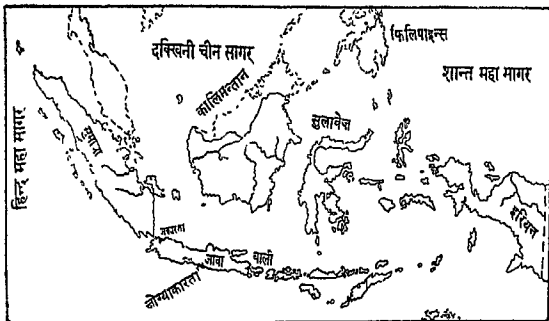
है। वहा धान, मकई, साबूदाना, चाय, काफी और सिन्कोना बोए जाते है। इन्डोनेशिया के चारों ओर के समुद्र में मछलिया बहुत पायी जाती है। वहा से दूसरे देशो को भजी जाने वाली चीजो मे पैट्रोलियम, टीन, रबड, नारियल और चाय विशेष है।
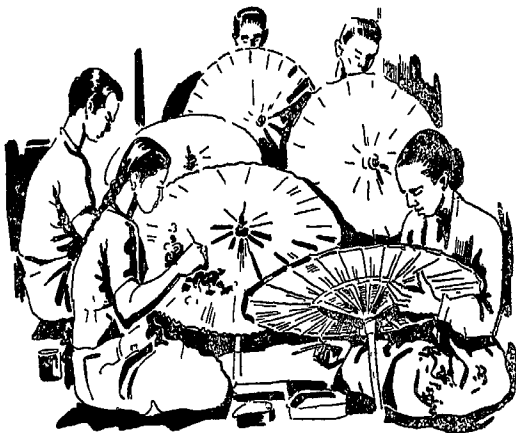
इण्डोनेशिया मे झीलो और नदियो की भरमार है। नदिया गहरी नही हैं, पर वहती वहुत तेज है। जगह-जगह वडे-वडे और घने जगल भी है। इनमे शेर, गैंडा, सूअर और दूसरे भयानक जानवर घूमते रहते है। जगली गाये, साप और तरह-तरह के जहरीले कीडे भी पाए जाते हैं। रग-विरगे के चमकीले और सुन्दर पक्षी भी इधर-उ धर दिखाई देते है। इनमे से एक पक्षी तो इतना सुन्दर होता है कि उसे 'स्वर्ग का पक्षी' कहा जाता है।

इण्डोनेशिया के टापू ज्वालामुखी पहाडियो, नारियल के ऊचे-ऊचे वृक्षो, निर्मल झीलो, और समुद्र-तट के कारण वहुत ही सुन्दर दिखाई देते है। मनुष्य के हाथो ने स्थान-स्थान पर प्रकृति की इस सुन्दरता को और अधिक वढा दिया है।

इन टापुओ के चारो ओर पानी ही पानी है। इसलिए जलवायु अच्छा और मौसम सुहावना रहता है। वरसात लगभग पूरे साल होती है। यहा गर्मी 90 से 96 डिग्री तक रहती है, यानी न अधिक सर्दी, न अधिक गर्मी।

इण्डोनेशिया मे अलग-अलग रग-रूप के आदमी वसते है। उनमे 'मलायी' जाति के लोग अधिक है। यह दुनिया के घने वसे देशो मे से है। यहा की आवादी 1961 की जनगणना के अनुसार 9 करोड 70 लाख 85 हजार 348 थी।

इस देश मे कोई पच्चीस भाषाए वोली जाती हैं, जिनमे मलायी भाषा का प्रचार सवसे अधिक है। यही इण्डोनेशिया की राष्ट्रभाषा भी है। इसे सरकारी तौर पर 'भाषा-इण्डोनेशिया' कहते है और लिखने के लिए रोमन लिपि अपनाई गई है।

इण्डोनेशिया मे पुरुष अधिकतर निकर या तहमद पहनते है। शहरी स्त्रियो का पहनावा यरोपियन ढग का है।

वहा की सभ्यता पर वहुत-से देशो की सभ्यताओ का प्रभाव पडा है। हिन्दू, वौद्ध और ईसाई आदि धर्मो ने भी वारी-वारी से अपना असर डाला है। यहां सव धर्मों को माननें वाले रहते है, जिनमे मुसलमान सवसे ज्यादा हैं।

[illegible] में इस्लाम धर्म के नियमो का पूरी तरह पालन करते हुए भी उन्होंने अपने नाच और नाटक की कलाओ को कायम रखा है। उनके नाच और नाटक की कलाओ पर रामायण और महाभारत जैसे हिन्दू-काव्यो का पूरा प्रभाव है। सस्कृतियो का यह मेल-जोल और धार्मिक उदारता उनके नामो मे भी देखी जा सकती है।

नाच की कला मे इण्डोनेशिया काफी समय से प्रसिद्ध रहा है। बाली द्वीप के नाच का नाम दुनिया मे दूर-दूर तक फैल गया है।

इण्डोनेशिया के बड़े शहर जकारता, जोग्याकारता और जगायिया है। जकारता इस देश की राजधानी है। इण्डोनेशिया मे कई अच्छे बन्दरगाह है। उनमे यहा के व्यापार-केन्द्र गगादिया का बन्दरगाह 'टंजिगपराक' सबसे बड़ा और खास है।

इण्डोनेशिया से भारत का बहुत पुराना सम्बन्ध है। कोई 1600 वर्ष पहले भारत के हिन्दू व्यापारी वहा गए थे। वे अपने साथ भारत की महान् संस्कृति और सभ्यता भी लेते गए। वहा बड़े पैमाने पर व्यापार करने लगे। लोगों का आना-जाना बराबर जारी रहा। जो लोग हमारे देश से वहा गए, वे अपने साथ बौद्ध-धर्म भी लेते गए, जिसे इण्डोनेशिया के अनेक निवासियों ने अपना लिया, यहा तक कि 7वीं सदी मे वहा भारतीयो का प्रभाव पूरी तरह जम गया। सुमात्रा मे उनका और उनकी नई सभ्यता से प्रभावित स्थानीय लोगो का एक साम्राज्य

कायम हो गया। वह इतिहास में श्रीविजय साम्राज्य के नाम से मशहूर है। सुमात्रा को तब 'स्वर्ण द्वीप' यानी 'सोने का टापू' कहते थे। श्रीविजय साम्राज्य एक महान् समुद्री शक्ति बन गया। उसका प्रभाव मलाया, फिलिपाइन्स, ताइपेह, वियतनाम के कुछ भागों, कम्बोडिया और चीन के दक्षिणी भाग तक फैला हुआ था। उस समय को इण्डोनेशिया का 'सुनहरा युग' कहते है। तभी वहा कला, साहित्य आदि की उन्नति हुई।

A 646

लेकिन पूर्वी जावा का मद्जापाहिट राज्य श्रीविजय साम्राज्य के अधीन नही आया। 13वी सदी से उसका महत्व इतना बढने लगा कि आगे चलकर उसने महान् श्रीविजय साम्राज्य को खत्म कर दिया। सन् 1373 ई० में उसका पूरे द्वीप समूह पर अधिकार हो गया। इस प्रकार इतिहास में पहली बार सारा इण्डोनेशिया मद्जापाहिट-साम्राज्य के अधीन एक हुआ। उस साम्राज्य का भी 1478 ई० के लगभग अन्त हो गया।

उसके बाद वहा मुसलमान आए। वे भी व्यापारियो के रूप में ही आए। कहा जाता है कि वे भी हमारे देश के गुजरात सूबे से गए थे। उन्ही के प्रभाव से वहा इस्लाम-धर्म का प्रचार हुआ, जिसके माननेवाले वहा सबसे अधिक है। मुसलमान सम्राटो में सबसे नामी सुल्तान 'इस्कन्दर मुदा' हुआ। वह 17वी सदी मे उत्तरी सुमात्रा मे राज्य करता था। उसने भारत के मुगल बादशाहो के पास अपना राजदूत भी भेजा था।

अन्त में जैसे हमारे देश मे अग्रेज व्यापारी आकर राज्य करने लगे उसी तरह इण्डोनेशिया मे हालैंड देश के व्यापारी आए और उन्होने धीरे-धीरे वहा अपना राज्य कायम कर लिया। पर इण्डोनेशिया के लोगों में आजादी के लिए प्रेम था। वे डचों (हालैंड के निवासियो) के साम्राज्य के खिलाफ बराबर लडते रहे।

डचो के विरुद्ध पहला बडा विद्रोह सन् 1825 ई० में उठा। राजकुमार

दीपकर उसके नेता थे। वह विद्रोह पाच वर्ष तक चलता रहा। अन्त मे राजकुमार दीपकर को डच साम्राज्यवादी अपनी ताकत से नही झुका सके तो उन्होने लडाई बन्द करने की घोषणा करके राजकुमार को सुलह करने के लिए बुलाया और उनके साथ विश्वासघात करके उन्हे कैद कर लिया।

फिर भी आजादी के दीवाने चुप नही बैठे। उन्होने फिर 1875 ई० मे उत्तरी सुमात्रा मे बगावत का झडा उठाया और लगभग 30 साल तक लडते रहे। इण्डोनेशिया के लोगो की 1875 की बगावत हमारे देश के 1857 ई० के विद्रोह से बहुत कुछ मिलती जुलती है।

आगे चलकर दुनिया मे होनेवाली नई घटनाओ का इण्डोनेशिया के लोगो पर भी असर पडा। आजादी की लड़ाई ने एक नया रूप ग्रहण किया। पहले महायुद्ध (1914-18) के बाद हालैंड से पढकर लौटे देशभक्त विद्यार्थी प्रचार द्वारा अपनी जनता को जगाने लगे। वे ही देश के नए नेता बने। उनमे डा० अहमद सुकर्ण, डा० मुहम्मद हाट्टा और डा० सुतनु शारियार बहुत ही प्रसिद्ध है।

दूसरे महायुद्ध (1939-44) के समय जापानियो ने हमला करके डचों से इन्डोनेशिया छीन लिया। पर उनकी हार के बाद वहा की देशभक्त जनता नें डा० सुकर्ण और डा० हाट्टा आदि नेताओ के नेतृत्व मे डचो से डटकर लोहा लिया और अपनी आजादी प्राप्त की।

इण्डोनेशिया 17 अगस्त, 1945 ई० को एक स्वतन्त्र लोकराज्य बना। इस लोकराज्य की नीव, वहा के लोगो के अनुसार, पाच बातो पर है—परमात्मा मे विश्वास, सारे राष्ट्र के एक होने की भावना, लोकराज्य की भावना, न्याय और मानवता। इसी को वे लोग पचशील कहते हैं। डा० अहमद सुकर्ण इण्डोनेशिया के

प्रथम राष्ट्रपति निर्वाचित हुए। सन् 1963 मे डा० सुकर्ण को सलाहकार परिषद ने देश का आजन्म राष्ट्रपति घोषित किया। पर 1965 मे देश में निर्वाचित सरकार का तख्ता पलटने के कम्युनिस्टो के असफल प्रयत्न के पश्चात डा० अहमद सुकर्ण को परिषद ने देश के आजन्म राष्ट्रपति पद पर बने रहने के अधिकार से वंचित कर दिया। जनरल सुहार्तो ने इन मे प्रधानमन्त्री के सारे अधिकार भी अपने हाथ में ले लिए। सन् 1967 मे डा० सुकर्ण ने अपने बाकी अधिकार भी जनरल सुहार्तो को दे दिए। मार्च, 1968 मे जनरल सुहार्तो देश के राष्ट्रपति चुने गए।

बोरोबोदुर के स्तूप का एक दृश्य। यह इण्डोनेशिया की कला का एक सुन्दर नमूना है।

हमारे पड़ोसी (3)

नेपाल

भारत के उत्तर तथा तिब्बत के दक्षिण में हिमालय की मध्यवर्तीय पहाड़ियो मे बसा हुआ देश नेपाल है। इसके पूर्व मे सिक्किम और पश्चिम मे भारतीय जिला कुमायू है। यह देश पूर्व से पश्चिम की ओर एक पटटी के आकार मे फैला हुआ है जिसकी अधिकतम लम्बाई 640 मील है। इसकी चौडाई कही पर तो 156 मील तक चली गई है किन्तु कही पर 89 मील ही रह गई है।

नेपाल के दक्षिणी भाग मे, जो कि भारत के उत्तरप्रदेश और विहार प्रदेशो के साथ लगा हुआ है, जमीन समतल और उपजाऊ है। 30 से 35 मील की चौडाई मे फैला हुआ यह हिस्सा तराई कहलाता है। तराई के उत्तर की ओर नेपाल के मध्य क्षेत्र मे छोटे पहाड और अनेक घाटिया हैं। इन्ही घाटियो मे लगभग 4500 फुट की उचाई पर नेपाल की राजधानी काठमाडू बसी हुई है। नेपाल के उत्तरी भाग मे जोकि तिब्बत की सीमा से मिला हुआ है, अनेक ऊचे-ऊचे पहाड है। इन्ही पहाडो मे

धौलागिरि, कंचनजघा तथा एवरेस्ट जैसी प्रसिद्ध चोटियां स्थित है। एवरेस्ट संसार की सबसे ऊंची चोटी है। यह नेपाल की उत्तरी सीमा के पूर्वी भाग में स्थित है और इसकी ऊंचाई 29002 फुट यानी करीब साढे पाच मील है।
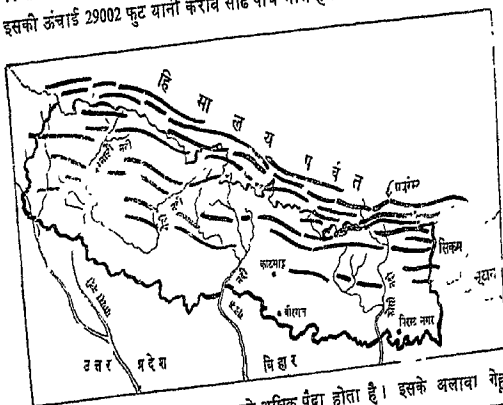
नेपाल के पहाड़ों मे चावल सबसे अधिक पैदा होता है। इसके अलावा गेहू, मकई, जौ तथा बाजरा आदि भी पैदा होते हैं। तराई मे गन्ना, पटसन तथा सरसो की खेती की जाती है। आलू और हरी तरकारिया भी नेपाल भर में खूब मिलती है। पूर्वी नेपाल मे आम और केला तथा पहाडो पर सतरा, आडू, सेब, आलूबुखारा तथा नाशपाती आदि फल पैदा होते हैं। दो हजार से चार हजार फुट तक की ऊंचाई वाले भागो मे चाय की भी पैदावार होती है। साल तथा शीशम के घने जगल नेपाल की सम्पत्ति का एक वडा हिस्सा हैं।

नेपाल की जमीन मे कोयला, लोहा, अभ्रक, तावा तथा कोवाल्ट के भण्डारो का होना प्रमाणित हो चुका है किन्तु इनकी मात्रा बहुत कम है तथा इनकी किस्म भी साधारण कही जाती है। यहा पर कही-कही सगमरमर भी मिलता है।

नेपाल के मुख्यत तीन मौसम है—सर्दी, गर्मी और वरसात। किन्तु गर्मी अधिक नही पडती और वर्षा खूब होती है। यहा पर जंगलो के अधिक होने का एक
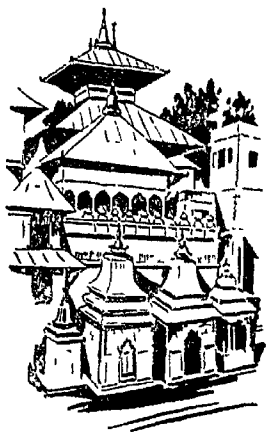
कारण वर्षा भी बहुतायत से होती है। इन जंगलों में बड़े-बड़े जानवर, जैसे शेर, चीता, हाथी तथा गैंडा बहुत पाए जाते हैं। कस्तूरी वाले हिरन भी नेपाल के पहाड़ों पर पाए जाते हैं।

नेपाल की जनसंख्या इस समय एक करोड़ के लगभग है। नेपाल की सभ्यता तथा संस्कृति उत्तर और दक्षिण की दो महान प्राचीन संस्कृतियों के मिश्रण का नमूना पेश करती है। नेपाल के उत्तरी पहाड़ी इलाकों में रहने वाले लोग जोकि 'भोटिये' (तिब्बती) कहलाते हैं, अधिकतर मंगोल जाति के

है। दक्षिण मे आर्य जाति के ब्राह्मणो और क्षत्रियो के परिवार है, जिनके पूर्वज मुसलमान आक्रमणो के समय भारत से गए हुए कहे जाते हैं। बीच के इलाको मे मगोल और आर्य नस्लो के मिश्रित लोग पाए जाते हैं। इसी प्रकार से नेपाल मे बौद्ध तथा हिन्दू, दोनो धर्मो के अनुयायी मिलते हैं। नेपाल मे 2700 से भी अधिक मन्दिर है। हिन्दुओ का सबसे प्रसिद्ध मन्दिर 'पशुपतिनाथ' है तथा बौद्धो का 'स्वयम्भूनाथ'। पशुपतिनाथ के मन्दिर पर हर साल शिवरात्रि के दिन बडा भारी मेला लगता है, जिसमे भारत से हजारो यात्री जाते है।

नेपाल की राजधानी काठमाडू के

उत्तर-पश्चिम में एक नगर गोरखा है। वर्तमान नेपाल नरेश के पूर्वज पहले इसी गोरखा नगर पर राज्य करते थे तथा उनकी प्रजा गोरखाली कहलाती थी। इसी से पहले पश्चिमी नेपाल के लोग और फिर धीरे-धीरे सारे नेपाल के लोग गोरखाली कहलाने लगे। इनकी वफादारी तथा बहादुरी ससार भर में प्रसिद्ध है।

नेपाल में मुख्यत नेपाली तथा नेवारी भाषाए बोली जाती है। नेपाली को 'परवतिया' या पहाडी भाषा भी कहते हैं। उत्तर में कुछ लोग तिब्बती तथा दक्षिण मे हिन्दी भाषा भी बोलते हैं।

काठमाडू नगर नेपाल का राजनीतिक केन्द्र तथा नेपाली सभ्यता का प्रतीक है। नेपाल के महाराजाधिराज वही पर रहते हैं। सन् 1950 ई० तक नेपाल मे एक ऐसी शासन प्रणाली चालू थी जिसमें कि सारा शासन अधिकार प्रधान मन्त्री के हाथ मे होता था। यह प्रधानमन्त्री पद वशागत था तथा ये प्रधानमन्त्री राणा कहलाते थे और इन्ही को राजसत्ता के सब अधिकार हासिल थे। यह राणाशाही ही ताना-शाही का दूसरा नाम बन गया था।

इस शासन सत्ता के नीचे जहा एक ओर जनता परेशान थी तो दूसरी ओर महाराजा। अत फल यह हुआ कि राणाशाही के विरुद्ध जनता मे आन्दोलन उठ खडा हुए। इसी समय, नवम्बर सन् 1950 मे महाराजा त्रिभुवन भी एक दिन चुपके से शिकार खेलने के बहाने राजभवन से निकल कर भारतीय दूतावास मे चले गए और वहा से कुछ ही दिनो मे सपरिवार दिल्ली आ गए। भारत सरकार तथा प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू ने उन्हे अपना मेहमान बनाकर बडे आदर से रखा।

महाराजा का काठमाडू से चले जाना, जनता के आन्दोलनो के लिए एक बहुत बड़ा सकेत बन गया। जनता के प्रजातान्त्रिक आन्दोलन, नेपाली काग्रेस तथा अन्य कुछ पार्टियो के नेतृत्व मे खूब तेजी से चलने लगे। इसी बीच दिल्ली मे श्री नेहरू की

मध्यस्थता में राणा शासको, जन-प्रतिनिधियो तथा महाराजाधिराज की आपस मे समझौते की वातचीत शुरू हुई। फलस्वरूप राणा शासको ने महाराजा के अधिकारो को लौटाना स्वीकार कर लिया और महाराजा काठमाडू वापिस आ गए। उन्होंने जनता की लोक-राज्य की माग को अपनाया तथा 18 फरवरी, 1951 के दिन नेपाल मे एक नई शासन प्रणाली की स्थापना हुई। इस प्रणाली के अनुसार राजतन्त्र तो कायम रहा किन्तु महाराजा नें जनता के प्रतिनिधियो की सलाह के अनुकूल ही राजकाज चलानें का आश्वासन दिया। तब से नेंपाल ने लोकतन्त्र के सिद्धान्तो पर आगे बढना शुरू किया।

सन् 1951 के बाद नेपाल की आर्थिक अवस्था मे भी सुधार होना शुरू हुआ। इससे पहले नेपाल मे उद्योग धन्धे बहुत कम थे। वहा पर केवल दो जूट मिले, एक शक्कर की मिल, दो दियासलाई के कारखानें तथा एक प्लाइवुड का कारखाना था। इसके पश्चात् अन्य देशो की सहायता से वहा बहुत से नए उद्योग-धन्धे खोले गए, जैसे रूस की सहायता से सिगरेट तथा शक्कर के कारखाने और चीन की सहायता से चमड़ा और जूता बनाने के कारखाने खोले गए। इसके अलावा, भारत की सहायता से वहुत-सी सडके और पानी द्वारा विजली पैदा करने की तथा सिंचाई की योजनाए बनाई गईं तथा अमेरिका द्वारा कृषि सुधार के कार्यक्रम में और तकनीकी ट्रेनिंग में बहुत सहायता दी गई।

शिक्षा का प्रसार भी सन् 1951 के बाद वहुत हुआ। नेपाल भर मे अनेक नए स्कूल और कालेज खोले गए। सन् 1958 से पहले नेपाल मे कोई विश्वविद्यालय न होनें के कारण नेपाल के सव कालेज भारतवर्ष मे स्थित पटना विश्वविद्यालय के साथ सम्वन्धित थे तथा नेपाल से वहुत-से विद्यार्थी उच्च शिक्षा के लिए भारत आते थे। किंतु सन् 1958 मे नेपाल मे त्रिभुवन विश्वविद्यालय की स्थापना के पश्चात् सब नेपाली कालेज उससे सम्वन्धित कर दिए गए तथा इस विश्वविद्यालय की स्थापना हो जाने के कारण नेपाल मे उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे भी काफी उन्नति हुई। किन्तु अव भी

काफी नेपाली विद्यार्थी छात्रवृत्ति पर भारतीय विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने भारत आते हैं।

नेपाल के सम्बन्ध भारत के संग जिस प्रकार सदियों से घनिष्ठ तथा मैत्रीपूर्ण चले आ रहे हैं, उसी प्रकार अब भी हैं। इसका कारण है भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियां, जिनको कभी भी बदला नहीं जा सकता।
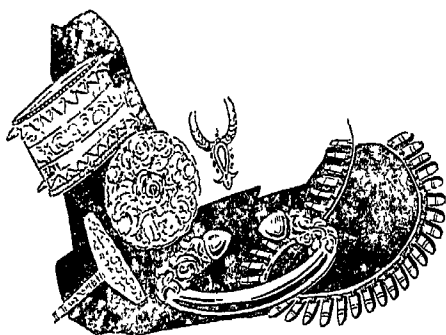
एवरेस्ट पर विजय

हिमालय पर्वत भारत के उत्तर में है। यह ससार भर के पर्वतो मे सबसे ऊचा है। हमारे देश के उत्तर मे यह पश्चिम से पूर्व तक फैला हुआ है। इसकी अनगिनत चोटियो मे से कुछ प्रमुख चोटियां हैं सगरमाथा, कचनजघा, धौलागिरि और नदा देवी।

सगरमाथा ससार का सबसे ऊचा शिखर है। नेपाली भाषा मे सगर का अर्थ हिम होता है। इस प्रकार सगरमाथा का हिन्दी नाम हिमकिरीट हुआ। इस शिखर की ऊचाई 1840 ई० मे सर जार्ज एवरेस्ट की देख-रेख में नापी गई थी। इसलिए

उन्ही के नाम पर लोग इसको एवरेस्ट शिखर कहने लगे। आज ससार में यही नाम प्रसिद्ध है।

एवरेस्ट साहव के अनुसार इस चोटी की ऊचाई 29,002 फुट है। इतनी ऊंचाई पर किसी मनुष्य का रहना क्या, पहुंचना भी जान पर खेलना है, और जान पर खेलना हिम्मतवालो का ही काम है। पिछले चालीस-पैंतालीस वर्ष से वरावर अलग-अलग देशो के लोग एवरेस्ट की चोटी पर चढने की कोशिश करते रहे। पर हर वार उन्हे निराशा का सामना करना पडा। फिर भी साहसी लोग हिम्मत न हारे। अन्त में 29 मई, सन् 1953 ई० को मनुष्य इस चोटी पर पहुच ही गया।

यूरोप के लोगो ने एवरेस्ट पर चढाई की सवसे पहली कोशिश 1921 ई० में की थी। चढ़ाई करने वाले लन्दन की भूगोल सोसायटी के कुछ लोग थे। हावर्ड बैरी उनके नेता थे। वे लोग तिव्वत को ओर से गए थे। उन्होने चारो ओर घूम-फिर कर नक्शे वनाए और प्रसिद्ध यात्री मेलोरी ने चोटो पर चढने का रास्ता मालूम किया। पर उस साल वह दल ऊपर तक नही गया। दूसरे साल एक और दल ने जनरल ब्रूस की देखरेख मे इस चोटी पर चढ़ने की कोशिश की। मौसम साथ देता तो यह दल जरूर सफल हो जाता। इस दल के लोग दार्जिलिंग की तरफ से जा रहे थे और चढते-चढते 26,985 फुट की ऊंचाई तक पहुच गए थे। पर एकाएक मौसम खराब हो गया। मानसूनी झक्कड चलने लगे। उन्हे लाचार होकर लौटना पड़ा। वापसी में वर्फ का एक तोदा ऊपर से टूट कर गिरा, जिससे दवकर उनके साथ के सात कुली मर गए। जाने तो गई, पर मनुष्य पहली वार लगभग 27,000 फुट की ऊचाई पर पहुच गया। सन् 1924 ई० मे एवरेस्ट पर तीसरी चढाई की गई। इस वार दो वीर मेलोरी और इर्विन, 28,000 फुट से ऊपर जा पहुचे। परन्तु न वे वापस आए और न उनका कोई समाचार ही मिला। कुछ भी पता न चलने पर यह मान लिया गया कि वे दोनो वीर सदा के लिए हिमालय की गोद में सो गए। यह तीसरी चढाई एवरेस्ट विजय के इतिहास मे वड़े महत्व की है, क्यों कि एक तो मेलोरी और इर्विन जैसे वीर इस चढाई मे शहीद हुए, दूसरे मनुष्य पहली बार 28,000 फुट से भी ऊपर पहुच गया।

फिर भी मंजिल अभी दूर थी और बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना था। मनुष्य ने हार न मानी। वह बराबर कोशिश करता रहा। सन् 1933, 1935 1936 और 1938 ई० मे साहसी पुरुषो के अलग-अलग दलो ने इस चोटी पर विजय पाने की कोशिश की। 1936 ई० मे इंग्लैण्ड के दो हवाई जहाज एवरेस्ट के ऊपर उडे। 1952 ई० की गर्मियो मे स्विट्जरलैण्ड का एक दल एवरेस्ट विजय के लिए चला, पर मौसम की कठोरता के कारण उसे भी निराश होना पडा। यह दल 28,250 फुट तक ही चढ पाया था।

एवरेस्ट पर चढने की कोशिश मई के महीने मे की जाती रही है, क्योंकि उन दिनो सर्दी कुछ कम रहती है और मौसम अच्छा रहता है। दूसरे सालो की तरह 1953 ई० की मई मे एवरेस्ट पर एक और चढाई की गई। चढाई करने वाले ब्रिटिश हिमालय दल के थे। दल के सरदार थे कर्नल हट। हर बार तेनजिंग शेरपा नाम के एक युवक ने सहायता ही नही दी, बल्कि उसने चोटी पर सबसे पहले चढ जाने का मान भी पाया। शेरपा जाति के लोग पहाडो पर चढने मे बहुत निपुण होते है। वे लोग तिब्बती है, पर बहुत दिनो से नेपाल मे और भारत के दार्जिलिंग नगर के पास बस गए हैं। तेनजिंग उन्ही शेरपाओ मे से एक है।
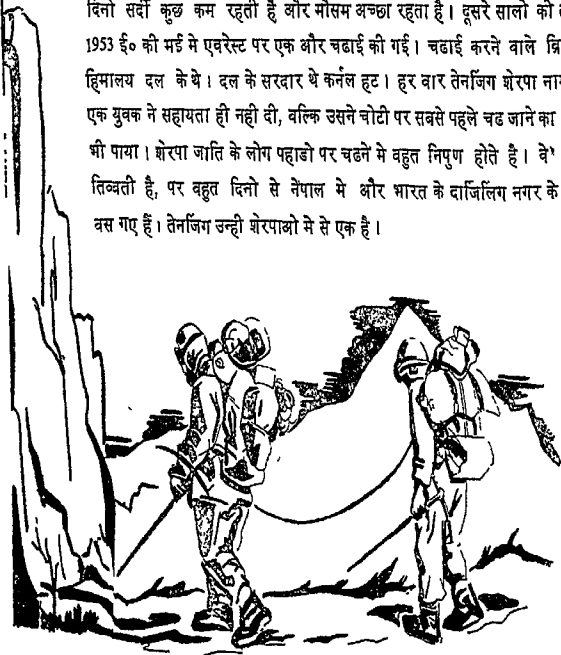
29 मई, 1953 का दिन मनुष्य के साहस की कहानी मे महान दिन था। उसी दिन तेनजिग और उनके साथी कप्तान हिलेरी ने अपने कदम एवरेस्ट पर रखे। उन्होने चोटी पर सयुक्त राष्ट्र संघ, भारत, नेपाल और ब्रिटेन के राष्टीय झण्डे फहराए।

एवरेस्ट विजय के लिए पहली बार पूरी तरह से भारतीय दल द्वारा चढ़ाई सन् 1960 में की गई। इस दल के नेता ब्रिगेडियर ज्ञानसिह थे। यह दल 6825 मीटर (27,700 फुट) की ऊचाई तक पहुंच गया था। भारतीय दल द्वारा सन् 1962 ई० में दूसरी कोशिश की गई। इस दल के नेता मेजर जान डायस थे। यह दल 8716 मीटर (28,327 फुट) तक पहुच सका। सन् 1965 मे भारत के तीसरे दल ने 10 दिन के भीतर ही चार बार एवरेस्ट पर चढाई करके भारत के झण्डे फहराए। पर्वतारोहण के क्षेत्र मे यह एक शानदार मिसाल थी। इस दल मे 19 सदस्य थे जिनमे 5 पर्वता-रोही, दो बेतार के सचार का सचालन करने वाले और दो डाक्टर थे। दल के नेता श्री मोहन सिंह कोहली थे। दल में 800 भार ढोने वाले और 50 चुने हुए शेरपा थे। 20 मई को प्रात: नौ वजे भारतीय दल के सदस्यों में से अवतारसिह चीमा और नवाग गोम्बू नें एवरेस्ट पर पहली विजय प्राप्त की और उन्होनें वहां भारतीय और नेंपाली झण्डे फहराए। चीमा नें मा के दिए चादी के सिक्के सगरमाथे पर चढाए, गोम्बू नें पत्नी का दिया रेशमी रूमाल और मामा तेनजिग की दी हुई बुद्ध की मूर्तिया रखकर पूजा की। फिर दोनो नें अनेक फोटो खीचने के वाद शिखर से विदा
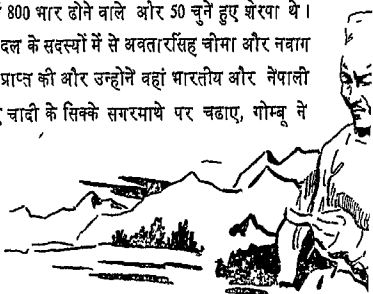
ऐसे बहुत-से लोग, जो इस बात मे विश्वास करते है कि समय-समय पर ईश्वर अवतार लेकर समाज में फैली बुराइयो को दूर करता है, श्रीकृष्ण को ईश्वर का अवतार मानते है। पर जो ऐसा नही मानते उनमे से भी ज्यादातर लोग एक महापुरुष के रूप मे उनका आदर और सम्मान करते है।

श्रीकृष्ण की जीवन-कहानी महाभारत और भागवत पुराण मे मिलती है। उन दिनो मथुरा के पास वृष्णियो या यादवो का एक प्रबल पचायती राज (गणराज्य) था। उग्रसेन इसके मुखिया थे। उनकी बेटी देवकी का विवाह वसुदेव से हुआ था। जो इसी गणसघ के सदस्य वश के थे। उग्रसेन के बेटे का नाम कस था। वह बडा अत्याचारी था। अपने बाप को कैद मे डालकर और गणराज्य को उलट कर वह स्वयं राजा बन बैठा। पर उसे हमेशा यह डर बना रहता था कि कही उसे गणराज्य के समर्थक हटा न दे। इसलिए वह अपने सभी सम्बन्धियो को अपने रास्ते का काटा समझता था और उनका अन्त करने के प्रयत्न मे लगा रहता था। यही कारण है कि उसने अपनी बहन देवकी और बहनोई वसुदेव को भी कैद मे डाल रखा था। भागवत पुराण के अनुसार कैद मे ही वसुदेव और देवकी के सात बच्चे हुए, जिन्हे कस ने मरवा डाला। आठवें बच्चे का जन्म भादो वदी अष्टमी को आधी रात के समय हुआ उसी समय वसुदेव बच्चे को उठाकर किसी तरह कैदखाने से निकल गए। यमुना पार गोकुल नाम का गाव था। वहा के मुखिया नन्द वसुदेव के मित्र थे। वसुदेव अपने मित्र के घर पहुचे और बालक को उनके सुपुर्द कर दिया। यही बालक श्रीकृष्ण थे।

नन्द और उनकी पत्नी यशोदा ने बालक श्रीकृष्ण को अपने बच्चे की तरह लाड़ से पाला।

श्रीकृष्ण का बचपन गोकुल में और लडकपन पास ही के गाव वृन्दावन मे ग्वाल-बालो के बीच बीता। श्रीकृष्ण ने अपने बचपन में ही बडे साहस के काम कर दिखलाए। कई अत्याचारियो को उन्होने मारा। गाव वालो को बडे-बडे संकटो से बचाया। गोवर्द्धन उठाने की कहानी तो बहुत ही प्रसिद्ध है। श्रीकृष्ण बडे ही सुन्दर और होनहार बालक थे। सभी नर-नारी उन्हे प्यार करते थे। कवियो ने उनकी बाल-लीला और राधा-कृष्ण के प्रेम का बहुत ही सुन्दर ढग से बखान किया है।

बडे होकर श्रीकृष्ण मथुरा लौटे। उन्होने कस को मारा और लोगो ने चैन की सास ली। कस को मारकर वह आप राजा नही बने, बल्कि कस के पिता उग्रसेन को कैद से निकालकर गद्दी पर बैठाया। कुछ समय बाद श्रीकृष्ण द्वारका में जा बसे। वहा से उन्होने भारत की राजनीति में भाग लेना शुरू किया और बहुत जल्दी वह उस पर छा गए।

इसी समय कुरुवश मे कौरवो और पाडवो के बीच झगडे शुरू हो गए। वे आपस मे चचेरे भाई थे। श्रीकृष्ण ने इन झगडो को मिटाने की बहुत कोशिश की, पर दोनो तरफ की भूलो से झगडे बढते ही गए। अन्त मे जब लडाई की नौबत आ गई, तो श्रीकृष्ण ने पाडवो का साथ दिया। हस्तिनापुर का कुरुवश भारत मे सबसे बलवान राजकुल था। इसीलिए जब ये झगडे बढे, तो आसपास के सब राजा इनकी लपेट मे आ गए। किसी ने एक का साथ दिया, तो किसी ने दूसरे का। अन्त में कुरुक्षेत्र के मैदान मे दो बडी-बडी सेनाए जमा हो गई। अठारह दिन तक घमासान युद्ध हुआ। दोनो ओर के बडे-बडे वीर काम आए। यही लडाई महाभारत की लडाई कहलाती है। इसमे जीत पाडवो की हुई, पर इस जीत का सेहरा श्रीकृष्ण के सिर था। उन्होने पाडवो के सेनापति अर्जुन का रथ स्वय हाका। समय-समय पर पाडवो को अपनी अनमोल सलाहे दी, और कई तरह के सकटो से निकाला। लडाई के शुरू में ही अर्जुन
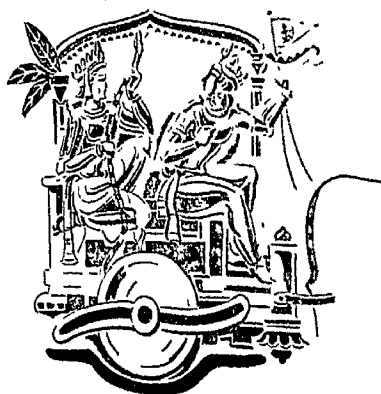
के मन मे तरह-तरह की शकाए और डर पैदा होने लगे थे। इसी समय श्रीकृष्ण ने अर्जुन को वह अमर उपदेश दिया, जिसे आज सारा ससार "भगवत् गीता" के नाम से जानता है।

महाभारत की लडाई के बाद श्रीकृष्ण द्वारका लौट गए और वैराग्य का जीवन बिताने लगे। अब उनका काम पूरा हो चुका था। वही कुछ वर्प वाद जगल मे अचानक किसी शिकारी का तीर लग जाने से उनकी ससार-लीला पूरी हुई।

श्रीकृष्ण हमारे सामने तीन रूपो मे आते है। पहले अपने वाल रूप मे, जव निडर और साहसी वालक कृष्ण ने अपनी प्रतिभा से सव को चकित कर दिया। उस समय वह आसपास के गावो के नेता वने, और लोगो को अत्याचार का सामना करना सिखाया।

इसके वाद श्रीकृष्ण हमारे सामने एक राजनीतिज्ञ के रूप मे आते है। देश के एक कोने मे वैठकर उन्होने भारत को एक सूत्र मे वाधने की कोशिश की।

उनका तीसरा रूप इन दोनो रूपो से कही वढ कर है। इसमे वह हमारे सामने एक वहुत वडे मार्गदर्शक के रूप मे आते है। गीता का जो ज्ञान उन्होने अर्जुन को कुरुक्षेत्र मे दिया, उसमे मानव जीवन के हर पहलू पर वडी गहराई से विचार किया गया है।

उस समय वेदों की रचना हो चुकी थी। उपनिषदो का सिलसिला भी, जिसमे ईश्वर, जीव और जगत् पर बहुत गहराई से विचार किया गया है, काफी आगे बढ चुका था। श्रीकृष्ण ने उन सबका निचोड लेकर अपने निजी अनुभव से उसे चमका दिया। गीता उसी उपदेश का नाम है। यह उपदेश किसी एक जाति, देश, समय या एक धर्मवालो के लिए नही है। सचाई की खोज करनेवाला चाहे कोई हो, गीता से वह बहुत-कुछ सीख सकता है और लाभ उठा सकता है।

श्रीकृष्ण के उपदेशो को थोडे मे इस प्रकार कहा जा सकता है—आत्मा अमर है। शरीर के कट जाने, जल जाने, या किसी तरह भी नष्ट हो जाने से आत्मा नष्ट नही होती। ईश्वर एक है। वही सबका ईश्वर है। दुनिया के सब धर्म अपने-अपने ढग से आदमी को उसी एक ईश्वर तक पहुचाते हैं। धर्म का असली सार किसी तरह का पूजा-पाठ, रीति-रिवाज या कर्मकाड नही है। असली सार है अपने आप को जीतना, अपनी इन्द्रियो को काबू में रखना, सुख-दुख और हानि-लाभ सब में एक रस रहना, सबके साथ सचाई और नेकी का बर्ताव करना, सबकी भलाई के कामो मे लगे रहना और एक ईश्वर मे अपने मन को लगाना, फल की चाह न करके कर्तव्य पर डटे रहना आदि। यही गीता के उपदेशो का सार है।
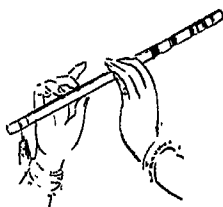
संसार के महापुरुष (2)

मुहम्मद साहब

मुहम्मद साहब का जन्म सन 570 ई० मे अरब देश के मक्का शहर मे हुआ था। उनकी माता का नाम अमीना और पिता का नाम अब्दुल्ला था। उनके खानदान के लोग या तो मक्का के पुराने तीर्थ-स्थान काबा के महन्त होते थे, या व्यापार से अपना गुजर करते थे।

अरब भारत से कुछ दूर पश्चिम मे ईरान और अफ्रीका के लगभग बीच मे एक देश है। मुहम्मद साहब के जन्म के समय उस देश की दशा बहुत गिरी हुई थी। देश भर मे सैकडो छोटे-छोटे कबीले थे, जो अक्सर एक-दूसरे से लडते रहते थे। इन कबीलो की आपसी लडाइया पीढियो तक चलती थी। हर कबीले का अपना एक देवता होता था, जो रग-रूप मे दूसरे कबीलो के देवताओ से अलग होता था। हर कबीला अपने ही देवता को पूजता था। कबीलेवालो की लडाइया इन देवताओ की लडाइया भी समझी जाती थी और कभी-कभी तो जीतनेवाला कबीला हारे हुए कबीले

के 'देवता' को कैद करके अपने यहा ले आता था। यह विचार कि सब का एक ही ईश्वर या अल्लाह है, उस समय अरब में बहुत ही कम लोगों का था।
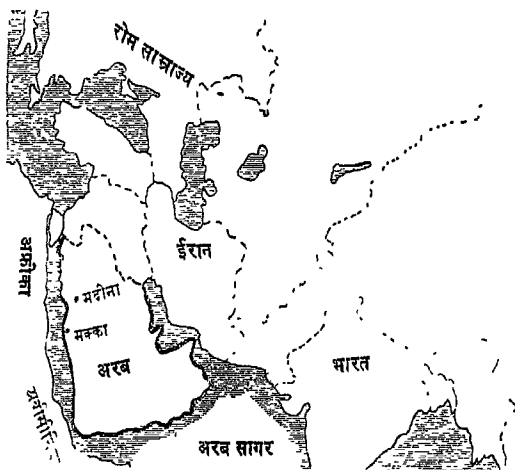
अरब के अलग-अलग भागो में अलग-अलग राजा थे। उत्तर का बहुत-सा इलाका रोम के सम्राट् के अधीन था। पूर्व और दक्षिण के इलाकों पर ईरान का राज था। पश्चिम का एक बडा और उपजाऊ भाग अबीसीनिया के सम्राट् के कब्जे में था। बीच का अधिकाश भाग रेगिस्तानी था, पर इस भाग पर भी तीनों विदेशी ताकतो के दात बराबर लगे हुए थे। मक्का और मदीना के मशहूर शहर इसी भाग में थे।

अब अगर हम अरब से हटकर उस समय के कुछ आसपास के देशों पर निगाह डाले, तो उनकी दशा, विशेषकर धर्म या मजहब के मामले में, और भी बुरी दिखाई देती है। ईरान मे जरतुश्ती यानी पारसी धर्म चालू था। यह धर्म शुरू मे दुनिया के और सब बडे धर्मों की तरह बहुत ही ऊंचा धर्म था; पर जिन दिनों की बात हम कर रहे हैं, उन दिनों इसमे तरह-तरह की बुराइयां घर कर चुकी थी। यूरोप में और

विशेपकर रोम मे उन दिनो ईसाई धर्म का बोलबाला था। उस धर्म के माननेवालो मे भी वे बहुत-से लोग जिनके हाथ मे समाज का सचालन था, ईसा मसीह के ऊँचे आदर्शों से गिर चुके थे। उनमे बहुत-से दल पैदा हो गए थे। वे इन छोटी-छोटी बातो पर बहुत बहस करते और आपस में लडते-भिडते रहते थे। जीतनेवाले दल के लोग दूसरे दल के लोगो से जबरदस्ती अपनी बात मनवाते थे। अगर वे न मानते तो उन्हे तलवार के घाट उतार देना या जिन्दा जला देना वे अपना अधिकार समझते थे। मुहम्मद साहब के जन्म के समय रोम साम्राज्य और यूरोप के दूसरे देशो मे ईसाइयो के इलाके इस धार्मिक पागलपन के कारण बरबाद हो गए थे। यूरोप भर मे धार्मिक आजादी या विचारो की स्वतन्त्रता का कही नाम तक न था।

इस तरह के देश और इस तरह की दुनिया मे मुहम्मद साहब का जन्म हुआ।

मुहम्मद साहब शुरू से ही बहुत विचारशील और एकान्तवासी थे। वह अपने देशवासियो की हालत पर खूब सोचते रहते थे और उसे देखकर उन्हे बडा दुख होता था। अपने देश की दशा सुधारने के लिए मुहम्मद साहब एक ओर तो ईश्वर मे प्रार्थनाए करते थे, और दूसरी ओर अपने-आप भी समाज सेवा के उपायो की खोज मे लगे रहते थे। जल्दी ही उन्हे एक ऐसा अवसर मिल गया।

काबा की यात्रा या हज करने के लिए दूर-दूर से यात्री आते थे। उन्हे अक्सर रास्ते मे ही लूट लिया जाता था। देश भर मे कोई कचहरी या अदालत ऐसी न थी जिसमे वे न्याय के लिए फरियाद कर सके। मुहम्मद साहब ने सबसे पहले मक्का के बहुत-से खानदानो के नौजवानो का एक दल बनाया, जो इन परदेसियो के जान-माल की रक्षा कर सके। कोई साठ साल तक यह दल बहुत अच्छा काम करता रहा।

कुछ दिन बाद एक और घटना हुई। पानी की बाढ से काबे की दीवारे फट गई। उनकी मरम्मत के बाद काबे के पवित्र पत्थर, 'संगेअसवद,' को फिर से ठीक जगह रखने का सवाल सामने आया। काबे के महन्तो का खानदान कुरैश चार शाखाओ मे बटा था। इन चारो मे इस बात पर झगडा होने लगा कि 'संगेअसवद' को उठाने और ठीक जगह रखने का मान किसे मिले। झगडा बढता दिखाई दिया।

आखिर सबने मिल कर फैसले के लिए मुहम्मद साहब को बुलाया। मुहम्मद साहब ने आकर बड़ी सुन्दरता के साथ सबका मान रखते हुए झगडे का फैसला किया। उन्होंने 'संगेअसवद' को एक चादर पर रखवाया, फिर चारो खानदानों के एक-एक आदमी से कहा कि वे चादर का एक-एक कोना पकड कर उसे ऊपर उठाए। जब चादर ठीक जगह पर जा लगी, तब उन्होने अपने-आप 'संगेअसवद' को हल्के से सरकाकर उसकी जगह पर पहुंचा दिया। सबने उनकी चतुराई और शान्ति-प्रेम को सराहा।

उन दिनों मुहम्मद साहब अपने देश मे अल-अमीन के नाम से मशहूर थे, जिसका अर्थ होता है—सब का विश्वासपात्र। सचमुच सब लोग उन्हे विश्वास और आदर की दृष्टि से देखते थे। उनकी ईमानदारी के कारण ही खदैजा नामक एक धनवान महिला ने उन्हे अपने व्यापार की देखभाल के लिए रख लिया। मुहम्मद साहब व्यापारी काफिलों के सरदार के रूप में दूसरे देशो में भी आने-जाने लगे। इस तरह उन्हे देश-देश के वासियो से मिलने और उनके बारे में लाभदायक जानकारी पाने का अवसर मिला। मुहम्मद साहब की ईमानदारी के कारण खदैजा को व्यापार मे बहुत लाभ हुआ। खदैजा पर मुहम्मद साहब के सदाचार और व्यवहार का भी गहरा असर पडा और उन्होंने मुहम्मद साहब के साथ शादी कर ली।

विवाह के बन्धन भी मुहम्मद साहब को जनहित की राह पर बढने से न रोक सके। अब वे हिरा पहाड़ की एक गुफा मे जा बैठते और घटो अपने देश और समाज की दशा पर विचार करते रहते। यह क्रम चालीस वर्ष की उम्र तक चलता रहा।

चालीस वर्ष की उम्र में मुहम्मद साहब ने अपने भीतर एक महान् शक्ति और प्रकाश का अनुभव किया। अब वह अपने अल्लाह का सन्देश अपने समाजवालो को भी सुनाने लगे। उनके उपदेशो की विशेष बाते ये थी .

अल्लाह एक है। उसका कोई रग-रूप नही है। उस एक के सिवा किसी दूसरे देवी-देवता या किसी और की पूजा करना पाप है।

ससार के सब आदमी वास्तव मे एक ही परिवार के है । इसलिए उनमें कवीले-कवीले, जात-पात, ऊच-नीच, या छुआछूत का कोई भेद नही होना चाहिए।

सवको हर तरह की वुराइया छोडकर वे काम करने चाहिए, जिन्हे सव लोग अच्छा समझते है।

मुहम्मद साहव ने अपने देशवासियों को समझाया कि जुआ खेलना, शराव पीना, सूद लेना और लडकियो को जिन्दा दफन करना आदि वुराइयो से और हर तरह की वदचलनी से वचो। स्त्रियो की दशा को उन्होने वहुत ऊचा उठा दिया। उन्होने नियम वनाया कि स्त्रियो को भी वाप की सम्पत्ति में हिस्सा मिले। गुलामो को भी वरावरी का दर्जा दिलाया। उन्होने अपने साथियो से कहा कि जो खाना तुम खाओ, वही अपने गुलामो को खिलाओ, जो कपडे तुम पहनो, वही उनको पहनाओ और उनके साथ कभी किसी तरह की कडाई न करो। मुहम्मद साहव ने अर्थव्यवस्था के भी कुछ ऐसे तरीके वताए, जिनसे धन केवल कुछ लोगो के ही हाथो मे जमा न हो, वल्कि अमीरो से निकलकर गरीवो तक पहुचता रहे।

मुहम्मद साहव धर्म के मामले मे किसी के साथ किसी तरह की जवरदस्ती उचित नही समझते थे। वह सवके लिए पूरी धार्मिक स्वतन्त्रता का उपदेश देते थे। उनका कहना था कि दुनिया के सब धर्म मूल रूप मे सच्चे है, और सव उसी एक अल्लाह की ओर ले जानेवाले हैं। उनके माननेवाले अपने धर्मो के असल उसूलो से भटक गए है।

पहले तेरह साल तक मक्कावालो ने मुहम्मद साहव का डटकर विरोध किया। कावा की मूर्तियो की पूजा से रोजी कमानेवाले इन विरोधियो मे सवसे आगे थे। मुहम्मद साहव और उनके गिने-चुने साथियो को वडी-वडी तकलीफें दी गई। उन्हे पीटा गया, गालिया दी गईं, उन पर पत्थर फेंके गए और उनका कडा सामाजिक वहिष्कार किया गया। मुहम्मद साहव को मार डालने की भी साजिशें की गई। तेरह वर्ष तक मुहम्मद साहव वडे धीरज के साथ इन सव कठिनाइयो को सहते रहे और अपनी वात पर डटे रहे। उन्होने अपने साथियो को भी सदा यही उपदेश दिया कि धीरज के साथ सव तरह की कठिनाइया सहो और वुराई का वदला सदा भलाई से

दो। तेरह वर्ष बाद मक्का से 168 मील दूर मदीना के कुछ लोगों के दिलों में मुहम्मद साहब के उपदेशों ने विशेष रूप से घर किया। उन्होंने मुहम्मद साहब और उनके साथियो की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया। मुहम्मद साहब अपने मुट्ठी भर साथियो को लेकर अब मदीना जा बसे। वहा धीरे-धीरे मदीना की खास हालत और अपनी शान्ति तथा न्यायप्रियता के कारण वह बहुत जल्दी लोकप्रिय हो गए। यहा तक कि सबने मिल कर उन्हे वहा का हाकिम चुन लिया। इसके बाद मुहम्मद साहब ने अरब के दूर-दूर के शहरो और कबीलों मे भी अपने उपदेशक भेजे और इस तरह मुहम्मद साहब का सन्देश दूर-दूर तक फैलने लगा।

मुहम्मद साहब का रहन-सहन बहुत ही सीधा-सादा और बिल्कुल गरीबो का सा था। मदीने के हाकिम होकर भी वह सदा नगी जमीन पर या अधिक से अधिक खजूर की चटाई पर सोते थे। मुहम्मद साहब अपने कपडे आप धोते थे, अपनी ऊटनी का 'खरेरा' अपने हाथ से करते थे, अपनी बकरियों को अपने-आप दुहते थे। वह अपने

मुहम्मद साहब का रौजा
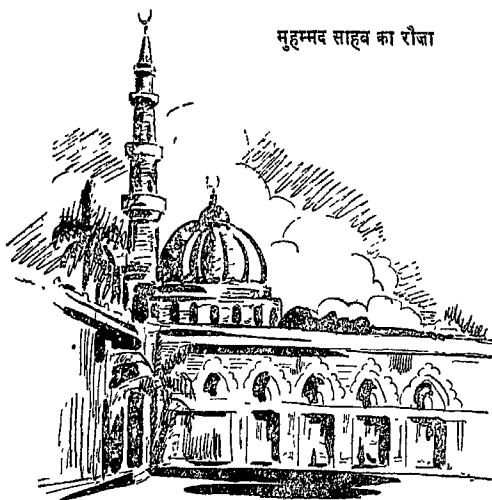
हाथ से ही अपने घर मे झाड़ू लगाते थे और अपनी चप्पल भी खुद ही गाठते थे। सरकारी लगान की आमदनी मे से खजूर का एक दाना भी अपने या अपने घरवालों के लिए लेना वह पाप समझते थे।

बाईस वर्ष तक की लगातार कोशिश का फल यह हुआ कि अरब के सारे अलग-अलग कबीले खत्म हो गए और सारा अरब एक कौम बन गया। उनके धार्मिक भेदभाव मिट गए और उनकी सामाजिक बुराइया लगभग खत्म हो गई। अरब वालो ने मुहम्मद साहब को अपना हाकिम मान लिया। अरब के कुछ इलाके विदेशी शासन के अधीन थे। अब वे सब भी अरब वालो के हाथ मे आ गए और इस तरह सारा अरब एक उन्नत और स्वाधीन राष्ट्र बन गया।

सोमवार बारह रबी उल अव्वल, 4 जून, 632 ई० को मदीने मे मुहम्मद साहब ने शरीर त्यागा। उस समय उनकी आयु 62 बरस की थी।

एक अग्रेज ने ठीक ही लिखा है कि मुहम्मद साहब को एक साथ तीन चीजे स्थापित करने का सौभाग्य मिला। एक राष्ट्र, एक राज, और एक धर्म। इतिहास में इस तरह की दूसरी मिसाल नही मिलती। सचमुच ही मुहम्मद साहब दुनिया के महान् आदमियो मे से थे।

संसार के महापुरुष (3)

बापू

गाधीजी को हम सब आदर से 'राष्ट्रपिता' और प्यार से 'बापू' कहते हैं। कभी हमने यह भी सोचा कि इसका क्या कारण है ?

आखिर पिता कहते किसको है ? उसको जो पैदा करता है और पाल-पोस कर बड़ा करता है। हम यह मानते है कि असल मे पैदा करनेवाला और पालनेवाला कोई और है। पर वह यह काम किसी आदमी ही के हाथ से लेता है। उसी आदमी को पिता कहते है।

अब से चालीस वर्ष पहले भारत मे लोग तो थे, पर भारत राष्ट्र न था। लोग टुकड़ियो में बटे हुए, निर्बल, निराश, दूसरो के दास थे। उनको मिलाकर, उभारकर, उनकी गर्दन से गुलामी का जुआ उतारकर, उनका एक स्वाधीन राष्ट्र किसने बनाया ? गाधीजी ने। राष्ट्रीयता यानी कौमियत के इस कोमल और नाजुक पौधे को सचाई, शान्ति और प्यार के अमृत से सीचकर पनपने और बढ़ने की राह किसने

दिखाई ? गांधीजी ने। इसलिए वह भारतीय राष्ट्र या कौम के पैदा करनेवाले, पालनेवाले, राष्ट्रपिता या बापू कहलाते है।

2 अक्टूबर, 1869 को सौराष्ट्र के राजकोट शहर मे करमचद गांधी के यहां एक लडका पैदा हुआ, जिसका नाम मोहनदास रखा गया। करमचद पोरबन्दर की छोटी-सी रियासत के दीवान थे। सचाई, ईमानदारी और नेकी मे उनका बड़ा नाम था। उनकी पत्नी पुतली बाई बड़ी धार्मिक और नेम-धर्म से चलनेवाली स्त्री थी। मोहनदास गाधी मे मा-बाप दोनो के अच्छे गुण इकट्ठे हो गए। वह मा, बाप और गुरु का आदर करते, उनका कहा मानते, पढने लिखने मे जी लगाते और जो कुछ अपना कर्त्तव्य समझते, उसे पूरा करने मे कुछ भी उठा न रखते। उनसे कोई भूल हो जाती तो उसको सचाई से मान लेते, उसकी सजा चुपचाप भुगत लेते और आगे के लिए कान पकड लेते। ये बाते बचपन मे साधारण सीधी-सादी जान पडती थी, लेकिन इन्ही का वर्षो तक पालन करने से उनमे एक महापुरुष, महात्मा के गुण आ गए—उसी तरह जैसे मामूली, सीधी-सादी लकीरो से धीरे-धीरे एक सुडौल, सुन्दर और अच्छा चित्र बन जाता है।

गाधीजी ने 1888 मे राजकोट के हाई स्कूल से मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास कर ली। उनके पिता कुछ दिन पहले स्वर्ग सिधार चुके थे। बड़े भाई अब घर की देखभाल करते थे। उन्होने मोहनदास को कानून पढने के लिए लन्दन भेजने का विचार किया। मोढी बनियों का समुद्र पार जाना अनोखी बात थी, इसलिए गाधीजी की बिरादरी ने उनको जाति से बाहर करने की धमकी दी। पर वह जिस बात को ठीक समझते थे, उसे करने से बिरादरी क्या सारी दुनिया की धमकी भी उनको नही रोक सकती थी। उन्हे लन्दन जाने से कोई न रोक सका। हा, जाते वक्त उन्होने अपनी मां को यह वचन दिया कि कभी शराब न पिएगे, गोश्त न खाएगे और किसी औरत को बुरी नजर से न देखेंगे। इस वचन को उन्होने मर्दो की तरह निभाया।

लन्दन मे गाधीजी तीन साल रहे। पहले उन्होने लन्दन यूनिवर्सिटी की मैट्रिकुलेशन की परीक्षा पास की। उसके बाद कानून पढकर इनर टेम्पल से बैरिस्टरी का डिप्लोमा (प्रमाणपत्र) लिया।

विलायत की हवा का पहले-पहल उन पर वह रंग चढा कि ठाटवाट मे अंग्रेज साहवो की नकल करने लगे। परन्तु थोडे ही दिन वाद उनके दिल नें अन्दर से कहा कि बड़े भाई की गाढी कमाई का पैसा फूकना वड़ी निठुराई है। वह कम खर्च का सादा जीवन, जैसा कि एक विद्यार्थी का होना चाहिए, बिताने लगे, और तन की जगह मन को संवारने की कोशिश करने लगे।

1891 मे जव गाधीजी वम्बई पहुचे, तो मालूम हुआ कि उनकी माता का भी देहान्त हो चुका था। पिता पहले ही स्वर्गवासी हो चुके थे। बडे भाई का वोझ अव गाधीजी को वटाना पडा। वाईस साल के दुवले-पतले नौजवान को देखकर लोग कहते होगे कि यह इस भार को कैसे उठाएगा? पर पक्के विश्वास और साहस ने कमजोर कधों मे इतना वल पैदा कर दिया कि वह एक परिवार क्या, सारे देश का वोझ उठाने को काफी था।

थोड़े दिन राजकोट मे वकालत करने के वाद गाधीजी एक मुकदमे की पैरवी करनें नेटाल (दक्षिणी अफ्रीका) चले गए। वह मुकदमा दो मुसलमानो मे चल रहा था और दोनो तरफ से रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा था। गाधीजी ने दोनो को समझा-वुझा कर पचायत से फैसला करा दिया। साल भर में ही गाधीजी ने सचाई के जादू और प्रेम की मोहिनी से नेटाल और ट्रासवाल के सव हिन्दुस्तानियो के दिलो को मोह लिया। क्या सेठ, क्या वावू, क्या मजदूर, सव उनको गाधी-भाई कहने लगे। उन लोगो ने गाधीजी को प्रेम के बन्धन मे बाध कर रोक लिया। वे हिन्दुस्तान आकर बाल-वच्चो को ले गए और वीस वरस तक दक्षिणी अफ्रीका में रहे। वीच में केवल दो वार हिन्दुस्तान और दो वार इग्लैण्ड गए।

आप सोचते होगे, गाधीजी देश छोड कर विदेश में क्यो रहने लगे? बात यह है कि उन्होने दक्षिणी अफ्रीका मे यूरोपियनो को हिन्दुस्तानियो के साथ ऐसा अपमान का वर्ताव करते देखा कि उनकी आत्मा काप उठी। सारे हिन्दुस्तानी कुली कहलाते थे। उनको यूरोपियनो के साथ होटल में ठहरने और रेल या घोडा गाडी में साथ बैठने न दिया जाता था। कहीं-कहीं तो जिन सड़को पर यूरोपियन टहलते थे उन पर

चलना और सूरज डूबने के बाद घर से निकलना तक मना था। खुद गाधीजी को एक बार रेल के पहले दर्जे के डिब्बे से निकाल दिया गया और कई बार तरह-तरह से उनका अपमान किया गया। पैसे वाले हिन्दुस्तानियो को कभी नागरिको के कुछ साधारण अधिकार मिल जाते और कभी फिर छीन लिए जाते। गरीब मजदूरो को जो अपमान और अत्याचार सहने पडते, उनकी तो कोई गिनती ही न थी। गाधीजी ने ठान लिया कि उस अधेर नगरी से भागने के बदले वही पैर जमाकर उन अत्याचारो का सामना करेगे।

देखने की चीज यह थी कि उन्होने सामना कैसे किया। गाधीजी ने देखा कि दक्षिणी अफीका का हिन्दुस्तानी समाज अपने देश हिन्दुस्तान का एक छोटा-सा नमूना था। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सब अपने को अलग-अलग जातिया समझते थे। इससे उनकी ताकत घट गई थी और उनमे इतनी हिम्मत नही रही कि अत्याचार और अन्याय का सामना करने के लिए खडे हो सके। इसलिए पहले 1894 मे नेटाल इडियन काग्रेस बना कर उन्होने हिन्दुस्तानियो मे एकता की भावना पैदा की और उनका संगठन किया। फिर 'इडियन ओपिनियन' (भारतीय सम्मति) नाम का अखबार निकाल कर उसके द्वारा यूरोपियनो की सरकार और यूरोपियन लोगो से न्याय की अपील करते रहे। अत मे सत्याग्रह के निराले हथियार से उन्होने सरकार के खिलाफ लडाई छेड दी।

सत्याग्रह का अर्थ है—"सचाई पर अड जाना"। इसके लिए हर तरह का इतना दुख उठाना कि अत्याचारी के दिल मे न्याय, दया और प्रेम जाग उठे। गाधीजी ने एक आश्रम बनाया जिसमे सत्याग्रही अपने आप को इस लडाई के लिए तैयार करते थे। इन लोगो को साथ लेकर गाधीजी उन कानूनो को तोडते, जो न्याय के विरुद्ध थे। हसी-खुशी जेल जाते और सब तरह के कष्ट सहते। सात साल तक अहिंसा की यह लडाई लडने के बाद 1914 मे सत्याग्रहियो की जीत हुई और दक्षिणी अफीका की सरकार ने इण्डियन रिलीफ ऐक्ट पास करके हिन्दुस्तानियो की बहुत-सी मागें पूरी कर दी। अब वे दक्षिणी अफीका मे कुछ मान और चैन से रह सकते थे।

जिस काम का बीड़ा उठाया था, उसको पूरा करके गांधीजी इग्लैण्ड होते हुए जनवरी, 1915 ई० मे हिन्दुस्तान आए। यहा भी वह चाहते थे कि दक्षिणी अफ्रीका के ढग पर काम करके भारत माता को गुलामी से छुडाए। अपने अनपढ, निर्धन, निराश भाइयो को इस तरह ऊचा उठाएं कि वह गरीबी और अज्ञान से छुटकारा पाकर अपने मन पर और अपने देश पर आप राज कर सके।

अब गाधीजी को अपने नए हथियार, सत्याग्रह से तीन मोर्चो पर अहिंसा की लड़ाई लडनी थी ; एक तरफ विदेशियो की गुलामी से, दूसरी तरफ गरीबी और अज्ञान से, और तीसरी तरफ आपस के ऊच-नीच, छूतछात और साम्प्रदायिकता के भेदभाव से। उन्होने दक्षिणी अफ्रीका की तरह हिन्दुस्तान में भी इन लडाइयों के लिए सिपाही तैयार करने का बीडा उठाया और इसके लिए सत्याग्रह आश्रम खोला। यह आश्रम 1915 से 1933 तक अहमदाबाद के पास साबरमती में रहा और तीन साल बन्द रहने के बाद 1936 मे वर्धा के पास सेवाग्राम में आ गया।

अब अहिंसा की लडाई लडने के लिए गाधीजी के पास दो ताकते थी। एक उन रचनात्मक कार्यकर्ताओ की फौज जो आश्रम में हमेशा रहते या कभी-कभी आकर रहा करते, और दूसरी काग्रेस। यह सस्था 1885 में कुछ देशभक्तो ने बनाई थी, पर अब तक उसमे बस थोडे-से पढे-लिखे पैसे वाले लोग ही थे, और सरकार से देश के लिए कुछ छोटी-छोटी मागे किया करते थे। उस समय तक देश मे 'स्वराज्य' की माग करनेवालो मे लोकमान्य बाल गगाधर तिलक सबसे आगे थे। गाधीजी ने आगे चलकर जिस राष्ट्रीय आन्दोलन की राह दिखाई उसकी तैयारी में लोकमान्य तिलक का हाथ था। श्री तिलक के बाद गाधीजी ने जनता को एक तरफ आजादी की लडाई के लिए तैयार किया और दूसरी तरफ कांग्रेस को बडे पैमाने पर मजबूत किया। गांधीजी ने उसका दरवाजा किसानो, मजदूरो के लिए खोल दिया, जिससे उसकी ताकत कई गुना बढ गई और उसमे इतनी हिम्मत पैदा हो गई कि वह पूर्ण स्वराज्य लेने की कोशिश करे।

गाधीजी का सारा जीवन सत्याग्रह का एक लम्बा सग्राम था। जितनी लडाइया लडी गई, वे सब इसलिए कि अत्याचार, अन्याय और अधर्म करनेवालो को,

चाहे वे देशी हो या विदेशी, कड़ी चोट लगे। शरीर की चोट नहीं, दिल की चोट जो मन की सारी भावना बदल देती है—न्याय, दया और प्रेम के सोए हुए भावों को जगा देती है। गांधीजी जिन साधनों से काम लेते थे, उनमें पहला नरमी से, धीरज से समझाना-बुझाना था, जिसके लिए उन्होंने पहले 'यंग इण्डिया', फिर 'हरिजन' और 'हरिजन-सेवक' नाम के पत्र अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी और उर्दू में निकाले। जब समझाने-बुझाने से काम न चलता, तो वह सत्याग्रह का आन्दोलन शुरू करते। इसमें सत्याग्रही ऐसे कानून को, जिसमें खुला हुआ अन्याय या अत्याचार हो, तोड़ते और उसके बदले हँसते-हँसते जेल जाते, लाठिया और कभी-कभी गोलियां खाते, पर दूसरो पर हाथ न उठाते और उनको बुरा-भला भी न कहते। जब ऐसा मौका आ जाता कि खुद गांधीजी या उनके साथियो के मन मे धर्मसंकट होता, या अंधेरे में उनको अपना रास्ता न सूझता, तो गांधीजी सात दिन, चौदह दिन, इक्कीस दिन का व्रत या मरण-व्रत रख लेते। इससे उनको प्रकाश और शक्ति मिलती थी। दूसरो का दिल भी नर्म हो जाता था।

गांधीजी ने आजादी के लिए सत्याग्रह के कई बड़े-बड़े आन्दोलन चलाए। अफ्रीका से आने के बाद महात्मा गांधी ने अपना सबसे पहला सत्याग्रह आन्दोलन

चम्पारन मे किया। इस सत्याग्रह ने महात्मा गांधी की इज्जत को काफी बढा दिया। अमृतसर के जलियावाले कांड से देश गुलामी की जजीरें तोड़ने के लिए बेताब हो उठा। गाधीजी ने आगे चलकर असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया जिसमें विदेशी सरकार की ओर से दिए गए खितावो, विदेशी कपड़ो और विदेशियो के कानून पर चलने वालो अदालतो आदि का 'बायकाट' किया गया। जगह-जगह काग्रेस कमेटिया बनाई गई और नए लोगो को उनमे भर्ती किया गया। अग्रेज हुकूमत ने काग्रेस तथा गाधीजी द्वारा चलाए जाने वाले इस आन्दोलन को दबाना चाहा। किन्तु बजाय दबने के आग भडकती गई। सविनय अवज्ञा आन्दोलन में कानून तोडे गए, टैक्स देना बद किया गया और सन् 1921 मे हजारो आदमी-औरतो को जेल जाना पडा। लड़ाई चलती रही, कई आन्दोलन चलाए गए और देश आजादी की राह पर बढता रहा। यहां तक कि 15 अगस्त, 1947 को अग्रेजो ने देश की हुकूमत जवाहरलाल नेहरू की राष्ट्रीय सरकार को सौंप दी। सारे देश मे आजादी का झडा लहराने लगा।

गरीबी को दूर करने के लिए गाधीजी ने चरखा सघ और ग्राम उद्योग सघ बनाए जिससे लोगों को, खास कर गाव वालो को, रोजी देने वाले धन्धे सिखाए जाए। अज्ञान को मिटाने के लिए हिन्दुस्तानी तालीमी सघ बनाया, जो बुनियादी शिक्षा या ऐसी तालीम दे जिससे बच्चो के अन्दर सारी अच्छी शक्तिया उभर आए और वे ऐसा समाज बनाने के लिए तैयार हो जाए जिसमें एक दूसरे को लूटे नही, बल्कि सहायता दे। ऊंच-नीच, सवर्ण-अछूत का भेद दूर करने के लिए गाधीजी ने हरिजन सेवक सघ बनाया। हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी इत्यादि का भेदभाव दूर करने मे तो उन्होने अपना सारा जीवन बिता दिया।

हिन्दू-मुसलमान एकता के लिए तो गाधीजी ने जान तक दे दी। भारत की आजादी के समय जब देश दो हिस्सो मे बटा, तो भारत

और पाकिस्तान दोनो ही देशो में कुछ लोगो ने आदमी-आदमी के बीच नफरत की आग भडकाई। हिन्दू-मुसलमान एकता के लिए गाधीजी ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर नोआखाली की यात्रा की। उनका वहाँ पहुँचना था कि जनता में फैली आपसी नफरत की आग ठडी पड गई। नोआखाली से लौटकर महात्मा गाधी दिल्ली आए किन्तु कुछ दिन वाद ही एक गुमराह व्यक्ति ने देश के बापू की हत्या करके सदा-सदा के लिए अपने नाम पर कलक लगा लिया। ईसा मसीह की तरह महात्मा गाधी की यह महान् कुरवानी सचाई, सेवा और राष्ट्रीय एकता की एक अमर यादगार है।
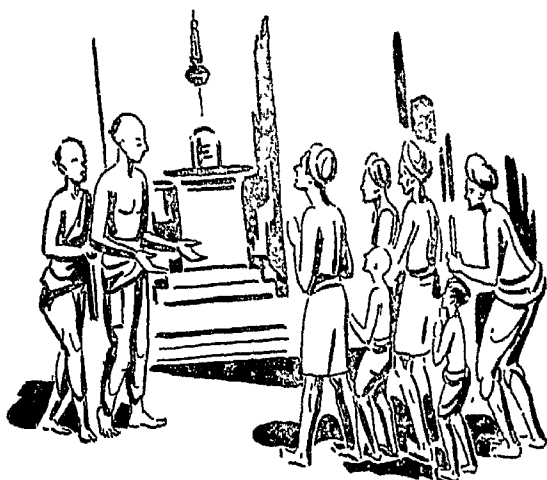
गाधीजी ने जिन्दगी का जो रास्ता अपने देशवालो को और सारी दुनिया के लोगो को वताया, हर एक धर्म ने अपने-अपने ढग से सचाई और मुक्ति का वही रास्ता वताया है। हा, सैकडो साल से किसी ने इस रास्ते पर चल कर नही दिखाया था। यह काम गाधीजी ने कर दिखाया।

इस राह पर चलने के उपाय ये है :—

बुरा न सुनो बुरा न देखो बुरा न कहो

1. अहिसा—कोई काम इस नीयत से न करना कि किसी को दु ख पहुचे। हर काम में दया और प्रेम की सच्ची भावना रखना।

2 सत्य—सदा सच्ची बात कहना, नर्म और मीठे शब्दो मे सदा सचाई और न्याय का साथ देना।

3 किसी की चोरी न करना—किसी के माल या उसकी मेहनत से अनुचित लाभ न उठाना।

4 उन चीजो मे से जो जीने के लिए जरूरी है, किसी चीज पर कब्जा या मिल्कियत न रखना।

5 ब्रह्मचर्य—वासनाओ को वश मे रखना।

6 किसी से न डरना।

7. अपनी रोजी कमाने के लिए हाथ-पाव से मेहनत करना।

8. सब धर्मो की बराबर इज्जत करना, साम्प्रदायिकता का भेदभाव मिटाना।

9 छूतछात और ऊच-नीच का भेद न रखना और समाज से इस रोग को दूर करना।

10 स्वदेशी वस्तुओ का प्रयोग करना और सादगी से रहना।

गाधीजी की मिसाल और उनकी शिक्षा ने भारत मे अभी तक थोडे-से लोगो

के दिलों में एक छोटे-से पौधे के रूप में जड पकडी है। दूसरे देशों में इसका बीज पहुंच चुका है, पर वह अभी यह देख रहे हैं कि पौधा खुद अपनी जमीन में कहां तक पनपता और फलता-फूलता है। अब यह हमारा काम है कि उसे श्रद्धा और मेहनत के जल से सींचकर एक छायादार पेड बना दें, जिससे दूसरे देशवालों को अपने यहां यह पौधा लगाने की प्रेरणा मिले और दुनिया अहिंसा और सत्य का हरा-भरा बाग बन जाए।
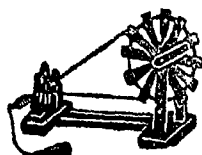
पुराणों का महत्व

किसी भी धर्म को समझने में उसकी गाथाओ या कहानियों से बड़ी सहायता मिलती है। उन कहानियो या गाथाओं को इतिहास भले ही न माना जाए, पर उनमे अक्सर ऐसा मतलब छिपा रहता है जिसकी गुत्थी सुलझाने से धर्म की बहुत-सी गुत्थिया अपने आप सुलझ जाती है।

प्राय सभी धर्मो मे ऐसी गाथाएं होती हैं, और ससार के पुराने धर्मो मे तो उनकी भरमार है। गाथाओ के भीतर से किसी भी धर्म की-महिमा झलक जाती है और उस धर्म का पूरा रूप हमारे सामने आ जाता है।

हर कहानी गाथा नही कही जा सकती। जिन कहानियो का प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के साथ सम्बन्ध हो, उन्हे 'गाथा' के नाम से पुकारा जाता है। गाथाए

परम्परा से चली आती है और राष्ट्र के चरित्र को ऊंचा उठाती हैं। उन्हें प्रेम और श्रद्धा के साथ सुना या गाया जाता है।

हिन्दू धर्म बहुत पुराना धर्म है। उसमें गाथाओं की कोई गिनती नहीं। उन गाथाओं का भंडार पुराण है, जिनकी संख्या 18 है। वे सब संस्कृत भाषा में हैं और श्लोकों में लिखे गए हैं। किन्तु हिन्दू धर्म की कुछ शाखाएं ऐसी भी हैं, जो पुराणों को नहीं मानतीं। पुराणों को माननेवाले हिन्दू आम तौर पर सनातनधर्मी कहलाते हैं।

पौराणिक गाथाएं अधिकतर देवी-देवताओं की कहानियां हैं। उनमें ऐसे ऋषि-मुनियों की भी कहानियां हैं जो जिन्दगी भर बड़ी लगन के साथ सचाई, तप और त्याग के ऊंचे आदर्श पर चले।

पुराणों में ब्रह्मा, विष्णु और शिव एक ही ईश्वर के तीन स्वरूप माने गए हैं।

ब्रह्मा के स्वरूप में ईश्वर संसार की रचना करता है और उसकी सब चीजो को रूप देता है। यह ससार को चारों वेदो का ज्ञान भी अपने उसी रूप में देता है। इसलिए ब्रह्मा के चार मुख माने जाते हैं। उन्ही की कृपा से इस ससार में साहित्य, सगीत और कला का प्रकाश हुआ। ब्रह्मा की शक्ति सरस्वती विद्या की देवी मानी जाती हैं। उनके एक हाथ में वीणा और दूसरे में पुस्तक रहती है। उनका रग सफेद कमल की तरह है। उनका पूरा पहनावा भी सफेद है। सरस्वती की सवारी हंस है, जो सफेद रंग का होता है। कहते हैं कि हस का काम मोती चुगना है। वह मिले हुए दूध और पानी को भी अलग-अलग कर देता है। जिस मनुष्य के सिर पर सरस्वती विराजे उसमें भी हंस जैसा ज्ञान आ जाता है।

ब्रह्मा के रूप में जो भगवान इस संसार की रचना करते हैं, विष्णु रूप में वही उसका पालन करते है। संसार सत्य और धर्म या नेकी पर टिका है। अगर आज दुनिया के लोग एक दूसरे पर विश्वास करना छोड़ दें, तो दुनिया का सारा काम रुक जाए। इसलिए विष्णु का दूसरा नाम सत्य है। विष्णु भगवान के चार हाथ माने जाते है। एक मे शख, दूसरे में चक्र, तीसरे में गदा और चौथे में कमल का फूल रहता है। शख ज्ञान का, चक्र दुनिया के दाव-पेचो का, गदा साहस और शक्ति का और कमल शान्ति का चिह्न है। पुराणो के अनुसार ससार की उन्नति का भेद इन्ही चार मे छिपा है। विष्णु भगवान की शक्ति 'लक्ष्मी' धन की देवी है।

पुराणो का कहना है कि विष्णु भगवान समय-समय पर इस ससार मे अवतार लेते रहते है। ससार की रक्षा का भार उन्ही पर है। श्री रामचन्द्र जी और श्री कृष्ण जी उन्ही के अवतार माने जाते हैं।

भगवान अपने तीसरे स्वरूप मे शिव या महादेव है। हिन्दू धर्म के अनुसार दुनिया मे वारी-वारी से चार युग आते है। सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग।

चारो युगो की अपनी-अपनी अवधि है। चारों की अवधि पूरी हो जाने पर प्रलय होता है। प्रलय मे सारे संसार का नाश हो जाता है, जिससे उन्नति का अगला युग आरम्भ हो सके। प्रलय का समय आने पर भगवान अपने शिव रूप मे उल्लास मे आकर नाचते है। उस नाच को ताडव नृत्य कहते हैं। ताडव नृत्य होते ही संसार का सर्वनाश हो जाता है। कही कुछ वाकी नही रहता। शिव का काम यही पूरा नही हो जाता। उसके वाद वह समाधि मे चले जाते है और नए युग के लिए सकल्प करते है।

शिव की शक्ति का नाम पार्वती है। वह सदा शिव के साथ रहती है। दुर्गा, भवानी, माता, ये सब पार्वती ही के रूप है। वह शक्ति की देवी है। उनकी सवारी शेर है, जो शक्ति की निशानी है। गणेश शिव जी के पुत्र है। वह विघ्न-बाधा दूर करते है। इसलिए कोई भी काम आरम्भ करने से पहले गणेश जी पूजे जाते है।

मोटे तौर पर पौराणिक गाथाओं का आधार यही है, पर इसके साथ पुराणों की एक बात और भी समझ लेनी जरूरी है। उनमें बताया गया है कि हमारी दुनिया की तरह देवताओ का भी एक ससार है। उसका नाम स्वर्ग है। देवता वही रहते है। जिस तरह हमारे ससार को रक्षा का भार विष्णु भगवान पर है, उसी तरह स्वर्ग की रक्षा का भार इन्द्र पर है। इन्द्र देवताओ के राजा है, इसीलिए उन्हे देवराज इन्द्र के नाम से पुकारा जाता है।

पौराणिक गाथाओ मे जगह-जगह इस बात का वर्णन मिलता है कि विष्णु और इन्द्र दोनो एक-दूसरे की सहायता करते है। इस दुनिया में रहनेवाले ऋषि-मुनि अपनी तपस्या के बल से स्वर्ग में स्थान पाने के अधिकारी हो जाते है। अगर कोई मनुष्य 100 अश्वमेध यज्ञ ठीक से पूरे करले, तो उसे देवराज इन्द्र की जगह भी मिल सकती है। परन्तु यह पद पाने के लिए उसे बड़ा कठिन परिश्रम करना पड़ता है। इन्द्र उसकी तरह-तरह से परीक्षा लेते हैं। पुराणो मे इस विषय की अनेक मनोरंजक और शिक्षा देने वाली कथाएं मिलती है।

पौराणिक गाथाएं एक सागर के समान है। उनके भीतर के सच्चे मोती उसी के हाथ लग सकते है, जो उनमे गहरा गोता लगाए। पुराणों मे मिलने वाली शिक्षा का निचोड इस प्रकार है .

अठारहो पुराणो मे उनके रचनेवाले व्यास मुनि दो बातें बतलाते है, दूसरे की भलाई करना पुण्य है और किसी को कष्ट देना पाप।

देवी देवताओं की कथाएं

दो गाथाएं

(1)

सावित्री-सत्यवान

मद्र देश मे अश्वपति नाम के एक राजा थे। वह बडे धर्मात्मा थे। प्रजा उन्हे बहुत चाहती थी। राजा को और सब सुख थे, पर एक दुःख उन्हे बराबर सताया करता था। उनके कोई सन्तान न थी। सन्तान के लिए वह तपस्या करने लगे। जब तप करते-करते अट्ठारह साल हो गए तो सावित्री देवी ने उनको दर्शन दिया और वरदान मागने को कहा।

राजा ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की :—"माता, मै पुत्र चाहता हू जिससे मेरा वश चल सके।"

देवी ने राजा से कहा—"पहले जन्म मे तुमने ऐसे बुरे काम किए है कि तुम्हे पुत्र नही मिल सकता। हा, तुम्हारे ऐसी नेक लडकी होगी जो वश का मान बढाएगी। उसी से तुम्हारे सब मनोरथ पूरे होगे।"

समय पर राजा के एक कन्या हुई। वह लड़की क्या थी, मानो लक्ष्मी। रूप, गुण और सुन्दरता मे कोई भी लडकी उसकी बराबरी की न थी। उसका नाम सावित्री रखा गया। शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान सावित्री बढने लगी।

लडकी व्याह के योग्य भी हो गई। उन दिनो स्वयंवर का चलन था। लड़की खुद अपना पति चुनती थी। राजा ने सावित्री को वर खोजने की आज्ञा दी। सावित्री बूढे मन्त्रियो को साथ लेकर चल पड़ी। खोजते-खोजते वह शाल्व देश के राजा द्युमत्सेन के राज्य मे पहुची। द्युमत्सेन अन्धे हो गए थे और शत्रुओ ने उनका राज्य छीन लिया था। वह जगल में आश्रम बनाकर रहते थे। सावित्री को उनका पुत्र सत्यवान पसन्द आया। उसने उसी को अपना पति चुन लिया।

अपने काम मे सफल होकर सावित्री जब घर लौटी, तो देखती है कि राज-सभा मे नारद महाराज विराजमान हैं। सावित्री ने नारदजी और अपने पिता को प्रणाम किया और सब समाचार कह सुनाया। राजा ने नारदजी से पूछा कि "सत्यवान कैसा लड़का है ?" नारदजी ने कहा, "सत्यवान मे सब गुण हैं। वह सदा सच बोलता है। बहुत ही सीधा है। छल और कपट तो उसे छू भी नही पाए। अपनी बात पर वह सदा अटल रहता है। पर एक बात है—वह आज से पूरे एक साल बाद मर जाएगा।"

नारदजी की बात सुनते ही राजा सन्न रह गए। उन्होने अपनी पुत्री को समझाया कि वह कोई और वर चुन ले। पर सावित्री राजी न हुई। उसने नम्रता

से कहा :—"पिताजी, राजा एक ही बार आज्ञा देते है और बुद्धिमान एक ही बार प्रतिज्ञा करते है। मैने जिसे एक बार चुन लिया, अब वही मेरा पति है, चाहे वह थोड़े दिन जिए या अधिक दिन। अब मैं अपनी बात से टल नही सकती। आप और नारदजी मुझे आशीर्वाद दीजिए।"

सावित्री की इस बात से नारद जी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने राजा से कहा—"आपकी पुत्री की बुद्धि डावाडोल नही होती, इसलिए उसका मंगल ही होगा।"

जब राजा ने देखा कि सावित्री अपनी बात पर अटल है, तो उन्होने सत्यवान के साथ उसके विवाह का प्रबन्ध किया। आश्रम में ही सावित्री का विवाह हुआ और वह बनवासियों की तरह सीधे-सादे ढंग से रहने लगी। वह घर का सब काम-काज करती और मन लगाकर सास-ससुर की सेवा करती। उसके स्वभाव और व्यवहार से घर और बाहर वाले सब प्रसन्न थे। सत्यवान तो उसे पाकर अपने को धन्य मानता था।

समय बीतता जा रहा था, पर नारदजी ने जो बात कही थी, सावित्री उसे भूली न थी। वह बराबर चौकन्नी रहती। जब उस अशुभ घड़ी को चार दिन रह गए, तो सावित्री ने एक व्रत रखा। तीन दिन उसने बिना कुछ खाए पिए संयम से बिताए। चौथे दिन जब सत्यवान कन्द-मूल-फल लाने के लिए वन जाने लगा, तो सावित्री भी उसके साथ गई। सत्यवान ने पहले कुछ फल तोडे। फिर लकड़ियां काटने के लिए पेड पर चढा। जब वह लकड़िया काट रहा था, तभी उसके सिर में बडे जोर का दर्द हुआ। वह नीचे उतर आया और सावित्री की जाघ पर सिर रखकर लेट गया।

इतने मे सावित्री ने देखा, कोई सूर्य के समान तेज वाला, लाल रंग के कपडे पहने, सिर पर मुकुट रखे और हाथ में गदा-फन्दा लिए बढा चला आ रहा है। सावित्री ने पति का सिर धरती पर रख दिया और आने वाले को प्रणाम किया। वह तो साक्षात यमराज थे और सत्यवान की आत्मा को लेने आए थे।

जब यमराज सत्यवान की आत्मा को लेकर चलने लगे, तो सावित्री भी उनके साथ चल पडी। यमराज ने उसे लौटने को कहा, तो उसने उत्तर दिया—पतिव्रता स्त्री सदा अपने पति के साथ रहती है। इसलिए आप जहा मेरे पति को लिए जा रहे है, मुझे भी वही जाना चाहिए। विद्वानो का कहना है कि सज्जन पुरुषों के साथ सात पग चलने से मित्रता हो जाती है। उस मित्रता के नाते मै आपसे नम्रता के साथ पूछती हू—क्या मैंने और मेरे पति ने गृहस्थ आश्रम के नियमो को पालने मे कोई भूल-चूक की है?"

यमराज सावित्री की बातो से बहुत सन्तुष्ट हुए। उन्होने कहा, "सत्यवान के प्राणो को छोडकर तुम और जो चाहो, माग लो।"

सावित्री ने कहा—"मेरे ससुर अन्धे हैं और दुबले हो गए है। मैं चाहती हूं कि वह फिर देखने लगे और उनका शरीर भी बलवान हो जाए।"

यमराज ने कहा—"ऐसा ही होगा, तू थक गई है, इसलिए लौट जा।"

सावित्री ने कहा—"यह सब चाहते हैं कि कुछ देर सज्जन का साथ रहे। उनके साथ रहना कभी बेकार नही जाता।"

यमराज को सावित्री की यह बात बहुत अच्छी लगी और उन्होने सत्यवान के जीवन के सिवा और कोई भी वर मागने को कहा।

सावित्री ने दूसरा वर यह मागा कि मेरे ससुर को उनका राज्य फिर मिल जाए।

यमराज "ऐसा ही होगा" कह कर आगे बढ़े, तो देखते है कि सावित्री अब भी पीछे-पीछे चली आ रही है। यमराज रुके और बोले—"तू लौटी नही। अब क्यो हमारे पीछे चली आ रही है?"

सावित्री ने नम्रता के साथ कहा—"यमराज, आप सब जीवो को नियम के भीतर रखते है और जो जैसा करता है, उसे उसके काम के अनुसार दण्ड देते है। इसीलिए आपका नाम यम है। मै आपसे विनय के साथ पूछती हू, क्या यह सज्जनो का धर्म नही है कि वे किसी से वैर न रखे और सब पर दया करे ? अगर यह ठीक है, तो न जाने आप क्यो मुझे लौटने को कहते है। मुझ पर तो आपको दया आनी चाहिए।"

यमराज सावित्री की ऐसी चतुरता भरी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और सत्यवान को जिलाने के सिवा और कोई वर मागने को कहा।

सावित्री ने इस बार अपने पिता का वश बढाने वाले सौ पुत्र मागे। यमराज ने यह बात भी मान ली और कहा—"अब तुम लौट जाओ। बहुत दूर आ गई हो।"

सावित्री बोली—"भगवन्, मेरे लिए दूरी और पास मे अन्तर क्या ? मेरा घर तो वही है जहां मेरे पतिदेव हो। आप सूर्य के प्रतापी पुत्र है। शत्रु और मित्र में पक्षपात नही करते। सब के साथ समान व्यवहार करते हैं। इसीलिए सारी प्रजा मर्यादा के भीतर रहकर अपने-अपने धर्म का पालन करती है और आप धर्मराज कहलाते है। इसके सिवा, ससार मे सब लोग जितना विश्वास अपने आप पर नही करते, उतना नेक लोगो पर करते है। उनसे अपने मन की बात कहते है और उनकी इच्छा पूरी होती है।"

सावित्री की इन ज्ञान की बातों का यमराज पर बहुत प्रभाव पडा। उन्होने कहा—"सत्यवान के प्राणो को छोड़कर तुम और जो चाहो माग लो और अपने आश्रम को लौट जाओ।"

ससुर और पिता के कुल की भलाई तो हो चुकी थी। सावित्री का ध्यान अपनी भलाई की ओर गया। पतिव्रता स्त्री तो अपने पति के मगल मे ही अपनी भलाई देखती है। उसने खूब सोच-विचार कर चौथा वर मागा—"महाराज, मैं चाहती हू कि मेरे सौ बलवान पुत्र हो और उनसे मेरा वश बढे।"

यमराज ने कहा "ऐसा ही होगा" और आगे बढे। सावित्री ने विनय की—"सज्जन पुरुष जो कुछ कहते है, उसे पूरा करते है। फिर प्रसन्नता, धन और मान ये तीनो चीजे सज्जनो से ही मिलती है।"

यमराज रुके और कहा—"अब तू क्या चाहती है, जल्दी बता।"

सावित्री यमराज के चरणो मे झुक गई। उसका गला भर आया। वह इतना ही कह सकी—"अभी आपने कहा कि मेरे सौ पुत्र हो, परन्तु यदि मेरे पति जीवित न हुए, तो यह बात पूरी नही हो सकती। पतिव्रता स्त्री अपने पति के सिवा किसी दूसरे पुरुष की ओर देखती भी नही।"

यह सुनते ही यमराज ने सत्यवान के प्राणो को छोड दिया और आशीर्वाद दिया कि उसकी 400 वर्ष की आयु हो।

यमराज इतना कहकर अन्तर्धान हो गए और सावित्री लौटकर वहा पहुंची जहा उसका पति पडा था। सावित्री ने ज्यो ही सत्यवान को छुआ, वह जाग पड़ा।

रात हो गई थी। माता-पिता सत्यवान के न लौटने से बहुत चिन्तित थे। पास-पड़ोस के मुनि उन्हे समझा-बुझा रहे थे। इतने मे सावित्री और सत्यवान आ पहुचे। उनके पहुचते ही आश्रम मे खुशी छा गई।

मृत्यु पर प्रेम की जीत की यह अनोखी गाथा है। आज भी भारत की नारियां यह कहानी बड़े प्रेम से कहती और सुनती है और वट सावित्री की पूजा करके अपने पति का मगल मनाती है।

(2)

भीष्म प्रतिज्ञा

हस्तिनापुर मे शान्तनु नाम के बडे प्रतापी और धर्मात्मा राजा थे। उनके एक पुत्र हुआ। उसका नाम देवव्रत रखा गया। देवव्रत ने कुछ साल तक वशिष्ठ और परशुराम से वेद, वेदाग और धनुप चलाने की विद्या सीखी। जव उसकी पढाई पूरी हो गई, तो राजा ने उसे युवराज वनाया। चार साल तक राजा ने उसकी शासन करने की योग्यता देखी। वह देवव्रत को राज्य देने का विचार कर ही रहे थे कि एक ऐसी घटना हुई जिससे देवव्रत ने अपनी इच्छा से राज-पद छोड़ दिया।

एक दिन शान्तनु नदी के किनारे सैर करने गए। वे टहल रहे थे कि हवा के झोके के साथ ऐसी सुगन्ध आई जो राजा का तन-मन गुदगुदा गई। पता लगाने से मालूम हुआ कि वह सुगन्ध मछुओ के राजा की परम सुन्दरी वेटी सत्यवती के शरीर की थी। राजा सत्यवती के पिता के पास गए और उससे प्रार्थना की कि वह अपनी

पुत्री का विवाह् उनसे कर दे। मछुओ के राजा ने कहा—मैं अपनी वेटी आपको दे सकता हू। परन्तु शर्त यह है कि आपके बाद मेरा धेवता ही राजा वनाया जाए।

राजा ने शर्त न मानी और लौट आए। पर सत्यवती उनके मन मे वस गई थी। उनकी यह दशा हो गई कि न खाना-पीना अच्छा लगता, न रात मे नींद आती। दिन पर दिन सत्यवती के प्रेम मे घुलते जाते। देवव्रत पिता की यह दशा देख बहुत चिन्तित हुए। उन्होने पिता से कारण पूछा, परन्तु पिता ने कुछ न वताया। अन्त मे जब बूढे मत्री से सारा हाल मालूम हुआ, तो देवव्रत कुछ वडे बूढो को साथ ले मछुओ के राजा की सभा मे पहुचे और अपने पिता के साथ सत्यवती का विवाह् कर देने की प्रार्थना की।

मछुओ के राजा ने कहा—सम्बन्ध तो ऐसा है कि मै क्या इन्द्र भी आपके घराने मे लडकी देना पसन्द करेंगे। पर यह मैं कभी स्वीकार न करूगा कि मेरा धेवता राजा न बने।

देवव्रत ने कहा—मैं वचन देता हू कि मै राज न लूगा। सत्यवती की कोख से जो लडका होगा, वही राज्य करेगा।

लेकिन बूढे का मन इतने से सन्तुष्ट न हुआ। उसने कहा—माना आप राज न लेंगे, मेरे धेवते को ही दे देंगे। पर आपका लड़का अगर छीन ले, तो ?

सत्यवती के पिता की शका सुनकर देवव्रत नें दोनों हाथ उठाकर कहा—आप चिन्ता न कीजिए। मैं सारी जिन्दगी ब्रह्मचारी रहूगा। यह राज क्या, तीनों लोकों के राज के लिए भी मैं अपनी प्रतिज्ञा से न हटूगा। चाहे सूर्य अपना तेज, चन्द्रमा अपनी शीतलता और धर्मराज अपना धर्म छोड दे, पर देवव्रत अपनी प्रतिज्ञा से न टलेगा।

अब कठिनाई क्या थी ? शान्तनु के साथ सत्यवती का विवाह हो गया। पिता की इच्छा पूरी करने के लिए ऐसी कठोर प्रतिज्ञा करनें के कारण देवव्रत का नाम भीष्म पड गया। समय पर सत्यवती के दो पुत्र हुए—चित्रागद और विचित्र-वीर्य। बडा शान्तनु के बाद राजा बना, पर वह एक युद्ध में मारा गया। तब भीष्म ने छोटे भाई को राजा बनाया। उसका विवाह भी भीष्म ने ही कराया था। अभी विचित्रवीर्य को राज करते सात साल हुए थे कि उसे क्षय रोग हो गया जो उसके प्राण लेकर ही गया। उसके कोई सन्तान न थी।

भीष्म को भाई की मृत्यु से बहुत दुख हुआ और सत्यवती के सामने तो अंधेरा ही अंधेरा था। उसने भीष्म को बुलाकर समझाया—तुम अपनी बात पर डटे रहे। लेकिन अब तो मेरे बेटे रहे नहीं। अब तुम्हारी प्रतिज्ञा बेकार है। वंश को नष्ट होने से बचाने के लिए तुम विचित्रवीर्य की विधवा रानियों से विवाह कर लो। पर भीष्म टस से मस न हुए। उन्होंने कहा—मैंने जो व्रत लिया है, उसे जिन्दगी भर पालूंगा।

भीष्म अपनी प्रतिज्ञा पर सारे जीवन अटल रहे, जो ब्रह्मचारी का जीवन ऋषियों मुनियों के लिए भी कठिन है, उसे भीष्म ने पूरी दृढ़ता से बिताया। गृहस्थी के सुखों की ओर कभी आंख तक न उठाई। इसलिए आज भी जब कोई बहुत कठोर प्रतिज्ञा करता है तो उसका वह काम भीष्म प्रतिज्ञा कहलाता है।

कालिदास

सस्कृत किसी समय इस देश की और आसपास के कुछ और देशो की भाषा थी। आजकल भारत में सस्कृत बोलने और लिखने वालों की सख्या अधिक नही है, पर कभी वह देश के काफी बडे-बडे भागो की राजभाषा थी। इस भाषा में हमे बहुत अच्छा साहित्य मिलता है। कालिदास सस्कृत के सबसे बडे कवि माने जाते हैं, इसीलिए उन्हे "कवि-कुल गुरु" कहा जाता है। कालिदास की गिनती भारत के ही नही, ससार के महाकवियो मे की जाती है।

अभी तक ऐसी चीजे बहुत कम मिली है, जिनसे कालिदास के निजी जीवन पर प्रकाश पड़ सके। इसलिए यह बताना कठिन है कि वह कहा और कब पैदा हुए, उन्होंने अपने जीवन का अधिक समय कहा बिताया, और किस राजा के दरबार में रहे। उनके माता-पिता और दूसरे सगे-सम्बन्धियो के बारे मे भी ठीक-ठीक कुछ नहीं कहा जा सकता।

कालिदास ने अपनी रचनाओ मे अपने निजी विचारों और अनुभवों को दूसरी घटनाओ के साथ इस तरह घुला-मिला दिया है, कि उनमे भी महाकवि के जीवन की रूपरेखा नही बनाई जा सकती। अब तक जो चीजे मिली है उनके आधार पर कहा जाता है कि कालिदास चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के राजकवि थे और उन्होंने अपने जीवन का अधिक भाग उज्जैन मे बिताया। उनके वर्णनो को पढकर यह भी पता चलता है कि वह काश्मीर और हिमालय के दूसरे स्थानो पर खूब घूमे थे और गगा के आसपास के इलाके को भी पूरी तरह जानते थे। कहा जाता है कि कालिदास उनका असली नाम न था। वे काली के उपासक थे, इसलिए उन्हे कालिदास कहा जाता था।

कालिदास की प्रसिद्ध रचनाओ के नाम है: रघुवश, कुमारसम्भव, मेघदूत, मालविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशी और अभिज्ञान शाकुन्तल।

इनमे से 'रघुवश' और 'कुमार सम्भव' महाकाव्य है। 'रघुवश' के 19 सर्गो (भागो) मे रघुकुल के प्रतापी राजाओ का वखान है। श्री रामचन्द्रजी उसी वश के थे। कालिदास ने इस काव्य में रघुवशी राजाओ की महानता, वीरता, उदारता और सत्यप्रेम को खूब दर्शाया है।

'कुमारसम्भव' मे शिव-पार्वती के विवाह और उनके पुत्र कुमार (कार्तिकेय) की वीरता की कहानी है। पार्वती ने शिव को पाने के लिए कठोर तपस्या की थी। अन्त मे उन्हे सफलता मिली। 'कुमारसम्भव' मे पार्वती की तपस्या का हाल बहुत ही विस्तार के साथ लिखा गया है।

'मेघदूत' में एक यक्ष (एक जाति का नाम) के मनोभावों का चित्रण है। अपने घरबार और सगे-सम्बन्धियो से बिछुड़े हुए उस यक्ष को बरसात मे बादल देख कर घर की याद आती है। वह बादल को अपना दुखडा बतलाता है और अपनी पत्नी के पास जो उसकी राह देख रही होगी, सदेश ले जाने को कहता है।

'मालविकाग्निमित्र', 'विक्रमोर्वशीय' और 'अभिज्ञान शाकुन्तल' कालिदास के तीन प्रसिद्ध नाटक है। पहले नाटक मे महाराज अग्निमित्र और राजकुमारी मालविका और दूसरे नाटक में महाराज पुरुरवा और उर्वशी की कथा है।

'अभिज्ञान शाकुन्तल' या 'शकुन्तला' कालिदास की सबसे प्रसिद्ध रचना है। ससार की अधिकतर भाषाओ में उसका अनुवाद हो चुका है। देश-विदेश के विद्वानो ने उसकी प्रशसा की है। उस नाटक मे हस्तिनापुर के महाराज दुष्यन्त और शकुन्तला की कथा है। शकुन्तला को महर्षि कण्व ने अपने आश्रम में पुत्री की तरह पाला था। दुष्यन्त और शकुन्तला पहली बार कण्व के आश्रम मे मिलते है और अपनी इच्छा से विवाह के सूत्र मे बध जाते हैं। जल्दी ही शकुन्तला को बुला लेने का वादा करके दुष्यन्त अपनी राजधानी को लौट जाते है। उधर कण्व के आश्रम मे महर्षि दुर्वासा आते है। पति की याद मे सुध-बुध भूली शकुन्तला उनका उचित सत्कार नही करती। दुर्वासा उसे शाप देते है कि कि वह जिसके ध्यान मे लीन है, वही उसे भूल जाएगा। परन्तु शकुन्तला की एक सहेली के प्रार्थना करने पर कहते है "दुष्यन्त ने जो अगूठी दी है, उसे दिखाने से वह शकुन्तला को पहचान जाएगा।"

शकुन्तला दुष्यन्त की याद मे घुल-घुलकर काटा हो रही है। पर राजा शकुन्तला की सुध नही लेता। तब कण्व मुनि विना बुलाए ही शकुन्तला की विदा की तैयारी कराते है।

विदा करते समय कण्व मुनि की क्या दशा थी, इसका वर्णन कालिदास ने इन शब्दो मे किया है.

"यह सोचते ही दिल वैठा जा रहा है कि आज शकुन्तला चली जाएगी। आसुओ को रोकने से गला इतना रुंध गया है कि मुंह मे शब्द नहीं निकलते। इसी चिन्ता मे मेरी आँखें भी धुधली पड गई है। जब मुझ जैसे बनवासी को इतना दु ख हो रहा है, तो उन बिचारे गृहस्थो की क्या दशा होती होगी जो अपनी कन्या को पहले-पहल विदा करते होगे।"

शकुन्तला ने आश्रम में बहुत से पौधे लगाए थे। वह पौधों को बडे चाव से सींचती थी। उन पेड, पौधो और लताओ को देखकर कण्व की ममता उमड पडती है। वे कहते है :

"तपोवन के वृक्षो और लताओ! जो शकुन्तला तुम्हे सीचने से पहले कभी पानी नही पीती थी, फूल पत्तियो के गहने पहनने की इच्छा होने पर भी जो स्नेह के कारण तुम्हारे कोमल पत्तो को हाथ नही लगाती थी, जो तुम्हारी नन्ही कलियो को देखकर फूली न समाती थी, वही शकुन्तला आज तुमसे बिछुड रही है। तुम उसे प्रेम से विदा करो।"

इस अवसर पर पुत्री को नारी धर्म की शिक्षा देते हुए कण्व जो कुछ कहते है उससे उनके समय के सामाजिक आदर्शो पर अच्छा प्रकाश पडता है। वे कहते है

"बेटी, पति के घर पहुँचकर घर के सब बडे-बूढो की सेवा करना। अपनी सौतो से सखियों जैसा प्रेम करना। पति निरादर भी करे, तो क्रोध करके उनसे

झगडा न करना। अपने दास-दासियो को बडे प्यार से रखना और अपने सौभाग्य पर घमड न करना। जो स्त्रिया इन बातो का पालन करती हैं, वे ही सच्ची गृहिणी होती है और जो इसका उलटा करती है, वे खोटी स्त्रियां अपने कुल की नागिन होती है।"

शकुन्तला पति के घर जाती है। दुर्वासा के शाप के कारण दुष्यन्त उसे पहचानते नही। दुष्यन्त ने कण्व के आश्रम से विदा होते समय शकुन्तला को एक अगूठी दी थी। शकुन्तला उस समय वह अगूठी दिखाकर दुष्यन्त को याद दिलाना चाहती है, पर वह अगूठी पहले ही न जाने कहा गिर चुकी थी। पति उसे स्वीकार नही करता। उधर आश्रम भी छूट गया है। शकुन्तला को सूझ नही पडता कि वह क्या करे। अन्त में एक अप्सरा उसे ले जाती है और हेमकूट पर्वत मे महर्षि कश्यप के आश्रम मे रखती है।

शकुन्तला को दी हुई दुष्यन्त की अगूठी एक धीवर को एक मछली के पेट से मिलती है। जब अंगूठी दुष्यन्त के पास पहुचती है तो दुष्यन्त को भूली बातें याद आ जाती हैं। वह बहुत दुखी होता है और शकुन्तला के विरह में बेचैन रहने लगता है। इसी बीच इन्द्र के बुलाने पर दुष्यन्त इन्द्रलोक जाता है। वहा से लौटते समय हेमकूट पर्वत पर महर्षि कश्यप के आश्रम मे एक बालक को शेर के साथ खेलते देखकर दुष्यन्त के हृदय मे पुत्र स्नेह उमड आता है। बाद मे उसे पता चलता है कि वह बालक उसी का पुत्र है। उसके बाद दुष्यन्त और शकुन्तला मिलते हैं। अब तो उनकी खुशी की सीमा नही रहती। शकुन्तला के वीर बालक की ओर देखते हुए कश्यप कहते हैं "इस समय अपने बल से सब जीव-जंतुओ को अपने आधीन करने के कारण इस बालक का नाम 'सर्वदमन' है। आगे चल कर सारे ससार की रक्षा करने के कारण यह 'भरत' कहलाएगा।" कहा जाता है कि शकुन्तला और दुष्यन्त के पुत्र 'भरत' के नाम पर ही हमारे देश का नाम 'भारत' या 'भारत-वर्ष' पडा।

कालिदास अपनी उपमाओ के लिए वहुत प्रसिद्ध है। उपमा मे कवि दो चीजों का मुकाबला या तुलना करता है और उनमे से एक की मिसाल देकर दूसरे के गुणों पर प्रकाश डालता है। वखान की सुन्दरता वढाने के लिए कवि कही उपमा देता है, तो कही अपनी वात किसी दूसरे अनोखे ढग से कहता है। वह चतुर कारीगर की तरह अपनी रचना में भांति-भाति के नगीने जडता है। कालिदास इस प्रकार वखान करने मे सवमे वडे कवि माने गए है।

वखान की सुन्दरता के नमूने शकुन्तला नाटक मे तो है ही, पर उनके काव्यों—कुमारसम्भव, रघुवश और मेघदूत मे भी उनकी छटा देखने योग्य है। शकुन्तला नाटक से एक नमूना देखिए ·

शकुन्तला आश्रम के विरवे सीच रही है। कवि के शब्दों में शकुन्तला के कोमल शरीर के लिए यह उतना ही कठिन काम है जितना कमल की पंखुडी की धार से शमी का पेड काटना। शकुन्तला की कोमलता और काम की कठोरता का कितना अच्छा चित्र है।

'कुमारसम्भव' का आरम्भ वे हिमालय के वर्णन से करते है। भारत के उत्तर में पश्चिम से पूर्व तक फैला हुआ यह पहाड़ अपनी ऊचाई और लम्वाई में वेजोड़ है। कवि उसकी लम्वाई को देखकर कहता है—मानो पृथ्वी को नापनेवाला गज हो।

कुमारसम्भव मे ही पार्वती की सुन्दरता की चन्द्रमा से तुलना करते हुए कहा है :

पार्वती जैसे-जैसे वढ रही है, उनकी सुन्दरता भी वढ रही है, जैसे चन्द्रमा के वढने के साथ-साथ उसका प्रकाश वढता है।

रघुकुल कितना वडा राजवश था और उसका वखान करना कितना कठिन काम था, इसे कालिदास 'रघुवश' मे इस प्रकार लिखते हैं . "कहा सूर्य से पैदा हुआ रघुकुल और कहा मेरी जैसी थोडी वुद्धिवाला आदमी। मैं डोगी पर सागर पार करना चाहता हू। मै कवि वनने चला हू। लोग मेरी उसी प्रकार हँसी उडाएगे जैसे

अगर कोई बौना ऊची डाल पर लगे फल को तोडने के लिए हाथ उठाए, तो सब हँसते है।"

कालिदास ने अपनी रचनाओ के लिए नई कथाए नही गढी। उन्होने चालू और लोकप्रिय कथा कहानियो को ही अपनी रचनाओ मे जगह दी। इन्ही कथाओ के पुराने ढाचो मे महाकवि कालिदास ने अपनी तरफ से तरह-तरह के रग भरे, उन्हे सजाया, सवारा और नया जीवन दिया।

कालिदास ने अपने जीवन मे बहुत कुछ देखा और सीखा था। उन्होने यात्राए भी बहुत की थी। अपने समाज की उन्हे पूरी जानकारी थी। नगर और तपोवन, प्रकृति और मनुष्य, सबका उन्हे पूरा ज्ञान था। उन्होने इन सबका ऐसा चित्र अपनी रचनाओ मे खीचा है कि पढनेवाला मुग्ध हो जाता है। वे मन के भावो को खूब समझते थे। प्रेम-वियोग, सुख-दुःख आदि का इस खूबी से बखान किया है कि ऐसा लगता है जैसे हमारे ही मन की बात कह दी हो। यही कारण है कि इतना समय बीत जाने पर भी उनकी रचनाए आज भी ताजी लगती है और हर देश के लोगो का मन मोह लेती है।

हिन्दी साहित्य की धारा

हिन्दी का जन्म आठवी सदी ईस्वी के आसपास हुआ पर दसवी सदी तक हमें जिस भाषा का साहित्य मिलता है, उसमे हिन्दी भाषा का साफ रूप नही मिलता। इसीलिए हिन्दी साहित्य के बहुत से इतिहास लेखक हिन्दी साहित्य का जन्म दसवी सदी से मानते है।

इन दस-ग्यारह सौ वर्षो मे हिन्दी में बहुत अधिक और सुन्दर साहित्य रचा गया। समय-समय पर साहित्य की धाराए बदलती गई और ऐसे कई ग्रन्थ लिखे गए जो अलग-अलग युग के प्रतिनिधि ग्रन्थ माने जाते हैं।

हिन्दी साहित्य का पहला युग 'वीर गाथा काल' कहलाता है। इस काल मे कई 'वीर काव्य' लिखे गए जिनमें 'खुमान रासो', 'वीसलदेव रासो', 'हम्मीर रासो,'

'विजयपाल रासो' और 'पृथ्वीराज रासो' आदि काव्य मशहूर हैं। इन काव्यों मे ज्यादातर किसी बडे राजा की वीरता या लडाई का बयान है।

पृथ्वीराज रासो

'पृथ्वीराज रासो' हिन्दी का पहला महाकाव्य माना जाता है। इसके रचने वाले कवि चन्द वरदाई थे। कहते हैं कि चन्द कवि महाराज पृथ्वीराज के राजकवि और सेनापति थे। इस तरह यह महाकाव्य बारहवी सदी का ठहरता है। उसकी भाषा पुरानी हिन्दी है।

उस समय भारत छोटे-छोटे रजवाड़ो मे बटा हुआ था। राजा अक्सर आपस में लड़ा करते थे। लडाइयो के कई कारण होते थे। कभी अपना राज बढाने के लिए एक राजा दूसरे राजा पर चढाई करता था। कभी किसी राजा की कन्या से विवाह के लिए कोई राजा रार ठान लेता था। कभी बहादुरी दिखाने के लिए ही युद्ध छिड़ जाता था। एक तरफ देश मे आपसी झगडे हो रहे थे, दूसरी तरफ पश्चिम से विदेशी हमले होने लगे थे।

बारहवी सदी में अजमेर मे पृथ्वीराज चौहान राज्य करते थे। दिल्ली का राज्य उन्हे अपने नाना से मिला था। इसलिए उनका राज बहुत बढ गया था। कन्नौज के राजा जयचन्द की पुत्री सयोगिता से उन्होने विवाह किया था, पर वह विवाह जयचन्द की इच्छा के विरुद्ध हुआ था। पृथ्वीराज सयोगिता को हर लाए थे।

पृथ्वीराज चौहान के राज्यकाल मे मुहम्मद गोरी ने भारत पर कई हमले किए। उन हमलो का पृथ्वीराज ने डटकर सामना किया। अन्त मे पृथ्वीराज हार गए और चन्द बरदाई के अनुसार वह गोरी द्वारा कैद कर लिए गए।

चन्द ने 'पृथ्वीराज रासो' मे महाराज पृथ्वीराज की कहानी लिखी है। सयोगिता

से विवाह और गोरी से लड़ाइयों आदि का सुन्दर वर्णन इस ग्रन्थ मे है। उस समय के अनेक राजाओं के जीवन की झाकी भी इसमे मिलती है।

पृथ्वीराज रासो पढने से पता चलता है कि राजपूत बड़ी हिम्मत वाले, बहादुर और आन पर मर मिटने वाले थे। पर साथ ही उनमें आपस मे लाग-डांट भी चलती रहती थी। आपस की इस फूट से देश को बहुत हानि पहुँची।

पद्मावत

धीरे-धीरे भारत में मुसलमान बादशाहो का राज जम गया और करीब-करीब पूरा उत्तर भारत उनके हाथों मे आ गया। दक्षिण भारत मे भी कुछ जगह उन्होने अपना अधिकार जमाया। इस तरह एक नई सभ्यता से भारतवालों की पहचान हुई।

मुसलमानों मे सूफी सन्त बडे उदार विचार के थे। वे भगवान को पाने का रास्ता प्रेम बतलाते थे। सूफी सतो ने जनता मे प्रचलित लोक-कथाओ को कविता मे लिखा। वे लोग किसी प्रेमी-प्रेमिका की कहानी के सहारे भगवान से प्रेम की बात कहते थे। साहित्य की यह शाखा 'प्रेम काव्य' के नाम से पुकारी जाती थी। इस परम्परा मे काफी साहित्य लिखा गया जिसमे 'मधुमालती,' 'मृगावती,' 'ढोला और मारू', 'हीर और राझा', आदि की कहानियां आज तक बडे चाव से सुनी जाती है।

प्रेम काव्य धारा का सबसे बड़ा ग्रन्थ 'पद्मावत' है जिसे सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने लिखा था। सूफी कवियो मे कुतबन, मझन और उस्मान आदि के ग्रन्थ भी पाए जाते हैं किन्तु उन सबमें सोलहवी सदी के मलिक मोहम्मद जायसी का विशेप स्थान है। उनकी रचना 'पद्मावत' हिन्दी का टकसाली ग्रन्थ है। उसकी भाषा अवधी है, जो बस्ती से लखनऊ के बीच बोली जाती है। 'पद्मावत' मे चित्तौड़

की रानी पद्मिनी की कहानी कविता में लिखी गई है। जायसी की कहानी इतिहास से पूरी-पूरी नहीं मिलती। उनको तो इस कहानी के सहारे सूफी मत का प्रेम समझाना था। उन्होंने अपनी कल्पना से कहानी को अपने आप से लिखा। उसमे पद्मिनी के रूप का वखान, प्रेम की पीर, वियोग की तडप आदि वाते वहुत ही सुन्दर ढग से लिखी गई है। जायसी उस कहानी के सहारे बताते हैं कि जीव ईश्वर को पाने के लिए उसी तरह तडपता है जैसे एक प्रेमी अपनी प्रेमिका को पाने के लिए।

जायसी के पहले अमीर खुसरो ने हिन्दी भाषा को सवारने मे काफी काम किया। उनकी मुकरियां और पहेलिया आज भी मनोरजन का साधन वनी हुई है। 'खडी बोली' नामक हिन्दी भाषा का जो रूप आज हमे दिखाई पडता है उसकी सबसे पहली झलक हमे अमीर खुसरो की कविताओ मे मिलती है।

कबीर

जायसी और खुसरो की ांति कवीर भी हिन्दू-मुसलमानो मे भेद-भाव न करते थे। कवीर उन अनेक सन्त कवियो के अगुआ माने जाते है जिन्होने अपने समय के दकियानूसी आडम्वरो, जाति-पाति और ऊच-नीच के भेद-भावो का विरोध करके एकता और मेल-मिलाप की शिक्षा दी। भक्त कवीर का कहना था कि हिन्दुओ का भगवान और मुसलमानो का अल्लाह एक ही हस्ती के दो नाम हैं। उनका कहना था कि ईश्वर

या अल्लाह एक ऐसी सबसे ऊची ताकत का नाम है, जिसका न कोई रूप है न कोई रंग। किन्तु जो घट-घट व्यापी है। कबीर ने अपने समय की बोलचाल की भाषा मे पद और साखिया कही है। उनका सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ 'कबीर बीजक' माना जाता है।

जिस समय एक ओर सूफी सत अपनी प्रेम वाणी सुना रहे थे, उसी समय दूसरी ओर वैष्णव धर्म भी फैल रहा था। वैष्णव भी सबको प्रेम की डोर मे बाध देना चाहते थे।

जाति पांति पूछे न कोय,
हरि को भजे सो हरि का होय।

ये थे वैष्णवो के विचार। वे भगवान के सभी भक्तो को समान मानते थे। जात-पात के भेदभाव को भुलाकर वैष्णव धर्म मे ब्राह्मण और शूद्र एक-दूसरे से गले मिलते थे। वैष्णव सतो मे गोस्वामी तुलसीदास और सूरदास ब्राह्मण थे। मगर नामदेव, रैदास और दादू उन जातियो के थे जिन्हे छोटा समझा जाता था।

वैष्णव सत कवियो में अनेक कवि ऐसे हुए है जिन्होने भगवान के अवतार की बात नही कही। वे लोग निर्गुण ईश्वर को मानते थे। बाद के कवि भगवान के अवतारो का बखान करते है। राम और कृष्ण, दो अवतार मुख्य माने गए है। कुछ कवियो ने राम के गुण गाए और कछ ने कृष्ण के।

रामचरित मानस

राम के गुण गाने वालो मे गोसाई तुलसीदास जी सबसे बड़े कवि हुए है। गोसाईं जी की रचना, 'रामचरितमानस', जिसे रामायण भी कहते है, अवधी मे लिखा हिन्दी का सबसे बडा महाकाव्य है। इसकी गिनती ससार के गिने-चुने बडे-बडे ग्रन्थो मे है। हिन्दी जानने वालो मे रामायण के बराबर आदर और किसी ग्रन्थ का नही। ऐसा कोई हिन्दी जानने वाला न होगा, जिसे रामायण की कुछ चौपाइयां याद न हो।

रामायण मे रामचन्द्र जी के अवतार की कहानी बडे ही रोचक ढग से कही गई है। कहानी के साथ-साथ आदमी को धर्म का उपदेश भी दिया गया है। गृहस्थ धर्म का तो ऐसा उपदेश और कही मिलता ही नही। भाई-भाई का सम्बन्ध कैसा हो, पति-पत्नी मे कैसा व्यवहार होना चाहिए, पिता-पुत्र के क्या कर्तव्य हैं, ये सभी बातें बहुत ही सुन्दर ढग से समझाई गई है। उसमें जीवन की सब बातो का निचोड मिलता है। यही कारण है कि आज भी घर-घर मे रामायण की आरती होती है और गाव-गाव मे रामायण के बोल सुनाई पडते है। गोसाई जी कैसे माने हुए चोटी के भक्त कवि थे, इस पर 'रहीम' का यह दोहा प्रकाश डालता है :

सुरतिय, नरतिय, नागतिय, सब चाहति अस होय।
गोद लिए हुलसी फिरें, तुलसी सो सुत होय।।

सूरसागर

तुलसीदास ने भगवान राम का चरित गाया है, तो सूरदास ने भगवान कृष्ण का। पर सूरदास ने भगवान कृष्ण के पूरे जीवन की कहानी नही कही। वह तो भगवान के बाल-रूप के भक्त थे। उन्होंने कृष्ण की बाल-लीला और गोपियो के प्रेम और विरह पर पद रचे हैं। उनके इन गीतो मे इतना रस है कि इन क्षेत्रो में गोसाई जी भी सूर से आगे नही जा सके। मथुरा के आस-पास बोली जाने वाली व्रजभाषा मे लिखा 'सूरसागर' भक्ति और प्रेम का मीठा क्षीर-सागर है, जिसे पीते हुए पढनेवाला कभी नहीं अघाता। सूर के पद हृदय को कितना छूते हैं, इस पर एक दोहा प्रसिद्ध है :

(किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर,
किधौं सूर को पद लग्यो, वेध्यो सकल सरीर।)

भक्ति काल में और भी ऐसे चोटी के कवि हुए है, जिन्हे आज तक हिन्दी संसार नहीं भूला और जो सदा अमर रहेगे। मीरावाई, अब्दुल रहीम खानखाना 'रहीम' और रसखान ऐसे कवियों में है। हिन्दू मुसलमान सभी कवि इस भक्ति की गंगा में डुवकियां लगा रहे थे और अपनी वाणी से जनता के मन को तृप्त कर रहे थे।

बिहारी सतसई

कृष्ण भक्ति का हिन्दी साहित्य पर बहुत प्रभाव पडा। आगे चलकर अठारहवी सदी मे राधा कृष्ण के प्रेम का रूप वदल गया। कवि अब ससारी प्रेम की ओर झुके। उस समय की कविता में शृंगार रस विशेष रूप से मिलता है। नायिका के रूप का वखान, नायक के विरह में नायिका का व्याकुल रहना, नायक-नायिका का मिलना—ये सव कविता के विषय वन गए। एक वात और हुई। अनोखे ढग से बात कहने की ओर कवियो का झुकाव अधिक हो गया। उस समय करीब-करीब सब साहित्य व्रज भाषा मे लिखा गया। भाषा बहुत ही मजी हुई और मीठी रहती थी। उसे खूव सवारा जाता था। उस समय के कवियो मे विहारी, मतिराम, भूषण, देव, पद्माकर, आलम और घनानन्द खास हैं।

इन कवियो मे से भूषण ने शृंगार रस की कविताएं नही लिखी। उन्होंने शिवाजी की वीरता का वखान किया है। उस काल के कवियो में बिहारी का विशेष स्थान है। वह थोडे में बहुत और चुभता हुआ कहने के लिए प्रसिद्ध है। बिहारी ने सात सौ दोहे लिखे है जो 'बिहारी सतसई' के नाम से छपे हैं। सतसई के बारे मे यह दोहा बहुत प्रसिद्ध है ·

(सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखन में छोटे लगें, घाव करें गम्भीर।)

वैसे तो विहारी सतसई मे भक्ति, उपदेश, वैद्यक आदि कई विषयो पर लिखा गया है, लेकिन शृंगार रस के दोहे ही अधिक हैं। इन दोहो में बिहारी ने गागर मे सागर भरा है। वाद मे वहुत से वडे-बडे कवियो ने बिहारी के एक-एक दोहे के भाव पर छन्द रचे हैं।

प्रेस और छपाई का काम देश मे शुरू हो जाने से अलग-अलग विषयो की किताबे निकलने लगी। अब तक हिन्दी साहित्य ज्यादातर पद्य मे ही लिखा जाता था किन्तु अब लेखको ने गद्य साहित्य की रचना शुरू की। गद्य साहित्य की शुरूआत ने हिन्दी के नए रूप, जिसे खडी बोली कहते है, को सवारना शुरू किया।

अंग्रेजी शासन मे भारत और भारत की बिगडती हुई हालत देखकर लोगो मे आजादी और देशप्रेम की भावनाए जागने लगी थी। हिन्दी के कवियो और लेखको पर भी उसका असर पडा। कवियो ने प्रेम और श्रृगार गीत छोड़कर देश की दुर्दशा की ओर देशवासियो का ध्यान खीचा।

हिन्दी के इस नए युग की शुरूआत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से होती है। भारतेन्दु अपने समय के सबसे बडे हिन्दी कवि और नाटककार थे। उनके नाटक हिन्दी के पहले नाटक है जिन्हे हिन्दी साहित्य की एक मजबूत बुनियाद कहा जा सकता है। उनके नाटको में देश और समाज की बिगडती हुई दशा की अच्छी और चुटीली झाकी मिलती है। भारतेन्दु की अनेक विशेषताए है कि उसने खड़ी बोली को अपनाया, गद्य लेखन की नीव रखी और साहित्य मे राष्ट्र भावना का स्वर ऊचा किया। उनकी ये पक्तिया बहुत प्रसिद्ध है—

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल॥

भारतेन्दु के समय मे और भी कई लेखक ऐसे हुए जिन्होने हिन्दी साहित्य को अपनी कीमती रचनाएं भेंट की। उनमें प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट आदि के नाम प्रमुख है। इस युग के लेखको ने हिन्दी भाषा को बहुत-कुछ साज दिया। सन् 1905 मे बगाल मे स्वदेशी आन्दोलन छिडा। धीरे-धीरे राष्ट्रीय काग्रेस नरम

लोगों का पल्ला छोडकर गरम लोगों के हाथ मे आ गई। सन् 1914 की लड़ाई के वाद महात्मा गाधी भारत की राजनीति में आए और देश आजादी के लिए पूरे जोर से लडने लगा।

देशप्रेम और राजनीतिक आन्दोलनों के प्रभाव से हिन्दी में कई अखबार भी निकलने लगे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के युग के बाद इस नए युग मे हिन्दी साहित्य को सुधारने का सबसे अधिक काम महावीरप्रसाद द्विवेदी ने किया। वह 'सरस्वती' नाम की मासिक पत्रिका के सम्पादक थे। उनके पहले कुछ लोगो का ख्याल था कि खड़ी बोली में जितना अच्छा गद्य लिखा जा सकता है, उतनी अच्छी कविता नही लिखी जा सकती। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खडी वोली को वह रूप प्रदान किया जिसमें कविता और गद्य दोनों ही लिखे जा सके। मैथिलीशरण गुप्त और जयशकर प्रसाद आदि द्विवेदी युग की ही देन है जिन्होंने खडी बोली मे ऐसे ग्रन्थ और काव्य लिखे हैं जिन पर हिन्दी साहित्य को गर्व है।

भारत भारती

मैथिलीशरण अपनी काव्य रचना 'भारत भारती' मे देश के बीते युग, वर्तमान समय और आगे आने वाले समय की झांकी देते हुए देशवासियो से कहते है :

हम कौन थे, क्या हो गए है, और क्या होगे अभी, आओ विचारें बैठ करके, ये समस्याएं सभी।

पहले हम कैसे वीर थे, विद्या और ज्ञान मे कैसे बढे-चढे थे—इसे पढते-पढते सीना गर्व से फूल जाता है। फिर जब कवि आज की गिरावट का वर्णन करता है, तो लज्जा और क्षोभ से गर्दन झुक जाती है। तभी वह ललकारता है कि हमे क्या वनना चाहिए। सन् 1911-12 मे रची गई 'भारत भारती' ने नौजवानो मे देशप्रेम के भाव भरने मे वहुत बडा काम किया। भारतेन्दु के समय से ही खडी वोली में कुछ-कुछ कविता होने लगी थी। मैथिली-

शरण गुप्त की 'भारत भारती' साफ-सुथरी खड़ी बोली का अच्छा नमूना है। बाद में अधिकतर कवि खड़ी बोली मे ही रचना करने लगे।

कामायनी

अंग्रेजी शासन मे लोग अंग्रेजी पढ़ने की ओर झुके और पश्चिम के नए-नए विचारो से उनका परिचय हुआ। हिन्दी साहित्य मे कथा कहानियो और कविताओ में नए विचार आने लगे। स्त्री-पुरुष की बराबरी, व्यक्ति की स्वाधीनता, विवाह मे माता-पिता का हाथ न होना इस प्रकार के विचार प्रकट होने लगे। साथ ही एक बात और भी आई। अब हर बात बुद्धि की कसौटी पर कसी जाने लगी। आख मूद कर किसी बात को मान लेना ठीक न जंचा। इस प्रकार नए और पुराने विचारों मे जोर की टक्कर आरम्भ हुई। इसलिए कवियो ने अक्सर गीत या मुक्तक लिखे जिनमें कोई प्रबन्ध या कहानी न रहती थी। मन के भाव छोटे-छोटे गीतो मे प्रकट किए जाते थे। किन्तु जयशंकर प्रसाद का 'कामायनी' नामक ग्रन्थ इस युग की बड़ी देन है, जिसे आधुनिक युग का एक श्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है।

प्रलय के बाद मनु ने कैसे फिर सृष्टि रची यह बहुत पुरानी कहानी है। वेदो और पुराणो मे यह कहानी मिलती है। जयशंकर प्रसाद ने उसी को अपने काव्य 'कामायनी' का आधार बनाया और यह समझाया कि बुद्धि अकेली मन को सुख नही

दे सकती। बुद्धि के साथ श्रद्धा भी होनी चाहिए। श्रद्धा ही मन को शाति देती है। कोरी बुद्धि आदमी के मन को चचल बना देती है वह अशान्त होकर इधर-उधर भटकता रहता है। इस काव्य ने जैसे नए और पुराने विचारो मे मेल कराया। इस युग के दूसरे बडे कवियो मे सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानन्दन पन्त, महादेवी वर्मा, दिनकर, बच्चन और नरेन्द्र शर्मा आदि का नाम प्रसिद्ध है। निराला ने हिन्दी मे सबसे पहले मुक्त छद की रचना आरम्भ की। सुमित्रानन्दन पत ने प्रकृति का बडा सूक्ष्म और मार्मिक वर्णन किया। इनके अलावा हिन्दी मे आज अनेक कवि अपनी ऊंची-ऊंची रचनाओं से साहित्य के खजाने को बराबर बढाते जा रहे है। आधुनिक हिन्दी के कुछ प्रमुख महाकाव्यों के नाम हैं—प्रिय प्रवास कामायनी, साकेत, उर्वशी और लोकायतन।

गोदान

गद्य के क्षेत्र मे अब तक लेख, आलोचनाए, यात्रा की कहानिया आदि बहुत-सी चीजे लिखी जाने लगी थी। साहित्य की इस नई दिशा मे कहानी और उपन्यासो का खास स्थान है। इस युग के और उपन्यास लेखको मे 'प्रेमचन्द' नाम सबसे पहले आता है। प्रमचन्द की रचनाओ में साधारण जनता, विशेषकर देहातो की जनता का रूप बहुत सुन्दर उभरकर आता है।

वैसे तो प्रेमचन्द जी की सभी रचनाए बहुत अच्छी हैं, पर 'गोदान' उपन्यास उनमे सबसे ऊचा ठहरता है। 'गोदान' मे होरी नाम के एक

सीधे-सादे गरीब और नेक किसान की कहानी है। किसानों के दुख-दर्द, उनकी चाहों और कमियों, सब का बहुत ही सुन्दर चित्र इस उपन्यास में मिलता है। नेक होरी जिन्दगी भर मूड-माटी देकर मेहनत करता है, फिर भी गरीबी से छुटकारा नही पाता। उसके मरते समय उससे गोदान कराया जा सके, इतनी भी उसकी स्त्री की समाई नही। गोदान के बाद हिन्दी मे अनेक अच्छे उपन्यास लिखे गए है। हिन्दी मे जहा एक ओर मौलिक साहित्य की रचना हो रही थी, वही देश की दूसरी भाषाओं तथा अंग्रेजी साहित्य का काफी अनुवाद भी इस युग मे हुआ। जिन दूसरी भाषाओं के साहित्य का हिन्दी साहित्य पर काफी असर पडा उनमे से सस्कृत, बगला और अंग्रेजी खास हैं।

हिन्दी साहित्य चन्द बरदाई से अब तक बराबर उन्नति करता आ रहा है। नए-नए लेखक पुरखो की इस थाती को बढाने मे लगे है। साहित्य के सभी अंगो को पुष्ट करने का प्रयत्न हो रहा है।

अंग्रेज़ी साहित्य की धारा

किसी जाति की प्रतिभा को परखने के लिए उसके साहित्य को समझना जरूरी है। आज अंग्रेजी-भाषा ससार की एक पूर्ण भाषा है। यदि हम अग्रेजो की प्रतिभा को परखना चाहे, तो हमे उनके साहित्य और महाकाव्यो को देखना होगा।

चासर को अग्रेजी काव्य का पिता कहते है। उसका जन्म सन् 1340 ई० में हुआ था और सन् 1400 के लगभग वह ससार से विदा हुआ। वह कई बातो के लिए प्रसिद्ध है। चासर पुराने नाइटो (कुलीन वीरो) मे से था। उसने सैनिक और राजनीतिज्ञ के रूप मे देश-विदेश में काम किया। उस के समय मे इग्लैण्ड मे बहुत उथल-पुथल थी। लोग पादरियो और जागीरदारो के असर के खिलाफ आवाज उठाने लगे थे। उनके मन मे अजीब बेचैनी थी। चासर की

कविताओ मे हमें राष्ट्रीयता और उदार विचारो की पहली झलक मिलती है।

अभी तक अंग्रेजी भाषा की पूछ न थी। कुलीन लोग और पादरी वगैरह फ्रांसीसी भाषा पढने मे ही अपना वडप्पन समझते थे। अंग्रेजी भाषा को वे लोग भोंडी और भदेस समझते थे और उससे मुह बिदकाते थे। चासर ने अंग्रेजी मे कविताए लिखी और उसे नया वडप्पन और मर्यादा दी। चासर से पहले के लेखक जो कुछ लिखते, उसमे नीति का उपदेश जरूर देते। परन्तु चासर कलाकार था। उसने उपदेश कभी नही दिया। उसने दुनिया जैसी देखी, उसकी वैसी ही तस्वीर अपनी कविताओ मे खीच दी। स्वभाव से हँसोड और उदार होने के कारण वह विचारो और मतो के पचडो मे नही पडा। उसने सदा आदमियो की वाते की।

उसकी सवसे प्रसिद्ध कविता 'कैंटरवरी की कहानियां' है। उसमें चासर ने अपने समय के समाज का सुन्दर चित्र खीचा है। लन्दन की सराय में जितनी तरह के आदमी देखने को मिलते थे, उन सब की तस्वीरें उस कविता मे मिल जाएगी। नाइट, मल्लाह, डाक्टर, पुरोहित, मजदूर, धनी, व्यापारी की पत्नी, सभी प्रकार के लोग बड़ी मस्ती से हँसते और अपनी-अपनी बातें कहते मिलते है। उस समय के लोगो की वीरता, प्रेम और जीवन का गाढा रग कैंटरवरी की कहानियो में मौजूद है।

चासर के वाद डेढ सौ साल तक कोई ऐसा वडा कवि या लेखक नही हुआ जिसका नाम उस महाकवि के साथ लिया जा सके। डेढ सौ साल वाद अंग्रेजी का सबसे बडा कवि और नाटककार शेक्सपियर हमारे सामने आता है। शेक्सपियर का स्थान अंग्रेजी साहित्य में ही नही, बल्कि सारी दुनिया के साहित्य मे बहुत ऊचा है। यह वह समय था जब यूरोप में मध्य-युग बीत चुका था और वर्तमान युग का जन्म हो रहा था। लोगो ने नए युग मे आखे खोली थी। पूरे देश मे जागरण की नई लहर दौड रही थी। इग्लैण्ड की धाक जल और थल पर जम रही थी। उस समय के साहित्य मे इसकी झलक मिलती है। कवि और नाटक लिखने वाले अंग्रेजी के भण्डार को खूब भर रहे थे जिसमे सबसे बडी देन शेक्सपियर की थी। उस समय एलिजाबेथ इग्लैण्ड की रानी थी।

शेक्सपियर का जन्म 1564 ई० में हुआ था और मृत्यु 1612 ई० में । उसने साहित्य-रचना कविता से शुरू की । मगर उसकी प्रतिभा का पूरा चमत्कार नाटको में देखने को मिला । चार सदिया वीत जाने पर भी उसके नाटक पुराने नही हुए। ससार की प्राय सभी भापाओ मे आज भी उसके नाटक खेले जाते है ।

शेक्सपियर के नाटको में उस समय के जीवन की सब वाते पूरी की पूरी हमारी आखो के सामने आ जाती हैं । प्रेम और रोमांस, जीवन की गुत्थियां सुलझाने की चाह, दैवी शक्तियो पर श्रद्धा—सब कुछ उनमे मिलता है । उसके नाटको मे मनुष्य के सुख-दु ख, उसकी आशा-निराशा, और चाह के सच्चे भाव भरे पडे है । उनमे लेखक की कल्पना की ऊची उडान भी है और भाषा का जोर भी । भाषा को मौके के अनुसार प्रभावशाली बनाने के लिए उसने कही गद्य का प्रयोग किया है, कही पद्य का और कही गीत का ।

उसके ऐतिहासिक नाटको, 'चौथे हेनरी' और 'पाचवे हेनरी' मे हमे इंग्लैण्ड के राजाओ के जीवन की झाकी मिलती है । 'एज यू लाइक इट, 'मिड समर नाइट्स ड्रीम', 'मर्चेन्ट आफ वेनिस' और 'टैम्पेस्ट' ऐसे सुखान्त नाटक हैं जिन्हें लोग बहुत पसन्द करते है । दु खान्त नाटको के रूप मे 'जूलियस सीजर' 'हैमलेट', 'मैकवेथ' 'ओथेलो' और 'किग लियर', ऐसे है जो शेक्सपियर को नाटक-कारो का सिरमौर बना देते है ।

शेक्सपियर की मृत्यु से कुछ साल पहले, सन् 1608 ई० मे, मिल्टन का जन्म हुआ। शेक्सपियर की तरह मिल्टन भी अपने समय में सबके मन पर छाया रहा। वह बहुत बड़ा विद्वान था और उस पर बाइबिल का बड़ा प्रभाव था। वह हमारे महान कवि सूरदास की तरह ही अन्धा था। उसके समय मे राजतन्त्र का अन्त हुआ और कट्टर सुधारक क्रामवेल का शासन चला। फल यह हुआ कि लोगो का मन राजनीति और दर्शन की ओर झुका। जीवन की रगीनिया कुचली गई। मिल्टन इस नए युग का बड़ा समर्थक था। वह मसीहा की भाति ससार के लोगो से चिल्ला-चिल्ला कर कहता था कि यदि उनका मन धर्म और ईश्वर मे न लगा, तो प्रलय हो जाएगा।

मिल्टन ने अग्रेजी साहित्य को सगीत और कल्पना से भरपूर कविताए भेट की। उसकी सबसे बड़ी रचना 'पैराडाइज लास्ट' नाम का महाकाव्य है। उसमे ईश्वर, शैतान, फरिश्तो और धरती पर मनुष्य के आने की कहानी है। उसमे बताया गया है कि हमारे पुरखे आदम और हव्वा ईश्वर की आज्ञा न मानने के अपराध मे किस तरह स्वर्ग के बाग से निकाल दिए गए और अन्त मे किस प्रकार ईसा मसीह ने जन्म लेकर और सूली पर चढकर मनुष्य को मुक्ति का मार्ग दिखाया। मिल्टन कला मे महानता और पवित्रता का पुजारी था। दूसरी ओर उसमे विश्वास की सचाई और सुधारको वाला जोश भी था।

मिल्टन के बाद पोप की महान् प्रतिभा सामने आई। पोप का जन्म सन् 1688 ई० मे हुआ और स्वर्गवास 1744 मे। साहित्य मे तब तक जो परिवर्तन आए थे, वे

पोप के युग के जीवन में गहराई तक पैठ चुके थे। एलिजाबेथ के समय के आदर्श और सुधारकों के युग की कट्टरता अब पुरानी पड चुकी थी। व्यग्य और आलोचना उस नए युग की विशेषता थी। भावुकता का स्थान बुद्धि ने ले लिया था। चुटकुले, लेख और फडकती हुई कविताए लिखने की परिपाटी चल पडी थी।

उसी समय समाचार पत्रो का निकलना भी शुरू हुआ और लेखको और कवियो का मान बहुत बढ़ गया। उस समय लन्दन मे 3,000 से अधिक 'काफी हाउस' थे, जहा विद्वान्, व्यापारी और कुलीन लोग जी खोलकर एक दूसरे से मिलते-जुलते थे। प्रजातन्त्र का प्रभात हो रहा था।

पोप बहुत अच्छा व्यग्य लिखनेवाला और आलोचक था। इसलिए वह जल्द ही सबकी आखों मे चढ गया। उसकी कुछ कविताए बहुत ही लोकप्रिय हुईं, जो आज भी उसके नाम को अमर बनाए है। जैसे 'दि रेप आफ दि लाक', जिसमे पोप ने उस युग की कमजोरिया दिखाई है, 'दि डनसियड', जिसमे उस समय की राजनीतिक मूर्खताओ का उसने मजाक उड़ाया है, और 'दि एसे आन मैन', जिसमे उस समय के जीवन दर्शन की गूज है।

पोप के पश्चात् अग्रेजी साहित्य मे एक साथ कई ऐसी प्रतिभाए जन्मी जो एक से बढकर एक थी, ये कवि 'रोमाटिक या स्वच्छदतावादी' कहे जाते है। पोप के समय कविता पूर्णत· शहरी कविता हो गई थी और प्रकृति को बिल्कुल भुला दिया गया था। रोमाटिक कविता मे सहजता और प्रकृति प्रेम की झलक है।

इस समय सारे यूरोप में एक जोर का आन्दोलन चल रहा था। आदमी-आदमी की बराबरी, स्त्री-पुरुष की बराबरी और प्रकृति की गोद मे खुलकर विचरना—ये उस आन्दोलन की विशेषताए थी। फ्रास की क्रान्ति मे आजादी, बराबरी और भाईचारे का नारा उठा था। सारे रोमाटिक कवि फ्रास की क्रान्ति से बहुत प्रभावित थे तथा वे लोकतत्र व समानता के प्रबल समर्थक थे।

प्रमुख रोमाटिक कवियो मे एक था 'विलियम वर्ड्सवर्थ'। वर्ड्सवर्थ का जन्म सन् 1770 में हुआ और देहान्त सन् 1850 में। वर्ड्सवर्थ ने अपनी कविताओं के पात्र व घटनाए साधारण जीवन से चुनी। वर्ड्सवर्थ प्रकृति का महान पुजारी था। उसकी कुछ प्रसिद्ध रचनाए है—"ओड टु इम्मार्टलिटी', 'प्रिल्यूड' और 'लिरिकल बैलेड्स' जो उस समय के दूसरे प्रसिद्ध कवि 'कोलरिज' और उसने मिलकर प्रकाशित किए थे। इस युग का दूसरा प्रमुख कवि शैली 1792 ई० मे पैदा हुआ था और अपनी सुनहरी झलक दिखाकर कोई 30 साल की आयु में 1822 मे विदा हो गया।

शैली इग्लैण्ड का सबसे बडा गीत लिखनेवाला कवि था। विचारो मे वह क्रातिकारी और आदर्शवादी था। उसका विश्वास था कि अन्त मे प्रेम और अच्छाई ही की विजय होती है। उसकी सबसे सुन्दर कविताए है 'दि सेंसिटिव प्लाट', 'प्रोमिथियस अनबाऊड', 'दि स्काईलार्क', और 'ओड टु द वेस्ट विंड'।

शैली के समय मे प्रेम और प्रकृति के गीत गानेवाले और भी कई कवि थे। उनमे से एक टेनिसन था, जिसके साथ अग्रेजी साहित्य मे विक्टोरिया युग आरम्भ होता है। अभी प्रकृति प्रेम का प्रभाव अवश्य बाकी था, पर धीरे-धीरे वह कम हो चला था। वह उद्योग-धन्धो का समय था। कल-कारखाने खूब धन दे रहे थे। साथ ही राज-सत्ता में भी कुलीनो की जगह मध्यम वर्ग के नए धनियो का जोर बढ रहा था। धन-बल और राज-बल पाकर वह बीच का वर्ग, यानी मध्यम श्रेणी, मजे की जिन्दगी बिता रहा था। उसके सामने किसी तरह की चिन्ता न थी।

फल यह हुआ कि साहित्य मे ऊपरी बनाव-सिंगार, कोरी भावुकता और नियम कायदो पर ही जोर दिया जाने लगा। टेनिसन मे ये सब बाते बिलकुल साफ दिखाई पडती है। वह बहुत ही सुथरा हुआ कलाकार था। शब्दो की
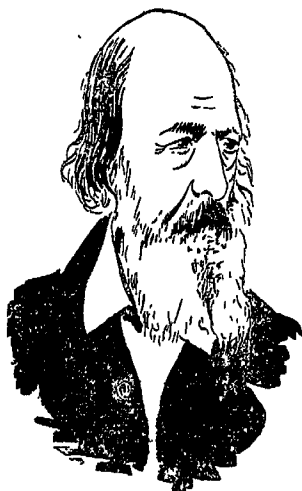
परख उसे वहुत ही अधिक थी। वह अपनी कविताओ मे शब्दो का ऐसा चुनाव करता था कि एक-एक शब्द मे सगीत भरा रहता था। वह अक्सर प्रेम की कविताए लिखता था। 'दि इडिल्स आफ दि किग', 'माड,' 'इन मेमोरियम' और 'लाक्सले हाल' उसकी सवसे अच्छी कविताए है। टेनिसन 1809 मे पैदा हुआ और 1892 मे उसका स्वर्गवास हुआ।

अव तक हमने कवियो की चर्चा की है। अव कुछ गद्य लेखको का परिचय भी दे दे। गद्य मे लिखना बहुत पहले से शुरु हो गया था। समाचारपत्रो ने गद्य को साफ-सुथरा वनाने और सवारने मे बहुत हाथ वटाया था। गद्य का चोटी का लेखक डिकेस अव हमारे सामने आता है। उस समय तक उपन्यासो का चलन हो चुका था। लोग उपन्यासो को वहुत पसन्द करते थे। डिकेस ने भी इसी ओर कदम वढाया। अपनी रचनाओ मे उसने विक्टोरिया-युग के जीवन पर प्रकाश डाला। हमे उसकी कहानियो मे सभी तरह के लोग मिलते है।

परोपकारी, धनी, उचक्के, गरीब, भिखारी, चोर, बदमाश, कारखानों में काम करने वाले, घिसे-पिटे बच्चे, सनकी, वहमी, सिरफिरे ··सभी अच्छे बुरे लोगो को हम देखते हैं। कभी हम उनकी ओर खिंच जाते है, तो कभी उन्हें देखकर हमारे रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

डिकेंस जीवन को जैसा देखता था, वैसा ही आंकता था। इसमें उसे कमाल हासिल था। कल्पना के बल पर वह शब्दों में जान डाल देता था। साथ ही उसे यह पक्का भरोसा था कि आदमी स्वभाव से अच्छा होता है, इसलिए वह आदमी के अच्छे गुणो को सदा उभारता था। 'डेविड कापरफील्ड', 'ओलिवर ट्विस्ट', 'दि ओल्ड क्यूरिआसिटी शाप', 'ए टेल आफ टू सिटीज' और 'पिकविक पेपर्स' आदि उसके ऐसे उपन्यास हैं, जिन्हे लोगो ने बहुत पसन्द किया। डिकेंस का जन्म 1812 मे हुआ और मृत्यु 1870 मे।

जार्ज बर्नार्ड शा के साथ हम अपनी बीसवी सदी मे पैर रखते है। बर्नार्ड शा आयरलंड के मामूली हैसियत के परिवार मे 1856 मे पैदा हुआ था। वह पहले विद्रोही और नास्तिक था और बाद मे समाजवादी हो गया। उसने पहले पैम्फलेट्स यानी छोटी-छोटी किताबें लिखी। वह सभाओ मे भाषण भी दिया करता था। बाद मे नाटक लिखने लगा।

शा ने अपनी रचनाओ मे रूढियो पर करारी चोट की। उसके कलम मे कुछ ऐसा जोर और बाकपन था कि वह अपने समय का सबसे बड़ा व्यंग्य-लेखक मान लिया गया। वह स्त्री-पुरुष को बराबर मानता था। प्रजातन्त्र पर उसका अटूट विश्वास था। बच्चो पर माता-पिता का कडा शासन वह पसन्द नही करता था। अन्धविश्वासों का तो वह कट्टर दुश्मन था। वह समझ से काम लेने और

विज्ञान के नियमो को मानने की वकालत करता था। सबसे बडी बात यह थी कि बर्नार्ड शा कभी नाराज नही होता था। हँसी-मजाक और भलमनसाहत बराबर उसके साथ रही।

वह परम्परा को तोडने का हामी था और उसने खुद उन्हे तोडा। लेकिन वह तोड-फोड नई परम्परा बनाने के लिए होती थी। नया समाजवादी समाज बनाने का स्वप्न उसकी आंखों मे था। वह परम्परा का मजाक उड़ाता था—हमें हँसाने के लिए और हँसी-हँसी मे हमारी आखे खोलने के लिए। वह पुराने माने हुए नियमो को ललकारता था, जिससे हम साफ-साफ सोच सके। 'एंड्रोक्लीज एंड दि लायन', 'सेंट जोन', 'मिसेज वारेस प्रोफेशन', 'मैन एंड सुपरमैन', 'पिगमैलियन' और 'सीजर एंड क्लियोपात्रा' उसके बहुत ही अच्छे नाटक है। शा 1950 मे हमारे बीच से उठ गया।
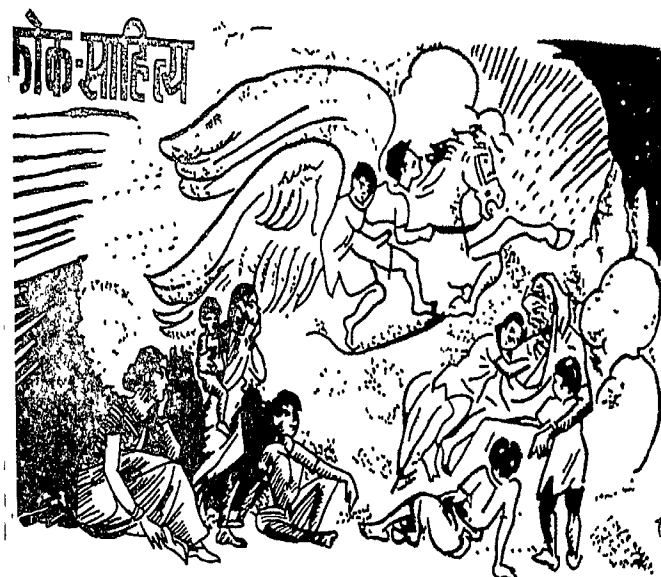
भारत के लोकगीत

लोकगीत उन गीतो को कहते है जो किसी देश की जनता मे आम तौर से गाए जाते है। वे देश के जीवन के सच्चे दर्पण होते है।

लोक गीतो का दायरा बहुत बडा होता है। घर और खेत, मौसम की सर्दी-गर्मी, पशु-पक्षी, पेड-पौधे, मेले और उत्सव, यानी जन्म से लेकर मरने तक के सुख-दु ख की सब घटनाए लोकगीतो मे मौजूद रहती है। लोकगीत कही सारगी पर गाया जाता, है तो कही इकतारे पर, कही ढोलक पर, तो कही घडे पर। कही चर्खे की घ्-घ् उसमे स्वर भरती है, तो कही पायलो की झकार उसे उभारती है।

लोक गीतो में आम तौर पर किसी एक इन्सान की कहानी नही होती। उनका असली रूप वही उभरता है, जहां वे किसी पूरे गिरोह या कौम की आवाज होते है। कभी-कभी गाँव के गाँव और शहर के शहर किसी लोक गीत की एक कडी मे हमारे सामने तस्वीर की तरह आकर खिच जाते है।

इन्सान जिस मिट्टी मे खेला, कूदा और पला होता है और जिस मिट्टी से उसका जीवन-मरण का नाता है, उसके साथ उसकी एक खास ममता होती है। इसीलिए लोकगीतो में अक्सर धरती माता का प्यार ठाठे मारा करता है। यदि धरती से सम्बन्ध रखनेवाले देश-देश के लोक गीत जमा किए जाए, तो मालूम होगा कि किस तरह हर देश मे इन्सान की आवाज एक से दिलो से निकलती है और एक से स्वरों में सुनाई पडती है। आदमी की रगो मे बहनेवाले लहू की तरह धरती का प्यार अनगिनत पीढियो से लोगो के मन मे हिलोरे मारता आया है। धरती से आदमी का सबसे बडा नाता यह है कि धरती से वह अन्न उपजाता है। इसलिए स्वभावत. अच्छी पैदावार की सूचना देनेवाली हरियाली से लदी धरती को देखकर आदमी का मन खुशी से नाच उठता है। नीचे बुन्देलखड का एक लोक गीत है जिसमे धरती का बहुत ही सुन्दर चित्र मिलता है। यह गीत ससार के चुने हुए गीतो मे जगह पा रहा है।

धरती माता तैंने काजर दये
सेंदुरन भर लई माग
पहर हरियल ठाढी भई
तैंने मोह् लयो जगत ससार।

(हे धरती माता ! तुमने आंखों मे काजल डाल लिया और सिंदूर से अपनी माग भर ली। हरियाले वस्त्र पहनकर तुम खडी हो गई हो। तुमने सारे ससार को मोह लिया है।)

बुन्देलखडी लोकगीतो मे धरती माता को बार-बार बुलाया गया है।

धरती माता तो मे दो भये
एक आधी एक मेय
मेय के बरसे साखा भई
जा मे लिपट लगे ससार

(हे धरती माता ! तुमसे दो चीजें पैदा हुईं, एक आधी, एक मेह। मेह बरसने से खेती उगती है जिसमे ससार लिपट जाता है।)

एक गुजराती गीत मे भी इससे मिलता-जुलता चित्र खींचा गया है। यह विवाह का गीत है और यो शुरू होता है·

ससार मा बल सरज्या,
इक धरती बीजे आप,
वधावो रे आवियो।

(ससार मे दो बलवान चीजो की सृष्टि हुई . एक धरती, दूसरा आकाश, बधाई का दिन आ गया।)

इसी गीत मे आगे बताया गया है कि आकाश से जल बरसा और धरती ने उसका भार सहन किया, जिससे फसले लहलहाने लगी। इसीलिए उस दिन को बधाई का दिन कहा है।

पजावी गीतो में भी यही आवाज सुनने को मिलती है

धरती जेडा गरीब न कोई,
इन्दर जेडा न दाता,
नछमन जेडा जती न कोई,
सीता जेडी न माता,
दुनिया मोह मंगदी
रब्ब सबना दा दाता।

(धरती के समान कोई गरीब नही, इन्द्र के समान कोई दाता नही, लछमन के समान कोई जती नही, सीता के समान कोई माता नही। दुनिया मेंह मागती है, भगवान सबके दाता हैं।)

पुराणों के अनुसार इन्द्र ही पानी वरसाते हैं। इसलिए ब्रज के एक गीत में इन का वखान इस तरह किया गया है :

चौकी तो चन्दन, इन्दर राजा बैठनो जी,
एजी कोई दूध पखारूगी पाय,
आज मेहर कर इन्दर राजा देश मे जी।

(हे इन्द्र राजा ! मैं तुम्हे चन्दन की चौकी पर बिठाऊगी, दूध से तुम्हारे पैर धोऊंगी। हे इन्द्र राजा ! आप हमारे देश पर दया करो यानी मेह वरसाओ।)

ब्रज के एक दूसरे गीत मे वादलो की घटा को रानी कहकर पुकारा गया है। उस रानी से प्रार्थना की गई है—"हे मेघरानी ! भाइयो ने वहिने छोड दी, बैलो ने जुआ छोड दिया, स्त्रियो ने पति छोड दिए, गौओ ने बछडे छोड दिए, भैसो का दूध सूख गया। अव तुम जल्दी आओ, हमे धीरज वधाओ और मूसलाधार बारिश ले आओ।"

जव पानी नही वरसता तो लोक गीतो मे अकाल का चित्र सामने आता है। वार-वार इन्द्र देवता से प्रार्थना की जाती है। एक मैथिली लोक गीत यो शुरू

होता है

हाली हुलु वरसु इनर देवता,
पानी विनु पडछइ अकाले हो राम।

(जल्दी वरसो, इन्द्र देवता ! पानी के विना अकाल पड़ रहा है' हे राम !)

डलहौजी से ऊपर चम्वा पहाडी का एक गीत इसी चित्र को और उभारता है :

गडक चमक भाइया मेघा हो,
वरह् चमियालो दे देसा हो,
कीह़ा गडका कीह़ा चमका हो,
सरग मरोरा तारे हो !

("गरजो और चमको, हे मेघ भैया, चम्बा के देश पर खूब वरसो।" "कैसे गरजू, कैसे चमकू ? आकाश तो तारो से भरा हुआ है।")

सिंधी लोक गीतो मे भी वार-बार वादल से प्रार्थना की गई है :

सारग सार लहज अलहा लग उजन जी,
पाणी पवज पटन में अरजान अन्न करेज,
वतन वसाएज तए सधारण सुख थिए।

(हे मेघ, अल्लाह के लिए प्यासो की खवर लो, खेतो मे पानी वरसाओ, अन्न को सस्ता करो, वतन को वसाओ जिससे सुख ही सुख हो जाए।)

लोक गीतो मे वादल को एक मित्र की तरह बुलाया गया है। इसीलिए उसमे अपनापन छलकता है। हमारे देश मे जनता का जीवन खेती पर निर्भर है। इसीलिए वर्षा सम्वन्धी गीतो मे जनता के दिलो की धडकने सुनाई देती है।

लोकगीतो मे ग्राम-जीवन की खुशिया और उमगे उछलती है, आशाए खिलती है और इन्सान की कल्पनाए नए रूप ढालती है। तिरहुत का यह चित्र इन्ही खुशियो की ओर इशारा करता है :

स्वाधीनता-दिवस पर सौराष्ट्र का लोक नृत्य

कोकटी धोती पटुआ साग,
तिरहुत गीत बड़े अनुराग,
भाव सरल तन तरुणी रूप,
एतवे तिरहुत होइछ अनूप।

(कोकटी की धोती, पटुआ का साग, अनुराग के गीत, रूपवती युवती की भाव भरी सुन्दरता, इन्ही के कारण तिरहुत अनुपम है।)

राजस्थानी लोक गीतों में जहा एक तरफ जयपुर की वरसात की तारीफ की गई है, वहां दूसरी तरफ उदयपुर के प्रसिद्ध पिछोला सरोवर पर पानी भरती पनिहारिनो की रूप-छटा को भी नही भुलाया गया। यह गीत एक नगर से सम्वन्ध रखते हुए भी समूचे राष्ट्र का प्रतिनिधि है

वालो लागे छे म्हारो देसडो ए लो,
केमकर जाबू परदेस बाला जी।
ऊचा ऊचा राणे जी रा गोखडा ए लो,
नीचे म्हारे पीछोले री पाल, वाला जी।
बादल छाया देश मे, हे लोय,
नदियां नीर हिलो हिल रे,
बादल चमके विजली,
चमक चमक झड लाय,
सरवर पानी ड़े मे गई ए लो,

भीजे म्हारी सालूड़े री कोर बाला जी,

वालो लागे छे म्हारो देसड़ो ए लो,

केमकर जावू परदेस बाला जी !

(मुझे मेरा देश प्यारा लगता है। हे प्रीतम, मै परदेश कैसे जाऊ ? ऊचे-ऊचे राणा जी के झरोखे हैं। हे प्रीतम ! नीचे है मेरे पिछोला का किनारा। देश में बादल छा गए, नदियो मे जल हिलोरें ले रहा है, बादलो मे बिजली चमकती है, चमक-चमक कर झडी लगा देती है। मैं सरोवर पर पानी लेने गई। हे प्रीतम ! मेरे सालू की कोर भीग रही है। इन कारणो से मुझे मेरा देश प्यारा लगता है। हे प्रीतम ! मैं परदेश कैसे जाऊ ?)

लोक गीत की शक्ति उसकी सादगी मे है। इसी सादगी के कारण लोक गीत कभी पुराना नही पडता। जहा इसमे पिछली पीढ़ियो की आवाज हम तक पहुचती है, वहा उसमें इतनी लोच रहती है कि उसे आनेवाली पीढिया भी झट से अपना लेती है।

गढवाली लोकगीत में मलेथ गाव का चित्र कितना भी सीमित क्यो न हो, इसमें पूरे गढवाल का चित्र देखा जा सकता है

कैसो न भडारी तेरा मलेथ ?
देखो मालो ऐन सैंवो मेरा मलेथ
ढलकदी गूल मेरा मलेथ
गाऊ मूडको घर मेरा मलेथ
पालगा की बाडी मेरा मलेथ
लासण की क्यारी मेरा मलेथ
गाइयो को गोठ्यार मेरा मलेथ
भैंसो की खुरीक मेरा मलेथ
बादू का लडाका मेरा मलेथ
वैखू का ढसाका मेरा मलेथ

(कैसा है ओ भडारी, तेरा मलेथ ? देखने में भला लगता है, साहबो मेरा मलेथ। ढलकती जलधार मेरा मलेथ। गाव की ढाल मे है मेरा घर·····मेरा मलेथ। पालकी की बाडी ' मेरा मलेथ। लहसन की क्यारी ·· ' मेरा मलेथ।

गउओ की गोठ······मेरा मलेथ। भैंसों की भीड······मेरा मलेथ। युवतियों का झुंड······मेरा मलेथ। जवानो का धक्कम-धक्का······मेरा मलेथ।)

लोकगीतो में जहां प्रकृति से सौ-सौ प्रार्थनाए की गई है, वहा मनुष्य का यह विश्वास भी उभरता है कि वह कठिनाइयों से घबरा कर हार नही मानता।

लोक गीतो में पशु-पक्षियो के साथ भी गहरी सहानुभूति रहती है। बगाल के एक लोक गीत में घायल हिरनी शिकारी को भाई कहकर पुकारती है।

हरिणी घास खाय, शिकारी तामाशा चाय,
आचम्बिले मारिलो शेलेर घा, तखन हरिणी वले रे,
की शेल मारिली भाई तीरन्दाज रे।

(हिरनी घास चर रही है, शिकारी निशाना बाध रहा रहा है। अचानक उसने उसे तीर से घायल कर दिया। हिरनी कहती है, "क्या तीर से घायल किया है, तुमने ओ भाई तीरन्दाज!")

यह गीत बहुत लम्बा है। कभी हिरनी सोचती है कि मेरा मांस इतना मजेदार है कि मनुष्य मेरा वैरी हो गया। कभी वह कहती है कि मुझे अपने मरने का तो शोक नही, लेकिन मुझे यह चिन्ता सता रही है कि मेरे दूध पीते बच्चे की किसी को परवाह न होगी। अंत मे वह शिकारी के बजाय उस लुहार को शाप देती है जिसने उसे घायल करने के लिए तीखा तीर बनाया।

हिरनी के दुःख में भी आदमी ने एक तरह से अपना ही दुःख गा सुनाया है।

लोक गीतो में तीखे ताने भी मिलेंगे और खुल कर मजाक भी। नीचे का उड़िया लोक गीत विवाह के अवसर पर ज़ब गाया जाता है, तब

खासा रग जमता है :—

पिपडी बापुरा, बिभा होइ गला, गगने उड़िला धूलि,
बिलर ककडा मर्दल बाजाइ, बेंगो देला हुलहुलि।

(बेचारी चीटी का विवाह हो गया। आकाश मे धूल उड़ रही है। बिल के केकडे ने ढोल बजाया और मेंढक ने हुलहुलि की आवाज निकाली।)

शुभ अवसरो पर स्त्रियो के मुह से निकलने वाली इस ध्वनि को उड़ीसा मे 'हुलहुलि' कहते है। उडिया लोक गीत मे स्त्रियो की 'हुलहुलि' की मेंढक की आवाज से तुलना करते हुए अच्छा व्यग किया गया है।

जहा लोक गीत है, समझो वहा जीवन से प्यार है। जाडो की रात मे अलाव के गिर्द बैठे हुए बचपन के साथी किसी जाने-पहचाने गीत मे खोए हुए सपने जगाते हैं। चादनी रातो मे बचपन की सखिया चूडियो की छनक और पायलो की झकार से लोकगीत को चार चाद लगा देती है। जब फसले पकती है और नए अनाज की सुनहरी बालिया लोगो को गुदगुदाती है, तब गाव की सोई हुई आत्मा एकाएक जाग उठती है। इस खुशी मे तरह-तरह के नाच होते हैं। हर नाच मे नए पुराने गीतो की परख भी होती है। बहुत से नए गीत जिनमे इतना दम नही होता कि समय के प्रवाह मे टिक सके, पीछे रह जाते है। लेकिन कुछ नए गीत इतने जोरदार होते है कि उन्हे कोई शक्ति दबा नही सकती। हमारी राष्ट्रीय आजादी की लडाई और जनता के आन्दोलन से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से लोकगीत देश के अलग-अलग हिस्सों मे लोगो के जीवन मे रम गए हैं।

इस विशेषता के कारण लोकगीतो मे कभी परम्परा की झांकी मिलती है और वह धरती से लगाव बतलाते है और कभी जीवन के उतार-चढाव का चित्र सामने आता है।

लोकगीतो की भाषा मे तगदिली की बू तक नही होती। उनमे अलग-अलग भाषाओ से आए हुए शब्द एक जगह आकर गले मिलते है। यह हमारे राष्ट्र के लिए गर्व की बात है। नए साहित्य की रचना के लिए यही आदर्श है।

लोक साहित्य (2)

भारत की लोककथाएं

भारत की कोई बोली ऐसी नही, जिसमे लोककथाए यानी घरेलू कहानिया न हो। बचपन से ही बालक की शिक्षा मे ये कहानिया हाथ बटाती है। कोई घर ऐसा न होगा, जहां बालक दादी से कहानी सुनने को न मचलते हो।

गाँव की चौपाल मे या अलाव के पास कहानी सुनाने वाले के चारो ओर बूढे और जवान सब जमा हो जाते है। कहानी सुनाते समय यह जरूरी समझा जाता है कि सुनने वालो मे से एक हुकारी भरता जाए। इसमें जरा सुस्ती हुई नही कि कहानी सुनाने वाला कहानी को बीच मे रोक कर कह उठता है, 'क्यो, सो रहे हो?' इससे हुकारी भरने वाला फिर सावधान होकर अपना काम करने लगता है।

लोककथाओ मे लोगो के आचार-विचार की झलक दिखलाई दे जाती है। समाज का चित्र नजर आ जाता है। रीति-रिवाज और धार्मिक विश्वासो पर प्रकाश

पडता है। किसी युग की सभ्यता और सस्कृति की पहचान के लिए उस युग की लोककथाओं से बडी सहायता मिलती है।

लोककथाओ मे तर्क या बहस का कुछ काम नही, और न किसी बात को असम्भव या अनहोनी कहा जा सकता है। उनमे किसी के नाम नही रहते, रहते भी हैं तो काम चलाऊ। जगहो के नाम तो और भी बेपता होते हैं। पशु-पक्षी ही नही, पहाड़ और ईंट-पत्थर भी बाते करते है। लोककथाओ की इन बातो पर कभी सदेह नही किया जाता। लकडी का घोड़ा आकाश म दौड लगाता है। जादू के जोर से रातो-रात महल तैयार हो जाते हैं। साधु की झोली या किसी अगूठी की शक्ति से किसी को मनचाही चीज मिल जाती है। दीवार पर बने हुए चित्र भी हिलते-डुलते है।

सीधे कहो तो बात का कुछ भी असर न हो। मगर लोककथाओ के सहारे उसमे चमत्कार नजर आने लगता है। बीच-बीच मे दोहो या गीत के बोलो से भी सहायता ली जाती है।

नागाओ की एक लोककथा है। एक साभर हिरन और एक मछली में दोस्ती हो गई। साभर ने मछली से कहा, 'जब शिकारी कुत्ते मेरा पीछा करेंगे, मै नदी के किनारे-किनारे भागूगा। उस समय तुम पानी उछाल-उछाल कर मेरे पैरो के निशान मिटाती रहना।' मछली ने भी अपने बचाव के लिए साभर से प्रार्थना की, 'तुम मनुष्य को जगल से वह जहरीला बेल तोड़ कर लाने से रोकना जिससे वह मुझे पकड़ता है।' उसी समय से साभर जब देखो, अपने सीगो से उस जहरीली बेल को खोदता दिखाई देता है।

इस तरह की बहुत-सी कहानिया आदिवासी जातियो में मिलती है। उनमें किसी न किसी पशु-पक्षी के स्वभाव का कोई न कोई कारण खोज निकालने का यत्न किया गया है।

लोककथाओ का जन्म मनोरजन की इच्छा से हुआ होगा। समय विताने के लिए कहानी की मांग स्वाभाविक है। पर गहरी समझ की वातें भी इन कहानियो मे काफी होती हे। व्रतों और पूजा-पाठ के साथ अनेक कहानिया जुड़ी है। बंगाल की लोक-कथाओं का वहुत वड़ा भाग व्रत-कथाओ के रूप में ही फूला-फला है। हमारे देश के दूसरे भागों मे भी व्रत-कथाएं किसी न किसी रूप मे अवश्य मिलती हैं। उनमे वहुत सी कहानियां ऐसी है, जो न पौराणिक हैं और न धार्मिक। वे बस घरेलू कहानियां हैं।

लोककथाओ का नायक कभी-कभी कोई ऐतिहासिक पुरुष भी हो सकता है। पंजाब मे राजा रसालू की कहानिया मशहूर हैं। इन कहानियो की सब घटनाएं कल्पना की उडान मालूम होती हैं। इसी तरह की कहानियां देश-देश मे वीर पुरुषों के साथ जुड कर वीरगाथाओ के रूप में मिलती हैं। चरित्र का बखान ही इन कहानियों की विशेषता है।

शब्दों के नए-नए प्रयोग भी लोककथाओ मे कम नही मिलते। बुन्देलखंडी लोक-कथाओं मे वीर रस की गाथा के लिए 'कड़खा' शब्द वहुत चालू है। 'कडखा' गाने वाले को 'कडखेत' कहते हैं। सूरज की धूप से वचने के लिए जो छत्र लगाया जाता है उसे 'सूरजमुखी' कहा गया है। एक साथ जलने वाली दो बत्तियो की मशाल के लिए वुन्देलखडी लोककथा में 'दुशाखा' शब्द मिलता है। 'परिधान' का बदला हुआ रूप है 'परदनी' जो धोती के लिए वरता जाता है। रुपये रखने की थैली 'वसनी' है।

इस तरह लोककथाए भाषा के विकास में भी सहायक होती है। नित नए शब्द हमारे परिचित मित्रो की तरह सामने आते हैं और उनके साथ हम घुल-मिल जाते है।

भारत कहानियो का देश है। 'वृहत कथा', 'कथा सरित्सागर', 'पंचतंत्र', और 'जातक' जैसे कथा-सग्रह हमारे यहा बहुत है। हमारे इन पुराने संग्रहों की बहुत सी कहानिया थोडे-बहुत हेर-फेर के साथ बाहर भी चली गई है। घूमते-फिरते खाना-बदोश लोगो ने एक देश की कहानिया दूसरे देश मे पहुंचाई। समुद्र के रास्ते व्यापार करने वाले व्यापारी भी कहानियो को फैलाते रहे। इसी तरह जब एक देश की सेना दूसरे देश पर धावा करती थी, तो लडने वाले सिपाही कहानियों के लेन-देन में बिचवानी का काम करते थे।

इसीलिए दुनिया की लोककथाओ मे बडी समानता पाई जाती है। एक ही कहानी थोडे-बहुत हेर-फेर के साथ बहुत-से देशो मे सुनने मे आती है। कभी-कभी तो अन्तर इतना कम नजर आता है कि सुनने वाला चकित रह जाता है कि एक ही कहानी किस तरह जगह-जगह घूमती रही।

यह बात कहानी के हर रसिया को अचरज मे डाल देती है। लेकिन इसका अनुभव बहुत कम लोगो को हो पाता है। बहुत-से लोग तो यही समझते है कि जो कहानी उनके सामने सुनाई जा रही है, वह उन्ही के गांव की चीज है और दूसरे किसी गाँव या देश तक उस कहानी की पहुंच नही।

भारत की लोककथाओ के अधिकतर सग्रह पहले अंग्रेजी मे छपे। इस बारे मे अनेक यूरोपीय विद्वानो के काम भुलाए नही जा सकते। हाल ही मे डाक्टर वैरियर एलविन ने महाकोशल की लोककथाओ का एक सग्रह बड़ी मेहनत से तैयार किया है। डाक्टर एलविन ने अपनी पुस्तक की भूमिका मे बताया है कि अब तक भारत, लका तिब्बत, बर्मा और मलाया मे कुल मिला कर कोई तीन हजार घरेलू कहानिया छप चुकी है।

लोककथाओ के जमा करने का काम सन् 1866 ई० मे आरम्भ हुआ और उस साल मध्य-भारत की आदिम जातियो मे प्रचलित लोककथाओ को उनके अंग्रेजी अनुवाद के साथ छपवाया गया। उसके बाद दक्षिण-भारत, बगाल और पंजाब की लोककथाए प्रकाशित हुई। कुछ साल बाद सथाली कथाए और कश्मीरी कहानिया

निकली। बीसवीं सदी के आरम्भ में शिमला की ग्रामीण कहानियां और पंजाब की प्रेम कहानियां छपीं। पहले महायुद्ध से पहले जो लोककथाएं प्रकाशित हुई, उनमें 'बंगाल की घरेलू कहानियां' और शोभना देवी का 'पूरब के मोती' उल्लेखनीय है। उसके बाद शरत्चन्द्र राय ने छोटा नागपुर की मुंडा, उरांव, खेडिया आदि आदिम जातियों की कहानियां निकाली।

हिन्दी में लोककथाओं का सबसे पहला संग्रह है 'बुन्देलखंड की ग्राम कहानियां' जिसके लेखक हैं शिवसहाय चतुर्वेदी। इसमें सत्ताइस कहानियां है। यह संग्रह सन् 1947 में प्रकाशित हुआ था। उसी साल सत्येन्द्र का संग्रह 'ब्रज की लोककहानियां' प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में इकतालीस कहानियां ब्रज भाषा में ही दी गई है। शिवसहाय चतुर्वेदी का बुन्देलखंडी लोककहानियों का दूसरा संग्रह 'पाषाण नगरी' सन् 1950 में प्रकाशित हुआ। इधर हिन्दी में अलग-अलग प्रान्तों की लोककथाओं के कई संग्रह निकले हैं।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'एक था राजा' नाम देकर कहानियां लिखीं और इस तरह लोककथाओं की परम्परा को आगे बढ़ाया। बहुत-सी कहानियां 'एक था राजा' से शुरू होती हैं। कहानी सुनने वाले यह नहीं पूछते कि राजा का क्या नाम था, उसका राज कहां था, और वह कब राज करता था। बच्चा भी दादी से कहानी सुनते समय राजा के नाम, धाम और समय के बारे में कभी कुछ नहीं पूछता। उसे तो कहानी ही से मतलब रहता है।

जिस तरह हमारे नए कवि लोकगीतों से प्रेरणा ले सकते हैं, उसी तरह हमारे नए लेखक लोककथाओं से अपने देश को समझने में समर्थ हो सकते हैं। जनता की कला कारीगरी की तरह जनता के गीतों और जनता की कहानियों का मोल हर देश में आज बहुत ऊंचा आंका जा रहा है और इन चीजों का आदर बढ़ता जा रहा है। कारण यह है कि उनसे जनता के असली जीवन, उसके विचारों और उसके आदर्शों का ठीक-ठीक पता चलता है।

एक लोककथा

चम्पा का फूल

कहानी सी झूठी नही। बात सी मीठो नही। न कहने वाले का दोष, न सुनने वाले का दोष। दोष जोडने वाले का।

एक था राजा। उसकी थी सात रानिया, पर आल औलाद किसी से न थी। रानियो में छोटी रानी सब से सुन्दर और गम्भीर थी। राजा उसी को सबसे अधिक चाहता था। दूसरी रानिया छोटी रानी को देख देख कर जलती थी। राजा को हर समय चिन्ता रहती कि इतना बडा राज मेरे बाद कौन भोगेगा। इसी प्रकार बहुत दिन बीत गए।

भगवान की कृपा, छोटी रानी औधान से हुई। अब राजा फूले न समाते थे। उन्होंने मंत्री को बुलाकर कहा—सारे राज में डौंडी पिटवा दो कि राजा ने राज-

भंडार खोल दिया है। जिसका जी चाहे, आए और रुपया-पैसा, कपडा-लत्ता, मेवा-मिठाई जो चाहे, झोली भर-भर ले जाए।

महल में हर तरफ खुशिया मनाई जाने लगी। औरते सोहर और बधावे गाती, पुरोहित पूजा-पाठ करते। लडकिया बालिया कोने-कोने घी के दिए जलाती। सारी राजधानी हँसी-खुशी और धूमधाम में इन्द्रपुरी बनी हुई थी। वडी रानियो ने जब यह देखा तो जलभुन कर कोयला हो गई। मन ही मन सोचने लगी, अब क्या किया जाए ?

राजा ने छोटी रानी के पास नगाडा रखवा दिया और कहा—जब लड़का हो तो इस पर एक चोब मार देना। मै सब काम छोड आ जाऊगा।

इधर राजा यह कह दरबार में गए, उधर और सब रानिया छोटी रानी के रनवास में पहुची और अनजान बनकर उससे पूछने लगी कि राजा ने यह नगाड़ा क्यों रखवाया है ? रानी ने अपने भोलेपन मे सब बात बता दी। बड़ी रानियो ने राजा के इस प्रेम पर उसे बधाई दी और कहा—कहो तो तो जरा आजमा ले ?

छोटी ने कहा—हां, जरूर।

वडी रानिया वोली—पर राजा से न कहना कि नगाडा हमने वजाया था और उन्होंने नगाडे को जोर-जोर से पीटना शुरू किया।

राजा दौडे-दौडे महल मे आए, तो छोटी ने हँस कर कहा—यों ही देख रही थी, कैसा वजता है।

राजा वोले—खैर, कोई वात नही। पर अव यों ही न वजाना।

राजा रनवास से वाहर गए, तो रानियो ने छोटी रानी को तानों से छेद कर रख दिया। वस मालूम हो गया राजा के प्रेम का हाल। ऐसे समय भी तिनक गए।

छोटी ने झेंप कर कहा—नही, वह मुझसे नाराज कभी नहीं हो सकते।

वडी वोली—अच्छा देखते हैं। यह कह कर वे फिर नगाडा वजाने लगी।

अव तो राजा ने समझा कि सचमुच कुछ हुआ है। पर इस वार भी वह लज्जित और खिसियाए दरवार वापस आए। लौटते समय वह रानी से कह आए थे, अव तुम नगाडा पीट-पीट के फाड दोगी, तो भी मैं न आऊंगा।

दरबार में बड़ी रानियों के कुछ पक्षपाती भी थे। उन्होने राजा का क्रोध और बढ़ा दिया और जब तीसरी बार नगाड़ा बजा, तो राजा ने रनवास की ओर मुह फेर कर भी न देखा।

छोटी रानी के एक कुमार और एक राजकुमारी हुई। दोनों बच्चे ऐसे सुन्दर जैसे चांद के टुकड़े।

छोटी रानी ने कहा—तनिक बच्चे मुझे भी दिखाओ।

बड़ी रानियां मटका कर बोली—ले, देख ले, तेरे यह मरे हुए चूहे हुए है। इन्हे अपनी छाती से लगा ले।

छोटी रानी यह सुनते ही बेहोश गई।

अब बड़ी रानियो ने बच्चो को दो हाडियो में बन्द कर दूर कही घूरे पर फेंकवा दिया और राजा को सदेश भेजा—छोटी रानी की भूल को क्षमा कर दीजिए और अपने बच्चो को आकर देख जाइए।

जब राजा रनवास में आए तो मक्कार रानियो ने राजा के सामने मरे हुए चूहे लाकर रख दिए और कहा—महाराज, यह बात महल के बाहर जाने की नही है। छोटी रानी के पेट से ये दो चूहे पैदा हुए है।

यह सुनना था कि राजा आग बबूला हो गए। कड़क कर बोले—छोटी रानी को अभी महल से निकलवा दिया जाए।

बडी रानियो ने हाथ जोड़ कर प्रार्थना की—ऐसा न कीजिए, बात फैल जाएगी और फिर उस बेचारी का दोष भी क्या है ? उसे महल में ही रहने दीजिए। हम उसे कौवा हकनी बनाएगी।

राजा ने आज्ञा दी और छोटी रानी को टाट के कपडे पहना कर एक फटा बाँस हाथ मे दे दिया गया। अब वह महल के कौवे हाँकती। उसे जौ की एक रोटी खाने को और कुज्जा भर पानी पीने को मिलता।

होनी बलवान। इधर बडी रानियो ने हांडियां घूरे पर फेंकवाई, उधर एक साधु अलख जगाता घूरे के पास से निकला। साधु की नजर हांडियो पर पडी। उसने देखा, फूल जैसे दो बच्चे हाडियो मे लेटे पाव के अगूठे चूस रहे है। साधु ने बच्चो को उठा लिया और उन्हे अपनी कुटिया मे ले गया। वहा उनकी खूब देख रेख की। बच्चे बडे हुए और उनकी सुन्दरता और चतुराई की बात रानियो के कान तक पहुंची। वे सोचने लगी, ऐसा न हो कि भेद खुल जाए। उनको मरवा देना अच्छा है।

तब रानियो ने सलाह करके खोये के पेडे बनवाये और दो पेडो मे जहर मिला दिया। चौमक जला कर थाल मे रखी और अपनी एक बूढी कहारिन को देकर कहा—जाओ, ये दो पेडे साधु के लडकी-लडके को खिला देना और बाकी का प्रसाद बांट देना।

साधू ने बच्चो से कह रखा था, कभी किसी की दी हुई चीज बिना मुझे बताए न खाना। पर नादान बच्चे साधु की सीख भूल गए।

वावा रोज की तरह अलख जगाने निकले, और वच्चे कुटी के सामने आकर खेलने लगे। वूढी कहारिन ने मौका पाकर जहर मिले पेड़े दोनो को खिला दिए और वच्चे तडप-तडप कर मर गए।

वावा शाम को लौटे, तो देखा कि कोई वैरी चाल चल गया है और फूल से मुखडे धूल-मिट्टी से अटे पडे है। साधु ने यह देखकर सिर पीट लिया। पर अब करता ही क्या ? लाचार रो-धो कर जव शान्त हुआ तो कुटी के सामने एक गढा खोदा और दोनों को दवा दिया।

जिस जगह कुमार और राजकुमारी दबाए गए थे, वहा वर्षा ऋतु में एक आम का पौधा निकला और एक चम्पा का। पल-पल दोनों पौधे बढने लगे। आम के पौधे में ऐसे आम आए कि कभी किसी ने न देखे थे, न सुने थे, और चम्पा के फूलों की सुगन्ध से दूर दूर तक जहान महक उठा।

एक दिन की वात। राजा अपनी रानियो को लिए वाग में टहल रहे थे। छोटी रानी टाट के कपड़े पहने, फटा वास हाथ में लिए दूर खडी राजा और रानियों को देख रही थी। इतने में एक कौवा चम्पा का फूल चोच में दबाए आया और फूल राजा के ऊपर फेक दिया। रानियो ने फूल जमीन से उठाया और कहा—इतना सुन्दर और इतना वडा फूल तो आज तक देखने मे नही आया। इसकी सुगन्ध भी कैसी अच्छी है।

राजा वोला—हा, कैसा मन मोहक फूल है। मैं अभी और मगवाने का प्रबन्ध करता हू।

राजा ने मन्त्री को वुलाकर फूल दिया और कहा—ऐसे और फूल तुरन्त लाए जाएं।

मन्त्री ने सिपाही वुलवाए और कहा—जाओ, जहां कही ऐसे फूल मिले तुरन्त लेकर आओ।

सिपाही ढूढते-ढूढते साधु की कुटिया के पास पहुचे, तो क्या देखते है कि उसी रंग रूप और उसी सुगन्ध के फूलो से चम्पा का एक पेड़ लदा खड़ा है और पास ही

एक आम का पेड भी है। सिपाही जब पेडो के पास पहुचे, तो चम्पा की जड से आवाज आई--बीरन भैया, बीरन भैया, पिता के महल से सिपाही फूल लेने आए हैं। दो हाथ नीचे आ जाऊ, कि दो हाथ ऊपर उठ जाऊ ?

अम्बा की जड से आवाज आई--ना बहन चम्पा, ना बहन चम्पा, दस हाथ ऊपर उठ जाओ।

सिपाही यह माजरा देखकर दग रह गए और उन्होने मन्त्री को जाकर सब हाल बताया।

मन्त्री ने कहा--जाओ, जाकर एक बडी सी सीढी लाओ और मेरा घोडा तैयार कर दो। मैं अभी जाकर फूल लाता हू। तुम सब बडे निकम्मे हो।

मन्त्री सीढी लिए घोडा सरपट दौडाता पल भर में कुटिया जा पहुचा।

चम्पा की जड़ से फिर आवाज आई--बीरन भैया, बीरन भैया, देखो बूढे मन्त्री आप फूल लेने आए है। दो हाथ नीचे आ जाऊ, कि दो हाथ ऊपर उठ जाऊं ?

अम्बा की जड से आवाज आई--ना बहन चम्पा, ना बहन चम्पा, दस हाथ ऊपर उठ जाओ।

देखते-देखते चम्पा का पेड इतना ऊचा हो गया कि सीढी लगाने पर भी मन्त्री की पहुच से दस हाथ ऊपर रहा। मन्त्री ने लाख जतन किए, पर एक फूल हाथ न आया। बेचारा थका हारा, अपना सा मुह लेकर राजा के पास पहुचा और सब हाल कह सुनाया।

राजा ने कहा--जाओ, जाकर मेरा हाथी लाओ। मैं अभी जाकर फूल लाता हू। तुम सब बडे निकम्मे हो।

राजा हाथी पर बैठ रानियो, सिपाहियो और मन्त्री समेत साधु की कुटिया पर पहुचे। देखा कि चम्पा की डाले फूलों से लदी धरती छू रही है और आम के पेड़ पर ऐसे आम लगे हैं मानो पन्ने पुखराज जडे है।

इस बार फिर चम्पा की जड से वडी प्रेम भरी आवाज आई—बीरन भैया, बीरन भैया, जरा देखो तो। अब की पिता जी खुद फूल लेने आए हैं। दो हाथ नीचे आ जाऊ, कि दो हाथ ऊपर उठ जाऊ ?

अम्बा की जड से आवाज आई—ना बहन चम्पा, ना बहन चम्पा, दस हाथ ऊपर उठ जाओ।

देखते-देखते चम्पा का पेड इतना ऊचा हो गया कि राजा ने लाख जतन किए, पर एक फूल हाथ न आया।

अब चम्पा ने कहा—अपने पिताजी को खाली हाथ लौटाना ठीक नही।

भैया ने कहा—अच्छा, तो पिता जी से कहो, उस अभागिन को बुलाए जिसे कौवा हकनी बना रखा है। फिर जितने फूल चाहे तोड़ ले।

राजा यह सब देख दग रह गए और रानियो का माथा ठनका कि कुछ दाल में काला है।

कौवा हकनी टाट के कपडे पहने, हाथ में फटा बास लिए एक टूटी सी डोली मे बैठ कर आई। माता की डोली देख चम्पा बिलख-बिलख कर रोने लगी—वीरन भैया, वीरन भैया, अब तो अपनी मा का डोला आया है। तुरन्त बताओ, दो हाथ नीचे हो जाऊ ?

अम्बा की जड से आवाज आई—हां बहन चम्पा, हा बहन चम्पा, अब देर क्यो ? मा की गोद मे झूल जाओ।

फिर क्या था, चम्पा की डाले छोटी रानी के डोले से लिपट गई और उसकी गोद मे झूलने लगी। मा की छाती से दूध की धारे बह निकली। अम्बा ने रो-रो कर पूरी कहानी मा को कह सुनाई और बोला—हमे जल्दी जमीन से निकलवाइए।

राजा ने सिपाहियो से कहा—अभी जमीन खोदो और कुमार और राजकुमारी को बाहर निकालो। सिपाहियो ने ऐसा ही किया और चांद-सूरज से जगमगाते कुमार और राजकुमारी दौड कर माता-पिता से लिपट गए।

राजा ने हुकुम दिया कि बडी रानियो को हाथी के पाव से बाध कर सारे नगर मे घुमाया जाए और छोटी रानी रनवास मे फिर उसी तरह सुख-चैन से रहे, जैसे पहले रहती थी।

भगवान ने जैसे रानी के दिन फेरे, वैसे ही सबके दिन फेरे।

चींटी

चीटिया अपनी बस्तिया बना कर रहती है। तितली या भुनगे की तरह अकेला रहना उन्हे नही भाता। चीटिया अपनी बस्ती के सब काम आपस मे बाट लेती है और मिल-जुल कर सब काम पूरा करती है।

चीटिया बहुत तरह की होती है। संसार मे उनकी लगभग 3,000 जातियों का पता लग चुका है। उनमें से हर जाति की चीटी के काम अलग-अलग होते है।

उदाहरण के लिए एक तरह की चीटी 'किसान' चीटी कहलाती है। वह अपनी खेती मे अनाज पैदा करती है और बस्ती के रहने वालो को खिलाती है।

'दरजी' चीटी पेड़ के पत्ते जोड कर उन्हे गेंद की तरह गोल करके उनमे घर

बनाती है। 'रानी चीटी' गुलाम और लौडिया पालती है और उनसे तरह-तरह के काम लेती है। वह पास की किसी बस्ती से चीटी के बच्चे और अडे ले आती है। बडे हो जाने पर वे बस्ती के अलग-अलग कामो मे लगा दिए जाते हैं।

'सिपाही चीटी' को लडने के अलावा और कोई काम अच्छा नही लगता। वह चीटियो की दूसरी बस्तियो पर हमला करके उन्हे लूटती है और अपनी बस्ती को खाने-पीने की चीजो से भर लेती है।

चीटी की एक जाति का नाम "कुप्पा चीटी" है। वह अपने पेट मे शहद इकट्ठा करती है और इतना शहद भर लेती है कि फूल कर कुप्पा हो जाती है। इस तह चीटी की हर

जाति की कोई न कोई विशेषता होती है।

चीटी की हर बस्ती मे नर, मादा और कमेरी, तीन तरह की चीटिया होती है। कमेरी नर या मादा नही होती। वह जन्म से मौत तक बस्ती की सेवा करती रहती है और बस्ती के लिए अपने प्राण निछावर कर देती है। कमेरी के पख नही होते। नर और मादा चीटियो के पख होते है, जिन्हे वे अपने जीवन मे केवल एक बार शादी के अवसर पर काम में लाती है।

बस्ती की मादा चीटियां यों तो जवान होते ही बिना नर के सयोग के अडे देने लगती है, पर शादी से पहले उनके अडो में से कमेरी या मादा चीटिया पैदा नही होती। उन अडो मे से केवल नर चीटिया पैदा होती है। कमेरी और मादा चीटी रानी के अडो में से ही निकलती है। नर चीटिया बस्ती के किसी काम को हाथ नही लगाती। वे केवल विवाह के दिन के लिए पाल पोस कर बडी की जाती है।

जब बस्ती में नर और मादा चीटियो की सख्या काफी हो जाती है तो सुहावने मौसम मे कोई अच्छा-सा दिन ठीक करके चीटियो का विवाह होता है।

विवाह के दिन ये चीटिया पहली और अन्तिम बार उडती है और हजारों की गिनती में आकाश मे फैल जाती है। मादा चीटिया आगे-आगे जाती है, नर उनका

पीछा करते हुए दूर-दूर तक निकल जाते है। जो नर तेजी से उड कर किसी मादा को पकड लेता है, वही उसका पति बन जाता है।

आकाश मे ही उनका जोड़ा मिलता है और उसके बाद तुरन्त ही दोनो नीचे उतर आते हैं। बेचारे नर तो वही गिर कर मर जाते हैं और मादा चीटी, जो अब रानी बन जाती है, उतरते ही या तो किसी बसी बसाई बस्ती मे चली जाती है या अपनी बस्ती अपने-आप बसाती है।

दोनो हालतो मे वह अपने पख नोच डालती है और बस्ती के किसी कमरे मे या किसी छोटे से बिल मे जाकर कई सप्ताह तक चुपचाप लेटी रहती है। अंडे अन्दर ही अन्दर बढने लगते है। उन दिनो चीटी कुछ खाती-पीती नही है। उसके शरीर की चरबी घुल-घुल कर उसका भोजन बनती रहती है।

कई सप्ताह तक चुपचाप पडी रहने के बाद रानी अडे देती है। अडे देते समय यदि रानी के पास कोई कमेरी या दासी नही होती, तो वह सामान उठाने वाली, खाना खिलाने वाली और अंडे-बच्चों की देख-भाल करने वाली चीटी का काम भी अपने आप ही करती है।

रानी अंडा देते ही उसे चाटने लगती है। इस तरह अडा साफ भी हो जाता है और रानी के मुंह की गर्मी भी उसके अन्दर पहुच जाती है। रानी थोडी-थोडी देर बाद अडे को उलटती-पलटती रहती है, ताकि वह

एक ही करवट पड़ा रहने के कारण खराब न हो जाए। कुछ दिन सिकाई, चटाई और लोट-पोट के बाद अडे में से एक नन्ही-सी सुडी निकलती है। रानी उसकी देख-भाल करती है और अपने मुंह से उसे भोजन पहुचाती है।

सुडी बडी होकर अपने ऊपर रेशम का गिलाफ-सा चढ़ा लेती है। गिलाफ चढा कर वह आराम से उसके अन्दर सो जाती है और अदर ही अदर बढ कर चीटी का रूप धारण कर लेती है। गिलाफ से बाहर निकलते समय नई चीटी बिलकुल काले रग की नही होती। वह कच्ची-कच्ची सी और कुछ भूरे रग की होती है। उस समय उसकी बनावट भी बहुत साफ नही होती।

कुछ समय के बाद चीटी के ऊपर से एक बहुत बारीक झिल्ली उतरती है। रानी बहुत सावधानी से खीच कर उस झिल्ली को उतारती है और अदर से साफ

सुथरी काले रग की चीटी निकल आती है। इस तरह वस्ती मे काम करने वाली चीटियो या कमेरियो की गिनती वढ जाती है।

अव रानी को वस्ती का कुछ भी काम नही करना पड़ता। कमेरियां सव काम अपने कधो पर उठा लेती है। वे ही रानी को खाना खिलाती है और अडे-बच्चो की देख-भाल करती है। चीटियो की वस्ती को पूरी तरह वसने मे कई वर्ष लग जाते है।

आम

आम भारत का ऐसा फल है जिसे सभी पसद करते है। यह देश के हर भाग मे मिलता है। इसे गर्म जलवायु पसद है, इसलिए यह अधिक ऊंचे और ठंडे इलाको में नही फलता। जो स्थान बारह महीने नम बने रहते हैं, वहा भी फसल अच्छी नही होती। अच्छी फसल के लिए जरूरी है कि बौर के समय वर्षा न हो या पाला न गिरे। अधिक वर्षा से बौर में लसी लग जाती है। लसी एक लेसदार पदार्थ है, जिससे बौर मे कीड़े पड़ जाते है। ये कीड़े आम के बागो को बहुत हानि पहुचाते हैं। ऐसी दशा में डी० डी० टी० छिड़कना ठीक रहता है। आम के बाग लगाने के लिए दोमट

मिट्टी अच्छी रहती है। जमीन में पानी अधिक रुकने न पाए, इसका भी प्रबन्ध होना चाहिए।

हमारे देश मे कई तरह के आम पाए जाते है। उनमें बम्बइया, कच्चमिट्ठा और स्टाकार्ट जातियो के आम बैसाख मे आने लगते है। दसहरी, लगड़ा, सफेदा और गोपालभोग जेठ के अन्त मे आते है। फजली, चौसा, लकीरवाला और हाथीभूल सावन-भादो मे मिलते है। उत्तर भारत मे आम बैसाख-जेठ मे पकते हैं। दक्षिण भारत मे अरकाट, सेलम और बम्बई के आम अच्छे होते है। वहा के प्रसिद्ध आमो के नाम है, दिल पसद, तोतापरी, काला पहाड, नवाब पसदी, शकरपारा, पायरो और अलफेजो जिसे हापुस भी कहते हैं। उत्तर भारत में सफेदा, दसहरी, लगडा, चौसा फजली, सरौली और बम्बइया अधिक प्रसिद्ध है।

आम के पेड गुठली से भी लगाए जाते है और कलम से भी। गुठली से लगे पौधे बीजू और कलम से लगे पौधे कलमी कहलाते है। कलमी की पौध प्राय. बरसात मे तैयार की जाती है। बरसात की कलमे अच्छी रहती है। पके हुए फल की गुठली निकाल कर उसे जल्दी ही तीन इच की गहराई पर गाडना चाहिए। आम तौर से तीन सप्ताह के भीतर अंखुवा फूट जाता है। बीजू पौधे रोपने या कलम लगाने के लिए उन्हे क्यारियो मे तैयार किया जाता है।

कलमी पौधे 40 फुट और बीजू 60 फुट की दूरी पर लगाने चाहिए। सूखी या बीमार टहनियो की काट-छाट समय-समय पर करते रहना चाहिए। पौधे मे बाँधने के बाद नीचे से टहनी फूट जाए तो कलम तोड देना बहुत जरूरी है।

दस-बारह बरस का होने पर बीजू और पाच-छ: बरस का होने पर कलमी पौधे फल देने लगते हैं। कलमी आम पचास-साठ साल तक और बीजू आम सौ बरस तक फल देते रहते हैं। कुछ पेड हर साल फल देते है लेकिन अधिकाश पेड़ो से हर तीसरे साल फल मिलता है। हर तीसरे साल फल देने वाले पौधो को अगर खाद दी जाए, फल आने के बाद उस समय सिंचाई की जाए और हर साल एक बार आस-पास खुदाई-जुताई कराई जाए, तो हो सकता है कि उनसे हर साल फल मिलने लगे।

आम के पेड़ से फल तो मिलता ही है, आम की गुठली के अंदर की गिरी में चिकनाई (फ़ैट) और माँड (स्टार्च) काफी होता है। इसलिए उसे पीस कर आटे की तरह काम में लाया जाता है। साबुन और कागज बनाने में भी उसका उपयोग हो सकता है। आम की गुठली दवा के काम में भी आती है। दस्त रोकने के लिए बेल और अदरक के साथ आम की गुठली दी जाती है। खूनी बवासीर में भी यह लाभदायक है।

इधर कुछ साल से आम दूसरे देशो मे भी भेजा जाने लगा है। जल्द खराब हो जाने के कारण हवाई जहाज से ही भेजा जाता है।

जाने-अजाने पेड़ (2)

बबूल या कीकर

बबूल कांटेदार और सदा हरा रहने वाला पेड़ है। वह पंजाब, उत्तर प्रदेश और बरार में अधिक पाया जाता है। उसकी तीन जातियां है: गोदी, कौरिया और रामकान्ता। उनकी ऊंचाई अलग-अलग होती है। बबूल के फूल पीले और मीठी महक वाले होते है। उनकी फलियां 3 से 6 इंच तक लम्बी होती हैं, और एक-एक मे 8 से 12 तक बीज होते हैं।

इसका पेड़ सूखे जलवायु में ठीक रहता है, पर सिंचाई जरूरी है। बोने के लिए फलियो मे से निकले बीज उतने अच्छे नही रहते, जितने जानवरो के गोबर मे से निकाले हुए बीज। ऐसे बीजों पर पशुओ के पेट के पाचक रसो का अच्छा असर होता है। इससे बीज का छिलका जल्दी गल जाता है और बीज जल्दी उग आता है। छोटे पौधे को काफी रोशनी, तरी और साफ भुरभुरी जमीन चाहिए। पौधा एक-दो साल ही मे पांच-छ. फुट ऊंचा हो जाता है।

बबूल का लगभग हर हिस्सा हमारे काम आता है। उसकी छाल मे टेनीन

नामक एक चीज होती है जो चमड़ा पकाने के काम आती है। बबूल की छाल से बमाया हुआ चमड़ा मजबूत होता है। भारी चमड़े को पकाने के लिए भी बबूल अच्छा रहता है।

हरी फलिया चारे के काम आती है। उनमें 16 प्रतिशत प्रोटीन होता है, जिससे जानवरों के रग-पुट्ठे बनते हैं।

गोद निकालने के लिए लोग अधिकतर चैत-बैसाख के महीनो मे पेड़ो पर निशान लगाते है। नए पेड़ो से एक बरस में एक सेर से भी अधिक गोंद मिल जाता है। पर जैसे-जैसे पेड की आयु बढती जाती है, गोंद कम होता जाता है। गोद रगाई, छपाई, कागज बनाने और दवाए बनाने के काम आता है।

बबूल की लकडी बहुत मजबूत होती है और उसमें घुन नही लगता। वह खेती के औजारों में लगाई जाती है। कोल्हू, चरखा, तम्बू की खूटियां, नाव के डाड आदि बनाने में भी बबूल की लकडी काम आती है। कही-कही बबूल के पेड पर लाख का कीडा भी पाला जाता है। उसके कॉटे मछली पकडने के काम आते है। उत्तरी भारत में बबूल को हरी पतली टहनिया दातून के काम आती है। बबूल की लकड़ी का कोयला भी अच्छा होता है।

भारत में आजकल दो तरह के बबूल अधिक लगाए जाते है। एक देसी बबूल, जो देर मे होता है और दूसरा मासकीट नामक बबूल। बबूल लगा कर पानी के कटाव को रोका जा सकता है। जब रेगिस्तान अच्छी भूमि की ओर फैलने लगता है, तब बबूल के जगल लगा कर रेगिस्तान के इस आक्रमण को रोका जा सकता है। देहातो, पहाड़ियो और खुले मैदानो में बबूल लगाकर उस स्थान को सुन्दर भी बनाते है।

जाने-अजाने पेड़ (3)

कुडजू

कुडजू एक फलीदार बेल है, जिसकी सूखी और हरी पत्तिया जानवर बहुत चाव से खाते है। इससे पशुओ के लिए गर्मी और बरसात के दिनों मे हरा चारा मिलता है। जाडे के लिए चारा काट कर रखा जा सकता है। हमारे देश मे चारे की कमी है। कुडजू की बेल लगा कर हम यह कमी बहुत कुछ पूरी कर सकते है। इसका चारा दूसरे चारो से अच्छा होता है, और वह पैदा भी बहुत होता है। इसके लगाने से मिटटी का कटना भी रुकता है, और धरती अधिक उपजाऊ हो जाती है।

कुडजू के पत्ते पान के बराबर चौडे होते हैं। उसकी हर गाठ से आमतौर पर बरसात मे जडे निकलती है। इसलिए एक वर्ष मे हर गाठ एक नया पौधा बन जाती है। यह बेल चारो तरफ को फैलती है। कभी-कभी तो 50 फुट से भी अधिक लम्बी हो जाती है। इसकी जडें भी लम्बी और गुदेंदार होती है इसलिए गर्मियो में सिचाई करने की जरूरत नही रहती। कुडजू पर पाले का कुछ असर होता है, इसलिए जाडो

मे उसकी पत्तियां गिर जाती हैं। पर जैसे-जैसे गर्मी वढने लगती है, उसमें भी पत्तियां निकलने लगती हैं। वसन्त ऋतु से नई पत्तियां आने लगती हैं।

यह वेल गांठों से भी लगाई जाती है और वीज से भी। गांठों से वेल लगाना वहुत आसान है। वोने के लिए गांठें दिसम्वर के अन्त और जनवरी के आरम्भ में खोदी जाती हैं। गांठें खोद कर उन्हे उसी समय लगाया जा सकता है। अगर उसी समय न लगाया जा सके, तो उन्हे भीगे हुए टाट में लपेट कर रख देते हैं। इस तरह रखने से गांठें चार-पांच दिन वाद भी वोई जा सकती हैं, और उन्हे लगाने के लिए दूर के स्थानो तक भी भेजा जा सकता है। लगाने के लिए वे ही गांठे अच्छी रहती हैं, जिनमे दो तीन जडें और कुछ अच्छी आंखें हों।

गांठें जडों की नाप के गड्ढे वना कर लगाई जाती हैं। उन्हें दोमट (रेतीली और चिकनी मिट्टी) जमीन में एक या आध इंच मोटी मिट्टी की तह से ढंक देते हैं। पर मटियार जमीन पर गांठों को ऊपर तह में ही लगाते हैं और उनके चारों तरफ मिट्टी खूव दाव देते हैं। गांठें लगाने के वाद तीन-चार दिन तक उतना ही पानी देते रहना चाहिए, जिससे जमीन जरा नम रहे। गांठें लगाने का सवसे अच्छा समय जनवरी का महीना होता है। लगाने के लगभग एक महीना वाद आंख निकल आती है।

इस बेल के लिए पहले वर्ष सिंचाई की जरूरत पड़ती है। इसलिए इसे ऐसी जगह लगाना चाहिए, जहा पानी पहुंच सके। अगर पानी मिलने में कठिनाई हो, तो पहले गमलो या क्यारियो मे लगा देना चाहिए फिर बरसात के शुरू मे लगभग 20 फुट की दूरी पर लगाया जा सकता है। बोने के बाद पहले दो-तीन साल तक इसे न तो काटना चाहिए और न उस पर जानवर चराना चाहिए। बाद मे भी तीन बार से अधिक उसे नही काटना चाहिए और पहले साल निराई और गुड़ाई करके खरपतवार निकाल देना चाहिए। दो तीन बरस मे वह खूब घनी हो जाती है। एक बार लगाने पर फिर इसे सिंचाई की जरूरत नही होती। लगाते समय सावधानी रखनी पड़ती है, पर लग जाने पर फिर दो तीन साल तक कोई विशेष मेहनत नही पड़ती। पौधे उगते समय उनमे सुपर फास्फेट का खाद देने से लाभ होता है।
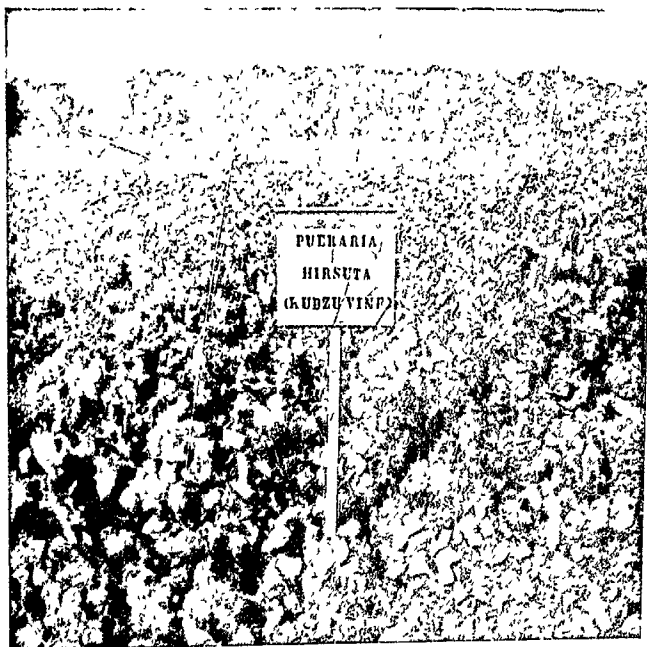
कुडजू का खेत

कुछ पक्षी

अभी हम सोकर भी नही उठते कि पक्षियो का चहचहाना, उनके मीठे-मीठे बोल और उनके मधुर गीत सवेरा होने की सूचना देते है। भाति-भाति के रग-रूप और स्वभाव वाले इन पक्षियो की हजारो जातिया है। कुछ पक्षी घरो मे रहना पसन्द करते हैं, और कुछ को खेतो और मैदानो मे आजादी के साथ उडना अच्छा लगता है। कुछ पक्षी जगलो मे चाव से रहते है, और कुछ पहाडो की चोटियों पर बसेरा करते है।

पक्षियो की अलग-अलग जातियों की कुछ बाते आपस में मिलती भी है। परन्तु बहुत-सी बाते एक दूसरे से अलग होती है इसके अनेक कारण है। जैसे—मौसम, जलवायु और उस स्थान की बनावट आदि। जहा वे पाए जाते हैं। पक्षियो का स्वभाव और उनका रहन-सहन भी अधिकतर मौसम और जलवायु के अनुसार ही होता है।

यहा हम कुछ पक्षियो की मुख्य-मुख्य बाते बता रहे हैं। इनमें से कुछ तो हमारे जाने-पहचाने हैं, और कुछ हम में से बहुतो के लिए नए होगे।

कोयल

कोयल रंग-रूप मे तो कौवे से मिलती है, पर बोली और स्वभाव मे कौवे से बिलकुल अलग है। कौवे की बोली किसी को भी अच्छी नही लगती। कोयल की बोली सब को प्यारी लगती है। इसीलिए हिंदी के एक कवि ने कहा है—

कागा का सो लेत है, कोयल काको देत,
इक बानी के कारने, जग अपना कर लेत।

अर्थात् कौवा किसी से क्या लेता है और कोयल किसी को क्या देती है? पर कोयल अपनी मीठी बोली से सारे ससार को अपना बना लेती है।

कोयल उत्तर भारत मे गर्मियो के दिनो मे मिलती है। वह उत्तर भारत की सर्दी न सह सकने के कारण सर्दियो मे देश के दक्षिणी भाग मे चली जाती है। पर बगाल मे वह सर्दियो मे भी रह जाती है क्योकि वहा सर्दी कम पड़ती है।

गाने मे कोयल सब पक्षियो से बढ़ कर है। उसकी कूक किसने नही सुनी? गर्मियो मे पौ फटने से पहले ही वह बड़े उत्साह से गाती है। उसकी कूक अमराई मे अनोखी मस्ती भर देती है।

कोयल अपने अडे नही सेती। वह कौवो से यह बेगार लेती है। वह लड़ाई मे तो कौवो से जीत नही पाती, इसलिए कौवो को धोखा देकर उनके घोंसलो में अपने अडे रख आती है। कोयल का अडा, रंग-रूप और वजन मे कौवे के अंडे जैसा नही होता। फिर भी कौवा अपने और कोयल के अंडो का अन्तर नही पहचान पाता और

उन्हे अपने अडे समझ कर सेता रहता है। कोयल कौवे के घोंसले में जितने अडे रखती है, कौवे के उतने ही अंडे नष्ट कर देती है।

कद में कोयल कबूतर से कुछ छोटी होती है। पर पूंछ को मिला कर उसकी लम्बाई सवा फुट से डेढ फुट तक होती है। नर बहुत काला होता है, मादा कुछ भूरे रग की होती है। नर और मादा, दोनो की आखो में लाली होती है। सिर सीसे के रग का होता है। आम कोयल का प्रिय भोजन है।

मोर

पक्षियो मे सुन्दरता के विचार से जो स्थान मोर का है, वह किसी दूसरे पक्षी का नही। मोर की सुराहीदार गर्दन, सिर का शाही ताज, भडकीली पोशाक यानी रंग-बिरगी दुम, और बांकी चाल दिल में घर कर जाती है। पर उसके पैर भद्दे और खुरदरे होते हैं। उसके पख भी बस दिखावे के ही होते है। उनसे उसे उड़ने में सहायता नही मिलती। शरीर भारी होता है इसलिए अधिक से अधिक वह जमीन से उड कर पेड पर जा बैठता है। हां, भागता बहुत तेज है।

मोरनी मोर जैसी सुन्दर नही होती। मोर नाचते समय चारो ओर चक्कर लगाता है। उसकी दुम के पखो मे नीले-नीले चांद जैसे गोल निशान होते हैं और

नाचते समय उसकी दुम गोल पखे की तरह फैल जाती है। उस समय मोर बिलकुल मस्त हो जाता है और अपने आसपास के वातावरण को बिलकुल भूल जाता है। अक्सर जब बादल घिर कर गरजने लगते हैं, तो मोर मस्त होकर नाचने लगता है।
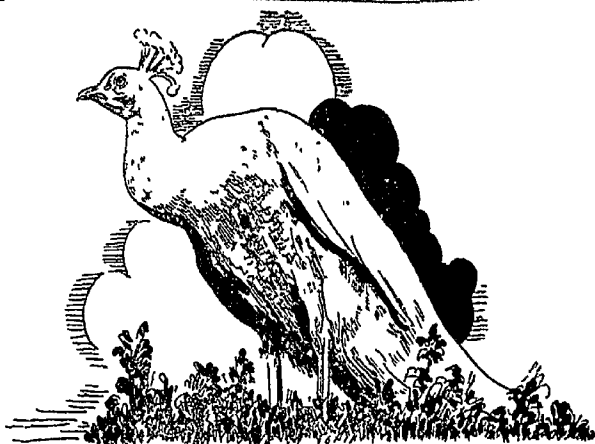
सफेद मोर—पच्छिमी भारत मे कही-कही मिलता है

कुछ मोर बिलकुल सफेद रग के भी होते है। नाचते समय वे भी बहुत सुन्दर लगते है।

मोर कीड़े-मकोडे खाता है। घास मे पाए जाने वाले कीडे इसे बहुत भाते हैं। छोटा-मोटा सांप नजर आ जाए तो उसे भी वह चोंच में पकड लेता है, और जमीन पर पटक-पटक कर मार डालता है। कभी-कभी साप को निगल भी जाता है।

मोर आदमी से बहुत कम डरता है और पालने से हिल भी जाता है। मोरनी साल मे एक ही बार अडे देती है, जो गिनती मे दस-बारह और कभी-कभी बीस-पच्चीस तक होते है। मर्गी के नीचे रख कर मोर के अंडों से बच्चे निकाले जा सकते हैं। बच्चे जब तक छोटे होते है, तब तक नर और मादा की पहचान करना कठिन होता है। पर एक वर्ष बाद नर की दुम बढने लगती है और फिर थोडे ही समय के बाद वह एक सुन्दर मोर बन जाता है।

पेंगुइन

पेंगुइन एक ऐसा पक्षी है जो हमारे देश में नही होता। यह संसार के अनोखे पक्षियों में गिना जाता है। यह पानी के अन्दर ही अन्दर दूर तक तैरता चला जाता है। यह पक्षी अधिकतर बर्फीले देशो के टापुओं में होता है। कुछ टापुओं में तो बहुत अधिक पाया जाता है।

पेंगुइन का रग काला और सफेद होता है। कद ढाई-तीन फुट तक होता है। नर और मादा के मिलाप का ढग अनोखा है। नर मादा के सामने छोटे-छोटे गोल पत्थर ला कर डालता है। जिसका मतलब यह होता है कि आओ, हम दोनो घोसला बनाएं। मादा यह निमन्त्रण स्वीकार कर लेती है तो वे दोनो मिलकर घोंसला बनाते है। मादा उसमे अडे देती है, जिन्हें दोनो मिलकर बारी-बारी से पचास दिन तक सेते है। पेंगुइन मुर्गी की तरह अंडों पर बैठ कर उन्हे नही सेते, बल्कि राज पेंगुइन (पेंगुइन की एक जाति) के पास एक जेब सी होती है जिसमें बारी-बारी से अडा रखते है। सर्दी अधिक होने के कारण, पेंगुइन के अधिकतर बच्चे ठिठुर कर मर जाते है।

मछली, नदियों की घास, और कीडे-मकोडे पेंगुइन का भोजन है।

तोता

तोते उन पक्षियों में से है जो आम तौर से घरो मे पाले जाते हैं। वे कई रंग

के होते है। कोई लाल रंग का होता है, कोई हरे, कोई सफेद। देखने में सब बहुत सुन्दर लगते है। ये पक्षी अधिकतर भारत, अफ्रीका, दक्षिणी अमरीका आदि देश में पाए जाते हैं। तोता हरे-भरे और फल-पत्तो वाले स्थान अधिक पसद करता है। वह झुड बना कर रहता है। उसका झुड पेडो के बीच हरी-हरी पत्तियो मे इस तरह छिप कर बैठ जाता है कि उसे पहचानना कठिन हो जाता है।

तोते की चोच आगे से मुडी हुई, तेज और नुकीली होती है। उसकी टागे भूरी और पूछ लम्बी होती है। चोच का ऊपरी भाग नीचे वाले भाग से बडा होता है। आखे गोल और छोटी होती है। कद कबूतर के बराबर होता है।

तोता रट बहुत जल्दी लेता है। वह मनुष्य और पशुओ की बोली की नकल बहुत ही अच्छी तरह करता है। उसकी जबान नर्म और चौड़ी होती है। तोते को नहाना बहुत पसद है। झीलों और तालाबो की तलाश मे तोता दूर-दूर तक निकल जाता है और उनमे घटो नहाया करता है।

तोता पाल कर चाहे उसे सोने का निवाला खिलाओ मगर उसे पिंजरे से निकलने का थोडा सा अवसर भी मिले, और उसके पखो मे उडने की ताकत हो, तो वह उसी समय बंदी जीवन छोडकर स्वतंत्रता की हवा में उड जाता है।

पीरू

पीरू असल में अफ्रीका का वासी है। वह झुड बनाकर रहना पसंद करता है। खतरे के समय उसमें अधिक दूर तक उडने की शक्ति नहीं होती। पर वह भागता बहुत तेजी से है।

पीरू बहुत लजीला होता है और एकांत पसंद करता है। उसे बागों और खेतों में घूमना-फिरना भी बहुत अधिक अच्छा लगता है। पीरू शोर बहुत मचाता है।

क्रोध की दशा मे नर दूसरे पक्षियो, जैसे मुर्गियों, बत्तखों, आदि को बहुत हानि पहुंचाते है और अपनी कड़ी चोंच से उन्हे खूब ठोंगे मारते हैं।

पीरू इतना बड़ा नही होता जितना देखने में मालूम होता है। इसका कारण यह है कि उसके पख बहुत खुले हुए और ढीले होते है। नर और मादा मे बहुत समानता होती है, इसलिए उन्हे पहचानना भी कठिन होता है। नर की कलगी मादा की कलगी से ऊंची होती है और उसकी गर्दन के नीचे का मांस, नीलापन लिए हुए, लाल रग का होता है। मादा की गर्दन के नीचे का मास बिल्कुल लाल और नर के मुकाबले मे कम लम्बा होता है।

पीरू का रग अधिकतर भूरा होता है। उसके पूरे शरीर पर सफेद-सफेद धब्बे होते है। पीरू की जाति बिलकुल सफेद रंग की भी होती है। वे देखने में

अधिक सुन्दर होते है। इसके अलावा काले और चितकबरे रग के पीरु भी होते है।

पीरू के अडो को मुर्गियो के नीचे रख कर बच्चे निकलवाए जा सकते है। किसानो के लिए पीरू पालना बहुत लाभदायक है। वह फसल को हानि पहुंचाने वाले सब कीडे खा जाता है।

पीरू के एक नर के साथ दो मादा मिलानी चाहिए। मादा साल मे 70 से 100 तक अंडे देती हैं। अडो से 26 दिन मे बच्चे निकलते है।

यह पक्षी बहुत सहनशील होता है। उस पर गर्मी और सर्दी का कोई असर नही पडता। दूसरी ओर पीरू के चूजे बहुत कोमल स्वभाव के होते हैं। इसलिए उनके लालन-पालन मे बहुत सावधानी से काम लेना पडता है।
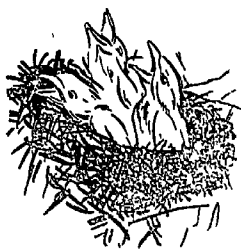
कुछ पशु

मनुष्य और पशुओ का सम्बन्ध हजारो वर्षो से चला आ रहा है। आरम्भ मे मनुष्य जगली जानवरो का शिकार करके अपना पेट भरता था। धीरे-धीरे वह पशुओ को साधने और पालने लगा। इस तरह उसे इन पशुओ से नित नए लाभ होने लगे। मनुष्य का धन बनने का गौरव पहले-पहल पशुओ को ही मिला। इतना ही नही, पशु बडे काम के भी होते है। यही कारण है कि उनमे से कुछ को देवता भी मान लिया गया।

मनुष्य ने जैसे-जैसे सभ्यता की सीढिया पार की, वैसे-वैसे प्रकृति पर उसका अधिकार भी बढता गया। धीरे-धीरे उसने पशुओ की सहायता से अपना जीवन सुन्दर और सुखी बनाया और अपने लिए तरह-तरह की सुविधाए जुटाई। दूध, घी,

ऊनी कपडे, ये सब पशुओ की ही देन हैं। हमारी खेती मे भी पशुओ का बडा हाथ है। बैल और घोडे खेत जोतने के काम आते है।

पशुओ को हम इससे भी अधिक लाभदायक बना सकते हैं। इसके लिए हमें पशुओ की अधिक से अधिक जानकारी होनी चाहिए और उनकी उचित देखभाल करनी चाहिए।

जेब्रा

जेब्रा वैसे तो घोडे की जाति का पशु है, पर उसका रूप और स्वभाव घोडे से बिलकुल भिन्न है। जेब्रा बहुत ही सुन्दर पशु है। अब तक मनुष्य उसे पूरी तरह वश मे नही कर सका, इसीलिए उसे पाल कर वह उससे लाभ भी नही उठा सका।
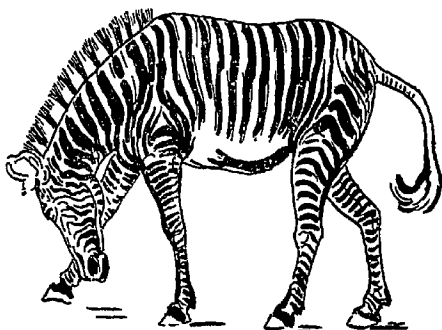
जेब्रा अफ्रीका मे पाया जाता है। उसकी तीन जातिया हैं :

1 पहाड़ी जेब्रा उसके सफेद शरीर पर काले रग की धारिया होती है। इस

जाति का जेब्रा सब से सुन्दर होता है। उसका कद लगभग चार फीट होता है। वह पहाड़ों पर रहता है और बहुत तेज दौडता है।

2. **बरचल का जेब्रा :** इस जाति के जेब्रे सफेद, भूरे और हल्के पीले रग के होते है। वे पहाडी जेब्रे से कुछ बडे और मोटे होते है।

3. **ग्रेवी का जेब्रा** इस जाति के जेब्रे घने जगलों मे रहते है और मैदान मे निकलना बहुत कम पसन्द करते है। वे शरीर की बनावट मे पहाडी जेब्रे जैसे ही होते है, पर उनके शरीर की धारियां पतली और गिनती में इतनी अधिक होती है कि लगभग टापो तक साफ दिखाई देती हैं।

तीनों जातियो के जेब्रे छोटे-छोटे झुंड बना कर रहते है। वे बहुत दूर तक की चीज देख सकते है, इसीलिए मनुष्य के पास पहुचने से पहले ही भाग जाते है और उन्हे पकडना बहुत कठिन होता है। जेब्रो के झुड दिन भर धूप में फिरते रहते है। इससे उन्हे कुछ भी कष्ट नही होता। पेड़ो की छाया मे तो वे बहुत ही कम बैठते है।

झुड मे अधिकतर एक ही नर होता है और बाकी सब मादा होती है। अगर किसी समय कोई दूसरा पशु झुड की मादा को मार डालता है, तो झुड का नर किसी दूसरे झुड की मादा अपने झुंड मे जबरदस्ती मिलाना चाहता है। इस पर नरो में बडी भयानक लडाइया होती है।

पशुओं के शिकार मे जेब्रे बहुत रुकावट डालते है। मनुष्य को देखते ही वे शोर मचाने लगते है, जिससे सारे पशु सावधान हो जाते हैं।

जेब्रे के स्वभाव मे कोई ऐसी बात नही कि उसे पाला न जा सके। पर उसे सिखाने-सधाने मे बहुत कठिनाइया सामने आती है, क्योकि वह बहुत कटखना होता है।

कंगारू

कगारू अधिकतर आस्ट्रेलिया मे पाया जाता है। उसकी पिछली टागे लम्बी,

मजबूत होती है, पर अगली कमजोर और छोटी होती हैं। देखने मे उसकी टागें अनमेल-सी लगती हैं।

कगारू के शरीर की पूरी ताकत उसके पिछले भाग मे होती है। शरीर का अगला भाग बहुत कमजोर होता है। उसकी दुम लम्बी और मोटी होती है। बैठते समय वह पिछली टागो को मोड़ कर दुम का सहारा लेता है और तिपाई सी बना कर बैठ जाता है। कगारू का सिर छोटा और चेहरा लम्बोतरा होता है। उसे किसी तरह का डर नही होता। वह प्राय: अपनी पिछली दो टागो से चलता है, पर कभी-कभी चारो से भी चलता है; किन्तु इस तरह चलने मे उसे आराम नही मिलता और उसको यह चाल देखने मे भद्दी जान पडती है। कगारू दौडता नही। अपनी अगली और पिछली टागो की सहायता से वह तेजी से छलागे लगाता है। एक छलाग मे वह बीस-पच्चीस फीट की दूरी पार कर लेता है। छलाग मार कर नौ-दस फीट ऊची झाडी पार कर जाना उसके लिए साधारण सी बात है।

मादा कगारू के पेट मे एक थैली सी होती है। अपने छोटे बच्चो को वह इसी थैली मे रखती है। यदि शत्रु उसका पीछा करता है, तो वह अपने बच्चो को इसी थैली मे छिपा लेती है और उसी तेजी से छलागे लगाती रहती है।

कगारू सब्जिया अधिक खाते है। वे छोटे-छोटे झुड बनाकर किसी पुराने और अनुभवी नर की सरदारी मे रहते हैं। सरदारी के लिए कभी कभी नरो मे लड़ाइया भी होती है।

अब तक कगारू की तीस जातिया मालूम हो चुकी है। इनमें से कुछ तो बडी जाति की भेड के बराबर होते हैं और कुछ छोटे-छोटे चूहों के बराबर।

हाथी

प्रकृति ने हाथी को छोडकर और किसी पशु को सूड नही दी। हाथी की केवल दो जातिया हैं, एक तो एशिया का हाथी और दूसरा अफ्रीका का।

अफ्रीका का हाथी कद में बडा और अधिक बलवान होता है। उसकी पीठ बराबर और चौरस होती है। भारत के हाथी की पीठ गोल और बीच में कुछ ऊंची होती है।

सूंड हाथी के शरीर का बहुत ही आवश्यक अंग है। सूंड की लम्बाई छ. से आठ फीट तक होती है। हाथी अपनी सूड को जहा से चाहे मोड सकता है। सूड में चालीस हजार के लगभग पुट्ठे होते है। हाथी अपनी सूड पर किसी तरह का घाव सहन नही कर सकता। शत्रु का सामना करते समय उसको सबसे अधिक अपनी सूंड ही की रक्षा की चिन्ता रहती है।

शरीर के दूसरे भागो की तुलना में हाथी की आखें बहुत छोटी होती है और साथ ही उसकी देखने की शक्ति भी बहुत कम होती है। हा, हाथी में सूघने और याद रखने की शक्ति बहुत होती है। स्वादिष्ट चीजो के सिवा वह साधारण और घटिया चीजों पर ध्यान नही देता। गन्ना, केला, नारियल और मीठी चीजे वह बड़े चाव से खाता है।

पालतू हाथियों की आयु सौ बरस होती है, पर जगली हाथी डेढ सौ बरस तक जीते हैं। हाथी का बच्चा इक्कीस महीने के बाद पैदा होता है, चालीस बरस की आयु में जवान होता है।

यह कहावत तो सबने सुनी है कि "हाथी के दात खाने और, दिखाने के और।" ये दिखाने के दांत वे है जो हाथी की सूड के दोनो ओर बाहर को निकले होते है। हाथी उनसे अपने बचाव का काम लेता है और वे उसकी शोभा बढाते है। हाथीदात बहुत कीमती होता है। लोग इसकी खोज मे लगे रहते हैं। इसीलिए तो कहते है कि "हाथी मरने पर भी सवा लाख का।" अफ्रीका के हाथी के दात बहुत बडे, भारी और सुन्दर होते है। वे 11 फीट तक लम्बे और दो मन तक भारी पाए गए है।

लडाई और सवारी के लिए मनुष्य बहुत पुराने समय से हाथी को काम में लाता रहा है।
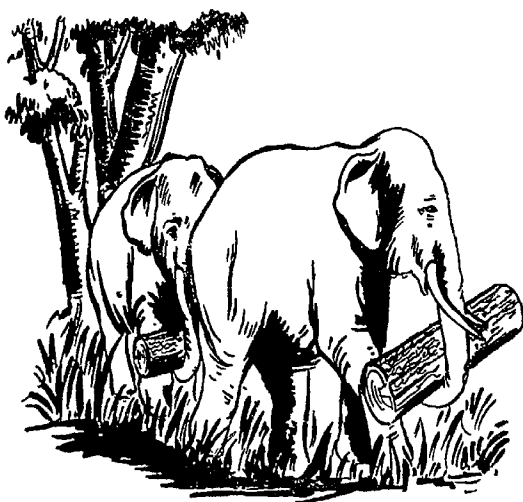
हाथी से सामान को एक जगह से दूसरी जगह लाने और ले जाने मे भी बहुत सहायता मिलती है। लकडी के बडे लट्ठे और पेडो के तने जगलो से काट कर हाथी
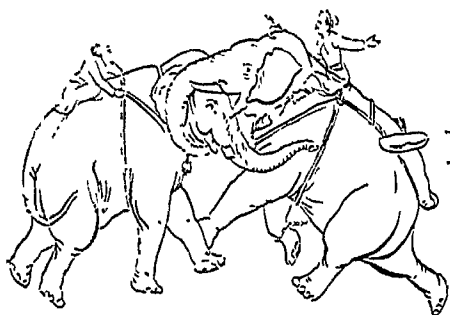
द्वारा लाए जाते है। पुराने जमाने की बड़ी-बड़ी लडाइयों में भी हाथियों से वडे-वडे काम लिए गए। शेर के शिकार मे भी प्राय. हाथी को काम में लाया जाता है। पुराने समय में हाथियो की लडाइया भी कराई जाती थी।

हाथीदांत से भांति-भाति के गहने, खिलौने और चाकुओं व छुरियो के वेट या दस्ते वनाए जाते हैं। भारत के कुछ इलाको में हाथी का शिकार करना बन्द कर दिया गया है। मैसूर और मद्रास की सीमा पर बण्डीपुर और ट्रावनकोर में पेरिआर झील के आसपास सरकार की ओर से हाथियों के लिए सुरक्षित स्थान बनाया गया है, ताकि उनका वश वढता रहे।

भेड़

अब से वहुत पहले जव रुई और कपास का नाम भी न था, तब वकरे, ऊट और भेड ही की खाल से तन ढकने का काम लिया जाता था और उनके वालों से ऊन और कम्बल वनाए जाते थे। आज भी सव पशुओं में भेड के बाल बहुत उपयोगी हैं। उनकी ऊन से गर्म चादरे और भाति-भाति के गर्म कपडे बनाए जाते है।

भारत मे भेडे बहुत पाली जाती है। अलग-अलग जलवायु में अलग-अलग जाति की भेडें मिलती है। पहाडी भेडे मैदानी भेडो से बडी होती है, और उनकी ऊन

भी मुलायम होती है। पहाड़ी इलाके भेड पालने के लिए बहुत अच्छे रहते है। पहाड़ी भेड की ऊन मैदानी भेड की ऊन से ज्यादा गर्म और अच्छी होती है। इसी तरह सीग वाली भेड़ों से बिना सीग वाली भेडे अच्छी मानी जाती है।

स्पेन की मेरीनो भेड दुनिया मे सबसे अच्छी होती है। यह भेड मामूली भेडो से बडी और मोटी-ताजी होती है। उसके बदन पर एक इच लम्बी और एक इच
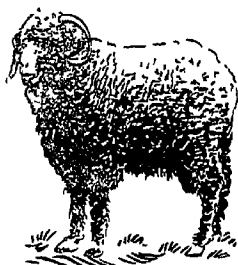
मेरीनो नर
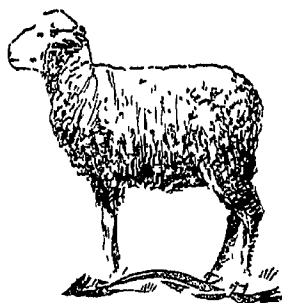
दोगली मेरीनो नस्ल

चौड़ी जगह पर 40 से 48 हजार तक वाल होते हैं। उसकी ऊन सब भेडो की ऊन से मुलायम होती है।

भेड़ की आयु आठ से नौ वरस तक है। भेड़े अधिकतर या तो ऊन के लिए पाली जाती हैं या मास के लिए। इस सम्बन्ध में याद रखना चाहिए कि जो भेड़ ऊन अच्छा देगी, उसका मास अच्छा और स्वादिष्ट न होगा। इसलिए ऊन और मास वाली भेड़ो की जातिया अलग-अलग होती है।
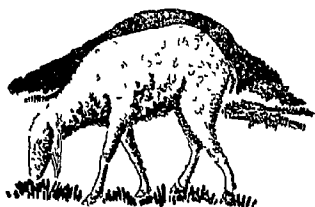
देशी भेड

भेड गाभिन होने के पाच महीने बाद एक या दो बच्चे देती है। मादा बच्चे दो-तीन दिन पहले पैदा हो जाते हैं और नर बच्चे दो तीन दिन अधिक ले लेते है।

भेड गवार की हर चीज खा लेती है, पर वह सब्जियां अधिक चाव से खाती है। इसके अलावा गेहूं, जौ, ज्वार आदि की बारीक भूसी में खली मिलाकर देने से अधिक लाभ होता है। ओस के दिनो में भेडो को धूप निकलने से पहले बाहर न जाने देना चाहिए। ओस भेड़ों को हानि पहुचाती है।

भेड का दूध गाय के दूध से अधिक गाढा होता है। उसके दूध का पनीर बहुत अच्छा और स्वादिष्ट होता है। भेड के दूध में दूसरे पशुओ के दूध के मुकाबले चर्बी का अश भी अधिक होता है।

मोती

हमारी धरती का लगभग दो तिहाई भाग पानी से ढका हुआ है, जिसमे पाच बडे-बडे महासागर हिलोरें मारते है। इन महासागरो की गहराई का क्या कहना! कही-कही तो ये छ-सात मील तक गहरे है। इस गहराई का अनुमान कुछ इस प्रकार लगाया जा सकता है कि यदि ससार का सबसे ऊचा पहाड़ एवरेस्ट समुद्र मे डाल दिया जाए, तो वह डूब कर लापता हो जाएगा।

जिस प्रकार धरती पर पेड़-पौधे, पशु-पक्षी और मनुष्य रहते है, उसी प्रकार समुद्रों की दुनिया भी आबाद है। पर समुद्रो में बसने वाले प्राणी और पौधे धरती पर रहने वाले जीवधारियों और पौधो से कही अनोखे होते है। उनमें से कुछ का रंग-रूप तो ऐसा है कि जीवधारियो को देखकर पौधे होने का और पौधो को देखकर प्राणी होने का सदेह होता है। एनीमोन और मूगा इसी प्रकार के जीव है। वे देखने में बिलकुल फूल जैसे लगते है।

एनीमोन
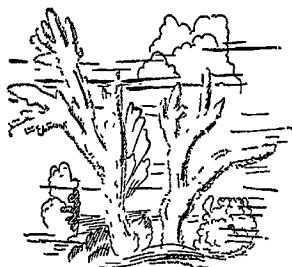
मूँगा

समुद्र मे रहने वाले कुछ जीव मनुष्य के बडे काम के है। सीप और मोती पैदा करने वाले घोघे की गिनती ऐसे ही जीवो मे है। परन्तु मोती वही के पौधो मे पाया जाता है, जहा घोघे बहुत अधिक होते है। अधिक होने के कारण घोंघो को अपने भोजन के लिए इधर-उधर घूमना पडता है और इस प्रकार हिलने डुलने से रेत के छोटे-छोटे कण उनके शरीर मे पहुच जाते है और कष्ट देते है। उस कष्ट से बचने के लिए घोघा उन रेत के कणो के चारो ओर एक लेसदार पदार्थ लपेट लेता है जो बाद मे कडा होकर मोती बन जाता है।
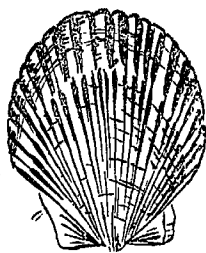
घोघा

समुद्र से मोती निकालने का काम डुबकी लगाने मे चतुर गोताखोर

करते है। पहले यह काम बहुत खतरनाक था। समुद्र में रहने वाली बड़ी-बड़ी मछलियाँ और जानवर किसी भी समय हमला कर सकते थे। पर अब यह काम उतना कठिन नहीं रहा। गोताखोरों के लिए एक विशेष प्रकार का पहनावा निकल चुका है, जो उनकी रक्षा करता है। सांस लेने के लिए एक नल के द्वारा ताजी हवा भी उस लिबास के भीतर पहुँचती रहती है, इसलिए गोताखोर अब अधिक देर तक समुद्र मे रह सकते है।

समुद्र का एक नाम रत्नाकर है, जिसका अर्थ हुआ रत्नों का भण्डार। मोती उस भण्डार का एक रत्न है। ऐसी-ऐसी बहुत-सी अनोखी और कीमती चीजें समुद्रों मे भरी पड़ी हैं और मिलती रहती हैं।
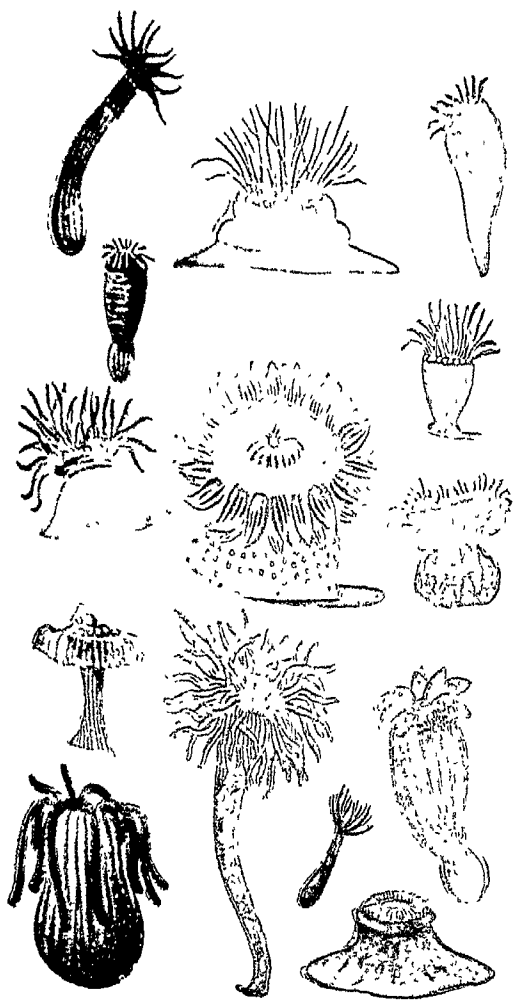
यह कोई फूल या पौधे नही समुद्र के जानवर है।
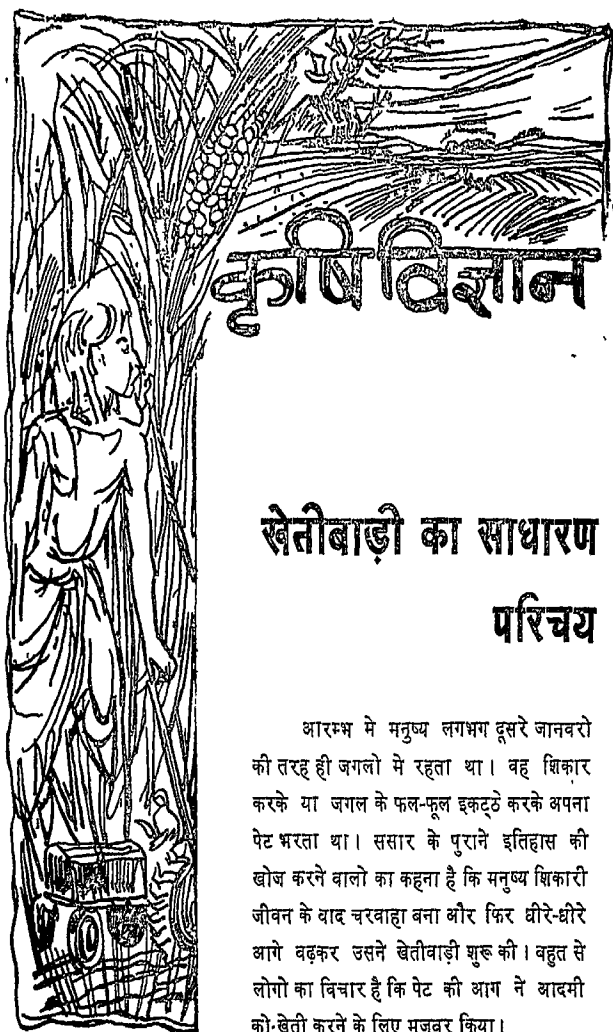
खेतीबाड़ी का साधारण परिचय

आरम्भ मे मनुष्य लगभग दूसरे जानवरो की तरह ही जगलो मे रहता था। वह शिकार करके या जगल के फल-फूल इकट्ठे करके अपना पेट भरता था। ससार के पुराने इतिहास की खोज करने वालो का कहना है कि मनुष्य शिकारी जीवन के बाद चरवाहा बना और फिर धीरे-धीरे आगे बढ़कर उसने खेतीबाड़ी शुरू की। बहुत से लोगो का विचार है कि पेट की आग ने आदमी को खेती करने के लिए मजबूर किया।

एक लेखक का कहना है कि खेतीवाडी के विकास का सेहरा जंगली सुअरों के सिर है। मनुष्य ने देखा कि जगली सुअर जिस जमीन को खोद कर चले जाते हैं, उसमे पौधे अधिक निकलते है। मनुष्य ने भी पहले-पहल बीज या पौधे बोने के लिए जमीन को अच्छी तरह खोदा और जोता। पर यूनानियो का पुराना सिद्धान्त यह था कि मनुष्य ने पहले-पहल जंगली झाड-झंखाड की भरमार देखकर जमीन को ठीक रूप देने के लिए खोदा और फिर नए अंकुए फूटते देख कर उसे धीरे-धीरे बोने और जोतने की सूझी।

जुताई के पुराने तरीके

हल की ईजाद का दावा बहुत-सी जातिया कर सकती है। पर सभी जातियो मे हल अनेक मजिले तय करके आया है। सिन्धु नदी के किनारे की सभ्यता (ईसा से

3250 वर्ष पहले से लेकर 2750 वर्ष पहले तक) मे इस बात के प्रमाण मिलते है कि

खेतीवाडी ने उस समय काफी उन्नति कर ली थी। वैदिक युग (ईसा से 2500 वर्ष पहले से लेकर 500 वर्ष पहले तक) में इस दिशा में बहुत उन्नति हुई थी। मिस्र के पिरामिडों पर बनी पत्थर की मूर्तियो में भी, जो चार हजार से लेकर सात हजार वर्ष तक पुरानी है, लकड़ी के ऐसे हल दिखाए गए है, जिन्हे जानवर खीच रहे है।

मतलब यह है कि जमीन की जुताई के भांति-भांति के यन्त्र एक ऐसे नोकदार डडे के ही बदलते हुए रूप है, जिसका काम मिट्टी खोदना था। शुरू मे इस तरह काम आने वाले यन्त्रो को मनुष्य अपने आप चलाता था। धीरे-धीरे उसने ऐसे यन्त्रों का आविष्कार किया जिन्हे बैल या घोडे खीच सके। मशीन से भी यह काम लिया

जा सकता है, यह बात मनुष्य को उन्नीसवी सदी के बीच मे आकर सूझी। तब भाप के इंजनों से भी जमीन की जुताई होने लगी।
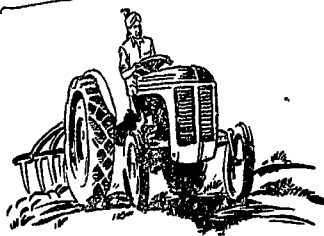
हमारे पुरखे अपने हाथ से हल चलाते थे। अब ऐसे बडे-बड़े इजन बन चुके है जिनसे जमीन काटने का काम भी लिया जा सकता है और जुताई, बुवाई, फसल काटने और अनाज निकालने का भी। पुराने हल से लेकर नए इंजन तक खेतीबाड़ी का पूरा विकास देखा जा सकता है।

सिंचाई

अच्छी उपज के लिए पर्याप्त पानी जरूरी है। कोई पौधा पानी के बिना नहीं जी सकता। पानी के बिना पौधे की क्या दशा होती है, इसका अनुमान गमलों के उन पौधों को देखकर लगाया जा सकता है जिनकी देख-भाल नहीं की जाती। सभी युगो मे किसान के सामने यह समस्या रही कि वह पानी के मामले में प्रकृति की मनमानी पर किस तरह काबू पाए? कभी बाढ़ और कभी सूखे का सामना करने के लिए वह क्या करे?

भारत मे भी खेतीबाडी की उन्नति में सबसे बडी रुकावट प्रकृति की मनमानी ही है। देश के किसी भाग मे वर्षा अधिक होती है और किसी भाग में कम। और फिर बरसात के मौसम का भी कुछ ठीक नहीं है। कभी वर्षा बिलकुल नहीं होती और कभी बहुत कम होती है। इस देश मे हिमालय के कुछ पहाडी इलाको, असम तथा पूर्वी और पश्चिमी घाटो के इलाको को छोड कर और सब जगह फसल का होना न होना इस बात पर निर्भर है कि सिंचाई किसी न किसी प्रकार होती रहे।

न जाने कब से भारत के किसान कुओ, तालाबो और बाधो के द्वारा वर्षा का

पानी इकट्ठा करते रहे है। भारत में सिचाई के साधन दूसरे सब देशो से अधिक है। आजादी के बाद कृषि की ओर विशेष ध्यान दिया गया। सरकार ने सिंचाई के साधनों को बढाने और उनका विस्तार करने की कई योजनाए बनाई। उनमे से कई योजनाए पूरी हो चुकी है और कइयो पर अभी काम चल रहा है। सिचाई के साधनो की वृद्धि और उनके विस्तार की दशा में हमने काफी उन्नति की है।

पहली तीन पचवर्षीय योजनाओं मे 24 अरब रु० की लागत की सिंचाई और बिजली की 500 योजनाए चलाई गयी। इनमें से लगभग 295 योजनाए पूरी हो चुकी है और 42 लाख हैक्टर जमीन के लिए सिचाई की व्यवस्था हो चुकी है। चालू योजनाओ से 27 लाख हैक्टर जमीन की सिंचाई हो रही है। इस प्रकार पहलो तीन पचवर्षीय योजनाओ मे लगभग 70 लाख हैक्टर जमीन में सिचाई होने लगी है। इन योजनाओं के आरम्भ होने से पूर्व केवल 10 लाख हैक्टर जमीन पर सिंचाई की व्यवस्था थी।

इसके अलावा छोटी सिंचाई योजनाओ से 73 लाख हैक्टर अतिरिक्त जमीन के लिए सिंचाई की व्यवस्था की गयी। तीन योजनाओ में बड़ी और मध्यम सिचाई योजनाओ पर 13 अरब 36 करोड़ रु० खर्च हुए। छोटी सिंचाई योजनाओ पर 6 अरव रुपये खर्च हुए।

सिंचाई के साधन

सिचाई के मुख्य साधन हैं कुए, तालाब, पोखर, नाले और नहरे।

1 कुएं . भारत की कुल सीची जाने वाली जमीन का लगभग 79 लाख हैक्टर कुओं से सीचा जाता है। कुओं का पानी बहुत ही होशियारी से वरता जाता है। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि एक बूंद पानी भी बेकार न जाए, क्योंकि कुएं से पानी निकालने का सारा खर्च किसान को उठाना पड़ता है।

2. **तालाब और पोखर** सिचाई का यह तरीका हमारे देश मे सब से पुराना है।

3 नाले सिंचाई मे नालो का महत्व उतना अधिक नही है, पर अपने आस-पास की जमीन के लिए वे काफी उपयोगी होते है।

4 नहरें सिचाई का यह तरीका भी पुराना है। दूसरे तरीको से यह सस्ता भी है। हमारे देश मे लगभग एक करोड ।। लाख हैक्टर जमीन की सिंचाई नहरो से होती है।

नहरे प्राय खेतो की सतह से ऊंची सतह पर बनाई जाती हैं ताकि उनका पानी आसानी से खेतो मे पहुच जाए। पर कुओं का पानी नीचे से खींच कर ऊपर लाना पडता है।

कही-कही नहरे भी नीची सतह पर होती है और उनका पानी ऊपर खींचना पडता है। पर इस तरह की सिंचाई वहुत महगी पड़ती है, इसलिए ऐसी सिंचाई वही करनी चाहिए जहा की भूमि वहुत ही उपजाऊ हो। सिंचाई का पूरा लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि किसान अपनी उपज की कीमत और सिंचाई की लागत दोनो को ठीक-ठीक समझे।

नीची सतह से पानी को ऊपर उठाने के लिए भांति-भांति के साधन काम मे लाए जाते हैं—जैसे मोट, रहट, चेन पम्प, ढेकली, पम्प आदि। इनमे से पहले दो का प्रयोग अधिक मात्रा मे होता है।

खाद

सिंचाई का ठीक प्रवन्ध हो जाने के वाद खेतीवाडी में अगली वात सोचने की यह होती है कि जमीन की उपजाऊ शक्ति किस तरह कायम रखी जाए। भारत के अधिकतर भागो में जमीन की उपजाऊ शक्ति काफी कम है, और इस वात का डर है कि बीजो की वढिया किस्मे वोने से जमीन की यह शक्ति और घट जाएगी, क्योंकि अच्छे वीज जमीन से अपनी खुराक अधिक खीचते है। इसलिए अच्छी फसल के लिए खाद वहुत जरूरी है। पौधो के लिए नाइट्रोजन एक वडी आवश्यक खुराक है और भारत की जमीन मे इसकी अक्सर कमी रहती है। यह कमी खाद से पूरी की जाती

है। इसलिए खाद की समस्या दूसरे शब्दो में नाइट्रोजन की कमी को पूरी करने की समस्या है।

इस देश में, जहा खेतीवाडी इतने पुराने समय से हो रही है, जमीन की उपजाऊ शक्ति अभी तक भी एक समस्या क्यों है? इसका एक विशेष कारण है। इस देश की जलवायु पूरे साल इतनी गर्म रहती है कि उस गर्मी में हमारी धरती के जीवनदायी तत्व लगातार जलते रहते है। नाइट्रोजन उन तत्वों मे से मुख्य है। इसलिए उसे किसी न किसी तरीके से जमीन में कायम रखना चाहिए। नही तो जमीन की उपजाऊ शक्ति दिन-दिन कम होती जाएगी।

अव हमे यह देखना है कि वे खादे कौन सी है, जिनमें नाइट्रोजन और दूसरे जीवनदायी तत्व मौजूद है और जो सस्ती, सुलभ और लाभदायक भी है? वे क्रम से ये हैं:

1 गोबर और मल।
2 मिला कर वनाई हुई या कम्पोस्ट खाद।
3 खली।
4 हरी खाद।
5 उर्वरक या रासायनिक-खादे।

1. गोबर और मल गोबर और मल खाद के लिए सव से अधिक काम की और सव से अधिक लाभदायक चीजे हैं। मगर हिसाब लगाया गया है कि हमारे देश में लगभग दो तिहाई गोवर उपले और पाथिया बना कर जला दिया जाता है। तीसरा हिस्सा भी इस लापरवाही से रखा जाता है कि खाद के रूप मे काम मे आने से पहले वह वहुत से तत्व खो बैठता है। मल की खाद की दशा तो और भी बुरी है।

इस तरह गोबर के जलाए जाने और मल का उपयोग इतना कम होने के कारण हमारे देश में खाद की समस्या ने विकट रूप ले लिया है। जितनी खाद

आजकल खेतो को मिलती है वह पर्याप्त नही है। इसलिए खाद के रूप में गोबर और मल का पूरा-पूरा उपयोग होना आवश्यक है।

2 कम्पोस्ट खाद पहले कहा जा चुका है कि गोबर जलाने से खाद की कमी हो जाती है। इस कमी को पूरा करने के लिए कूडा-करकट और पत्तों को मिलाकर उनसे खाद वनाने का तरीका निकाला गया। पर अभी उस काम में उतनी सफलता नही मिल सकी है जितनी आशा की जाती थी। कम्पोस्ट खाद बढ़िया तो जरूर होती है, पर जरूरी सामान, मजदूर और पानी की कमी के कारण उसका तेजी से प्रचार नही हो सका है।

3 खली खली मे भी नाइट्रोजन और खाद के दूसरे तत्व मौजूद होते हैं। पर आजकल उसका प्रयोग केवल उन्ही फसलो के लिए होता है जो कटाई के वाद एकदम विक सके। खली महगी भी होती है और आसानी से मिलती भी नही। इसलिए देहातो मे उसका प्रचार कम है। जव तक खली वडे पैमाने पर सस्ती नही वनाई जाती, तब तक किसान उसे नही अपना सकता।

4 हरी खाद पुराने समय मे मटर आदि वोने के वाद उन्हे उसी जमीन में काटकर हल चला दिया जाता था। पर खाद देने का यह उपाय अव काम मे नही लाया जाता। पुराने तरीको मे तो आसपास के पेडो की शाखे, पत्ते और झाड़-झखाड आदि सव काटकर खाद की तरह इस्तेमाल कर लिए जाते थे। दानें वाले वहुत से पौधो को खाद की तरह इस्तेमाल करके देखा गया है। उनमें से सनई, ढेचा, नीलीपसेरा और ग्वार अधिक चलते है। सनई तो लगभग हर जगह हरी खाद की तरह वरती जाती है।

हरी खाद से उपज खासी वढ जाती है, यह वात अनुभव और खोज दोनो से साबित हो चुकी है। चावल, गन्ना और गेहू की फसलो पर इसका प्रयोग किया जा चुका है। इस वात के काफी प्रमाण मिल-गए है कि हरी खाद सव से अच्छी और सस्ती रहती है, और इसे हर किसान आसानी से अपना सकता है।

5. रासायनिक खादें बाजार में ऐसी व्यापारिक खादें भी मिलती हैं जो सरलता से काम मे लाई जा सकती हैं। उनमें से कुछ है अमोनियम सल्फेट, सोडियम नाइट्रेट, कैल्शियम नाइट्रेट, हड्डी का चूरा, ऐम्पोफॉस आदि। सुपर फॉस्फेट तथा पोटाशियम सल्फेट आदि कुछ खादे ऐसी भी है जो जमीन को फॉस्फोरस और पोटाश काफी मात्रा में दे सकती है। अलग-अलग फसलों को इनमें से अलग-अलग तत्वों की जरूरत होती है। इसलिए इन खादों का उपयोग करने से पहले किसी जानने वाले से या उस जगह के सरकारी अधिकारी से जरूर सलाह कर लेनी चाहिए। ये खादे महंगी होती है, और इनका इस्तेमाल प्राय: कीमती फसलों में ही किया जा सकता है।

आज रासायनिक खादों की मांग इतनी बढ गयी है कि देश के उत्पादन से वह पूरी नही हो पाती। यही कारण है कि विदेशों से बड़ी मात्रा में उर्वरकों का आयात करना पड़ रहा है। इस समय सरकारी क्षेत्र में छ: और निजी क्षेत्र में तीन कारखानों में नाइट्रोजनी उर्वरकों का उत्पादन हो रहा है। इन सब कारखानों की वार्षिक उत्पादन क्षमता 6.81 लाख टन है।

देश में फॉस्फेट उर्वरकों के उत्पादन के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे है। इस समय फॉस्फेटी उर्वरकों की क्षमता 2 37 लाख टन है।

स्वास्थ्य के मूल सिद्धान्त

प्रकृति ने मनुष्य के लिए हजारो अच्छी-अच्छी चीजे पैदा की है। पर मनुष्य उनका आनन्द तभी ले सकता है, जब वह पूरी तरह स्वस्थ हो।

सब बातो को ध्यान में रखते हुए स्वास्थ्य के लिए भोजन एक बहुत जरूरी चीज है। हम रोज कितना और कैसा भोजन करें, इसका फैसला करने के लिए पहले यह जानना चाहिए कि हमे भोजन की जरूरत क्यो है और शरीर मे पहुच कर भोजन क्या काम करता है ?

जब हम कुछ काम करते हैं, तो हमारे अगो के हिलने से हमारे पुट्ठो के कोष्ठ अर्थात् भीतरी भाग टूट-फूट जाते हैं। हम जितनी तेजी से काम करते है, कोष्ठो की

टूट-फूट भी उतनी ही अधिक होती है। यदि हम शरीर से कोई मेहनत का काम न करें और चारपाई पर लेटे रहे, तब भी शरीर के भीतरी अंग काम करते रहेंगे और उनके पुट्ठों के कोष्ठ टूटते-फूटते रहेगे। दिमागी काम करने से भी मस्तिष्क के पुट्ठों के कोष्ठ टूटते-फूटते है। कोष्ठो की यह टूट-फूट हमारे शरीर में जीवन भर जारी रहती है। इसलिए जिंदा रहने और स्वस्थ रहने के लिए उन कोष्ठों की मरम्मत भी सदा जारी रहनी चाहिए। इसके सिवा नई उम्र मे हमारा शरीर बढता भी है। उसके लिए हमें नए पुट्ठों की जरूरत पड़ती है।

जिंदा रहने के लिए और पुट्ठो को चलाने के लिए हमारे शरीर में गर्मी की भी जरूरत पड़ती है। यदि शरीर में गर्मी कम हो जाए, तो पुट्ठों की हिलने-डुलने की शक्ति भी कम हो जाएगी। पर गर्मी यदि बढ जाए, तो पुट्ठो के कोष्ठों की टूट-फूट भी अधिक होने लगेगी। इस सबके लिए ही मनुष्य को भोजन की जरूरत पड़ती है।

भोजन के संबंध में जो दूसरी बात जाननी जरूरी है, वह यह है कि भोजन हमारे शरीर की आवश्यकताओं के अनुकूल होना चाहिए। हमारे शरीर में अधिक भाग मास, हड्डी और खून का है। इसलिए हमारा भोजन ऐसा होना चाहिए जो मांस, हड्डी और खून बना सके।

डाक्टरो का कहना है कि मिला-जुला भोजन अच्छा होता है। उसमें आटे और चावल के साथ-साथ हरी तरकारियां, दाल, दूध और दूध से बनी चीजें, या दाल और दूध की जगह मांस, मछली, चिकनाई (घी, तेल आदि), ताजे पके फल, चीनी, नमक आदि सब चीजे उचित मात्रा मे जरूर रहनी चाहिए। तरकारियों मे पत्ते वाली सब्जिया जरूर हों।

दाल, दूध और मास-मछली मे प्रोटीन रहता है। प्रोटीन शरीर बढ़ाने के काम आता है। दूध में जो प्रोटीन रहता है, वह दाल के प्रोटीन से अच्छा होता है मनुष्य का शरीर उसे आसानी से हजम कर लेता है, जिससे शरीर जल्दी बढ़ता है इसलिए गर्भवती स्त्रियों, बच्चों

और कमजोरो के भोजन मे दूध या उसकी जगह मास-मछली अधिक होनी चाहिए।

दूध में कैलशियम यानी चूना भी बहुत अधिक होता है, जो हड्डिया बनाता है। हरी और पत्ते वाली तरकारियों में लोहा और दूसरी धातुए होती हैं, जो खून को ताकतवर बनाती हैं और कब्ज को भी रोकती हैं।
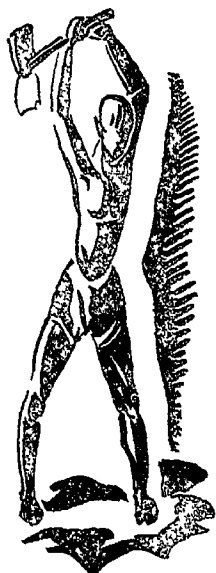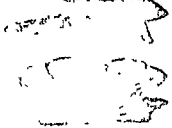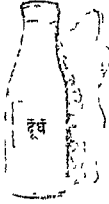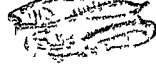
अनाज में निशास्ता (स्टार्च) रहता है, जो चिकनाई यानी घी-तेल से मिलकर शरीर मे गर्मी पैदा करता है। जो आदमी अधिक शारीरिक मेहनत करता है, उसे अधिक गर्मी की जरूरत होती है। इसलिए ऐसे लोगों को अनाज अधिक खाना चाहिए और उसके साथ थोडी चिकनाई भी। चीनी भी इसी काम आती है। अगर ये चीजे अधिक खाई जाए और शारीरिक मेहनत कम की जाए, तो शरीर में चर्बी बढ जाती है और मोटापा आ जाता है। अगर मोटापा कम करना हो, तो ये चीजे कम खानी चाहिए।

चावल और गेहू मे भी कुछ धातुए होती है और वे उनके छिलको के ठीक नीचे रहती हैं। गेहू को कभी बारीक पीसना और छानना न चाहिए। यदि गेहू में धूल, मिट्टी, ककर मिली हो, तो उसे पीसने से पहले साफ कर लेना चाहिए। अगर गेहूं को धोकर और सुखा कर पीसा जाए, तो अधिक अच्छा होगा। चावल बिना पालिश किया हुआ खाना चाहिए और पकाते समय उसका मांड नही निकालना चहिए। मिल के पालिश के किए हुए चावलो से बेरी-बेरी जैसी कई तरह की बीमारिया हो जाती हैं।

हम रोज क्या खाएं ?

आटा-चावल 7 छटाक	दालें 1 छटाक	पत्तेदार सब्जियां 2 छटाक
दूसरी सब्जियां $1\frac{1}{2}$ छटाक	दूध 1 पाव	घी तेल मक्खन 1 छटाक
फल 1 छटाक	चीनी 1 छटाक	गोश्त मछली अंडा 1 छटाक

मांस न खाने वाले दूध दही अधिक खाएं ।

फलों में विटामिन और ग्लूकोज बहुत होता है। विटामिन शरीर के लिए बहुत जरूरी हैं। वे शरीर की रचना करते हैं। अगर प्रोटीन को शरीर बनाने का मसाला कहा जाए, तो विटामिन वे राज मेमार हैं जो उस मसाले से शरीर को बनाते है। विटामिन कई तरह के होते है और सब के सब स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। कई तरह के फल जैसे केले, सतरे, नीबू, आम आदि खाने से सभी विटामिन ठीक-ठीक मिल जाते है।

फल मौसम के अनुसार और पके होने चाहिए। तरकारियों और अनाज को पचने लायक बनाने के लिए पकाने की जरूरत पडती है। परन्तु ज्यादा पकाने से उनके पौष्टिक तत्व नष्ट हो जाते हैं और विटामिन भी जल जाते है। इसलिए बहुत करारी या खर रोटी खाने की आदत अच्छी नही। पकाते समय ज्यादा मिर्च-मसाले डालने से भी भोजन की ताकत नष्ट हो जाती है।

स्वास्थ्य के लिए पानी भी बहुत जरूरी है। हमारे शरीर में तीन चौथाई भाग पानी है। वह औसत बना रहना चाहिए। खाना हजम होने के बाद उसका लाभकारी भाग पानी में घुलकर ही खून में मिलता है। पानी शरीर की गन्दगी को भी बाहर निकालता है। पानी कम पिया जाए तो कब्ज हो जाता है और पेशाब भी कम आता है। शरीर मे खुश्की बढ जाती है। पेशाब गाढा होने से गुर्दे और मसाने में पथरी पड जाने का डर रहता है। खून भी गाढा पड जाता है और स्वास्थ्य बिगडने लगता है। पसीना कम आता है, इसलिए शरीर की गन्दगी बाहर नही निकल पाती। पाचन शक्ति भी कम हो जाती है। सिर में दर्द रहने लगता है और घबराहट-सी मालूम होती है। इसलिए हमें काफी पानी पीने की आदत डालनी चाहिए। पर बहुत अधिक

पानी पीने या ज्यादा वर्फ मिला पानी पीने से भी पाचन शक्ति कम हो जाती है और भूख भी कम लगती है। भोजन करने के दो तीन घंटे के बाद काफी पानी पी सकते हैं।

गर्मियो में अधिक पानी की जरूरत होती है, क्योंकि पसीने से काफी पानी निकल जाता है। गर्मियो में अधिक पानी पीने से धूप और लू से भी बचाव रहता है।

पीने का पानी साफ, बिना बू का और ताजा होना चाहिए। जहां नल न हो, वहा जिस कुए से पीने का पानी लिया जाता हो, उसे साफ रखना जरूरी है। उस पर नहाने, कपडे धोने, जानवरो को पानी पिलाने या नहलाने से रोकना चाहिए। गदे और मैले वर्तन में कुएं से पानी न निकाला जाए। कुएं को कभी-कभी साफ भी करते
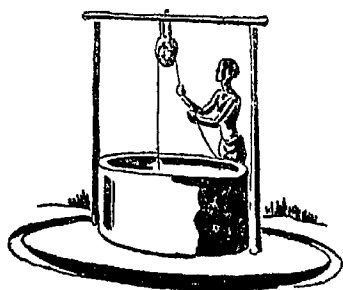
रहना चाहिए। अगर इलाके में कोई छूत की बीमारी फैली हो, तो कुएं की सफाई का और अधिक ध्यान रखना चाहिए। बरसात का या नाली का पानी कुएं मे न जाने पाए। यदि कुआं बहुत दिनो से बद हो, तो उसका पानी तब तक न पीना चाहिए, जब तक उसकी एक बार सफाई न हो जाए।

पानी शरीर को साफ करने के भी काम आता है। भारत गर्म देश है। यहा शरीर से पसीना अधिक निकलता है। अगर शरीर को अच्छी तरह साफ न किया जाए, तो शरीर पर मैल जम जाता है। उससे रोओ के मुह बद हो जाते है और शरीर की गन्दगी बाहर नही निकल पाती। शरीर में खुजली भी होने लगती है। रोज कम से कम एक बार जरूर नहाना चाहिए। गर्मियो में दो बार नहाना भी अच्छा होता है। जाडो में अगर पानी बहुत ठडा हो, तो उसे थोडा गर्म कर लिया जाए। पर अधिक गर्म पानी से नहाना हानि पहुचाता है। नहाते समय शरीर

को हथेलियों से खूब रगड़ना चाहिए जिससे मैल छूट जाए। साबुन अधिक न लगाना चाहिए। उससे शरीर में रूखापन आ जाता है। जाड़ों में शरीर पर कभी-कभी तेल मलना लाभदायक होता है। दांत, नाक, गला, बाल, बगलें और जांघे खास तौर से साफ रखनी चाहिएं। नहाने के बाद शरीर तौलिये से खूब रगड-रगड़ कर पोंछना चाहिए। रगड कर पोंछने से खून की चाल तेज हो जाती है और थोड़ी गर्मी जान पड़ती लगती है, जो अच्छी लगती है। कपडे साफ और धुले हुए पहनने चाहिए। नहाकर मैले और गंदे कपड़े पहनने से नहाना और न नहाना बराबर हो जाता है। जो कपडे शरीर से लगे रहते हैं, जैसे बनियान या जांघिया, सफेद रग के होने चाहिए। धोते समय उनमें नील नही देना चाहिए क्योंकि रग पसीने में मिलकर शरीर की चमड़ी को खराब कर देता है।

सास लेने के लिए ताजी और खुले स्थान की हवा, अच्छी होती है। गन्दी और बद हवा में सास लेने से स्वास्थ्य बिगड जाता है। हम जो भोजन करते है, वह पेट में पचता है। पचते समय एक गैस, जिसे 'कार्बन डाई आक्साइड' कहते है, पैदा होती रहती है। वह खून में मिल कर खून को गंदा कर देती है। वह गैस जहरीली और जिंदगी के लिए खतरनाक होती है और उसे निकालते रहने का काम हमारे फेफड़े करते हैं। कार्बन डाई आक्साइड से मिला हुआ खून जब फेफड़ो मे जाता है, तो वह खून बाहर निकलने वाली सास की हवा को कार्बन डाई आक्साइड दे देता है और बाहर की अच्छी और ताजी गैस आक्सीजन अंदर ले लेता है। इसलिए सास से जो हवा हम बाहर निकालते है उसमें कार्बन डाई आक्साइड अधिक होती है। अगर रहने के कमरे में ताजी हवा हर समय न आती हो, तो उसमें बराबर सास लेने से आक्सीजन कम हो जाती है और कार्बन डाई आक्साइड बढ़ जाती है। यह हवा सास लेने के लिए हानिकारक होती है।

इसलिए रहने के कमरे मे दरवाजे और खिड़कियां, जहां तक हो सके, खुली रहनी चाहिए जिससे ताजी हवा आती रहे।

सास हमेशा नाक से लेनी चाहिए। नाक से सास लेने से नाक के वाल हवा की धूल को रोक लेते हैं। इस तरह हवा छन कर भीतर पहुचती है। इसके सिवा उसे लम्बे और पेचदार रास्ते से होकर जाना पडता है, इसलिए कुछ देर लगती है और उसकी गर्मी शरीर की गर्मी के अनुकूल हो जाती है। यदि सांस मुह से ली जाएं, तो ये सब बातें नही होती। यही कारण है कि मुह से सास लेने वाले को गले और छाती की बीमारिया अधिक होती है, जैसे नजला, जुकाम, खांसी और गला खराब होना।

हर रोज सैर करना और कसरत करना वहुत जरूरी है। काम करने से पुट्ठो में जो टूट-फूट होती है और फोक पैदा हो जाता है, उसका अधिक भाग टट्टी, पेशाब, पसीना और सास के द्वारा वाहर निकल जाता है। परन्तु थोडा भाग पुट्ठो मे रह जाता है। उसको निकालने के लिए कसरत करना आवश्यक है।

कसरत करने से तदुरुस्ती ठीक रहती है और शरीर मजबूत होता है। कसरत करते समय जब हम अपने अगो को हिलाते है और पुट्ठो को पूरी ताकत से सिकोडते है, तब गदा खून और फोक उनसे वाहर निकल जाता है। फिर जब हम उन्हे ढीला करते है, तब ताजा खून भीतर आ जाता है। कई वार इसी तरह करने से गदा खून और फोक जमा नही होने पाता। ताजा खून मिलने से पुट्ठे मजबूत होते हैं और नए पुट्ठे वनते है। कसरत खुली जगह और ताजी हवा मे करनी चाहिए। कसरत करने से भूख भी वढती है और कब्ज भी दूर होता है। स्त्रियो और वच्चो को भी कसरत करनी चाहिए। जो लोग किसी कारण से कसरत न कर सकते हो, उन्हे खुली हवा में सैर करना चाहिए। सैर करते समय जरा तेज चलना चाहिए। टहलते समय बीच-बीच मे गहरी सास लेनी चाहिए। इससे फेफडे की कसरत हो जाती है और वे साफ हो जाते हैं।

काम करने से थकान आती है। इस थकान को दूर करने के लिए हमे आराम

और नींद की जरूरत होती है। यदि हम आराम नही करते तो थकान बढती जाती है और अत में इतनी अधिक हो जाती है कि पुट्ठे जवाब दे देते हैं। सोने और आराम करने से पुट्ठों की मुरम्मत होती है और नए पुट्ठे बनते है।

जब हम काम करते है तब हमारे खून का अधिक भाग हमारे हाथ पैरों में रहता है और पेट मे कम जाता है। लेकिन जब हम आराम करते है, तब इसका उलटा होता है। पेट और आतों मे खून की मात्रा बढ जाती है। इससे भोजन के हजम होने और खून में मिल जाने मे बहुत मदद मिलती है। खाना खाने के बाद थोडी देर आराम करना बहुत लाभदायक होता है। यदि हमे कभी जल्दी हो, तो अच्छा यह होगा कि हम पेट भर भोजन न करें।

आराम करने का अर्थ केवल हाथ-पैर ढीले करके लेट जाना नही है। हमे अपने दिमाग को भी आराम देना चाहिए। यदि हम लेटे-लेटे परेशानी मे डालने वाली बातें सोचते रहे, तो इस तरह लेटने से आराम नही मिलता, बल्कि थकान बढ़ जाती है। आराम करने और सोने का स्थान अलग और शातिमय हो। बिस्तर मौसम के अनुकूल और कमरा हवादार होना चाहिए।

कपड़े केवल बाहरी बनाव-सिंगार की चीज नही होते। वे सर्दी-गर्मी से हमारे शरीर को बचाते है। मनुष्य के शरीर की खाल दूसरे जानवरो की खालों से पतली होती है। उस पर रोएं भी कम और छोटे होते है। इसलिए उस पर गर्मी-सर्दी का प्रभाव अधिक पड़ता है। उनसे बचने के लिए हमे कपड़ो की जरूरत होती है।

गर्मियों में ठंडे, धुले और हलके कपडे होने चाहिए जिससे शरीर पर ताजी हवा लगती रहे। धूप मे चलते समय सिर को ढाकना बहुत जरूरी है। तेज धूप से आंखों को भी बचाना चाहिए।

जाड़ों मे कपड़े गर्म होने चाहिए। जरूरत से ज्यादा कपडे पहनना हानिकारक है। अक्सर लोग जाडे से बचने के वहम में बहुत अधिक कपड़े पहन लेते हैं। एक तो

उन कपडो का बोझ इतना हो जाता है कि चलने-फिरने और काम करने में रुकावट होती है, दूसरे स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है।

बच्चो को कपडे पहनाने मे लोग अक्सर भूल करते है। जाड़े मे बचाने के लिए उनकी छाती पर तो बहुत अधिक कपड़े लाद दिए जाते है, पर कमर के नीचे टागें नंगी रहती है। ऐसा करना हानिकारक है। सर्दी अधिकतर पैरो से चढती है। जब पैर ठडे होते हैं, तो बेचैनी मालूम होती है। यहा तक कि सो भी नही पाते। इसलिए बहुत जाडा हो, तो टागो को भी ढक कर रखना चाहिए।

कपड़ो का हमारे स्वभाव पर भी प्रभाव पड़ता है। साफ कपड़े पहनने से सफाई की आदत पडती है और बराबर सफाई का ध्यान रहता है। मैले-कुचैले कपडे पहनने से गन्दा रहने की आदत पड़ती है।

चलते समय शरीर का पूरा बोझ पैरो पर पडता है, इसलिए पैरों का मजबूत होना जरूरी है। हम प्राय. पैरो की ओर ध्यान ही नही देते। पैरों में तेल की मालिश करना चाहिए, उनको साफ रखना चाहिए और जूते पहनने चाहिए। अधिक गर्म या अधिक ठडे फर्श पर नगे पैर फिरना हानि पहुचाता है। जूते खुले हुए और आराम देने वाले हो। तग जूते पहनने से पैरो की बनावट बिगड जाती है और उगलियो मे घट्ठे पड जाते हैं जो चलने मे कष्ट देते है।

खाने-पीने, सोने, काम करने और सब बातो मे बीच की राह पर चलना अच्छा होता है। काम उत्साह के साथ करना चाहिए और उसमे आनन्द लेना चाहिए। किसी काम से जी बहुत थक या ऊब न जाए, इसलिए बीच-बीच मे काम बन्द करके या बदल कर मनोरजन के लिए समय देना और सदा प्रसन्नचित्त रहना स्वास्थ्य के लिए बहुत हितकर है। बड़े-बड़े विद्वानो और डाक्टरो की राय है कि हसने से बढकर और कोई ताकत की दवा नही।

बड़े-बड़े आविष्कार

विज्ञान ने हमारे जीवन का ढाँचा बदल दिया है। अंधेरे मे उजाला करने के लिए बिजली, एक कोने से दूसरे कोने तक खबर भेजने के लिए तार और बेतार विज्ञान ही की देन है। मनुष्य ने विज्ञान की सहायता से नदियों को बाधकर नहरे निकाली, ऊँचे-ऊँचे पहाडों को काटकर सुरग बनाई और अब तो वह बनावटी बादलों से पानी भी बरसा लेता है। सिनेमा, रेडियो और ग्रामोफोन, टेलीफोन, डाक, तार, मोटर, रेल, जहाज और विमान—सबने मिलकर समय और दूरी की कठिनाइया दूर कर दी है।

रेलगाडी

विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ मनुष्य ने सीखा कि भाप, पेट्रोल और बिजली में बहुत बडी शक्ति छिपी है। भाप में छिपी शक्ति का अनुभव सबसे पहले जेम्स वाट ने किया। जेम्स वाट अंग्रेज थे। एक दिन वह अपने रसोईघर में बैठे थे। चाय के लिए पानी उबाला जा रहा था। पानी की भाप से केतली का ढक्कन बार-

बार उठ रहा था। भाप की इसी शक्ति से काम लेकर वाट ने कई पम्प और इंजन बनाए।

भाप से लोहे की पटरियों पर रेलगाड़ी चलाने का काम यूरोप में सबसे पहले जार्ज स्टीफेन्सन ने किया। स्टीफेन्सन कोयले की खानों में काम करते थे। उन्होंने
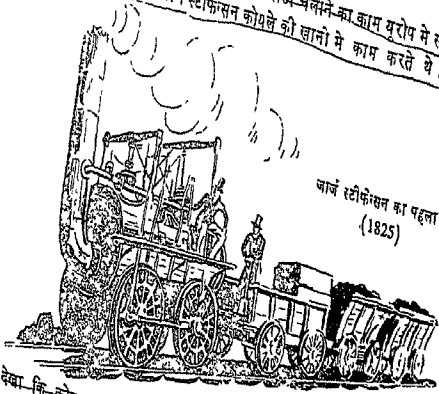
जार्ज स्टीफेन्सन का पहला इंजन (1825)

देखा कि कोयला ढोने वाली गाड़ी लोहे की पटरियों पर अधिक तेजी से चलती है। इसी सूझ पर उन्होंने एक रेलगाड़ी बनाई। वह गाड़ी घण्टे में बारह मील की चाल से चलती थी। उस समय के लोग इस धीमी चाल से चलने वाली गाड़ी में भी बैठते हुए डरते थे।

1841 का इंजन
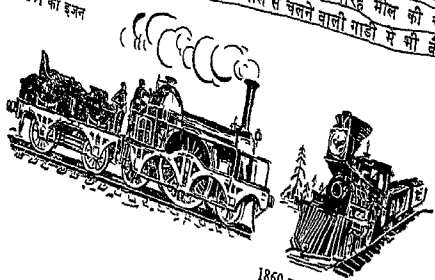
1860 का अमरीकन इंजन जिसमें लकड़ी जलती थी।

धीरे-धीरे इंजन और गाडी में सुधार होता गया। उसी का फल है कि आज एक इंजन बहुत लम्बी गाडी को कुछ घटो मे ही सैकडो मील खीच ले जाता है। अब

गाडियो में खाने-पीने, पढने, सोने और सर्दी-गर्मी से बचने के सब सुभीते हो गए हैं और गाडिया इस तरह दौड़ती है कि मुसाफिर को यह मालूम ही नही होता कि वह साठ-सत्तर मील प्रति घटे की चाल से जगलों और नदियो को पार करता, दौडा चला जा रहा है।

कुछ देशों में गाड़ियां धरती के नीचे भी चलती है। लदन मे धरती के नीचे ही नीचे रेलों का जाल सा बिछा हुआ है। अमरीका मे हडसन नदी के नीचे एक सुरंग बनाकर उसमे से रेल चलाई गई है।

भाप से रेलगाड़ी किस तरह चलती है? रेलगाडी को खीचने का काम इंजन करता है और इंजन कोयले और पानी के सहारे चलता है। कोयला जलाने के लिए इंजन में ही एक भट्ठी होती है। भट्ठी के साथ के हिस्से में पानी रहता है। गर्म धुआ छोटी-छोटी नालियो से ले जाकर पानी में से गुजारा जाता है। इस तरह पानी उबल-उबल कर भाप बनने लगता है। उसी भाप को दबाकर उसमे शक्ति पैदा की जाती है।

इंजन को चलाने के लिए उसके पहियो पर लोहे की भारी सलाखे लगी रहती हैं। वे सलाखे भाप की शक्ति से पहियो को आगे चलने पर मजबूर करती हैं। भाप का दबाव घटा-बढ़ा कर गाड़ी की चाल घटाई-बढाई जाती है।

लोहे की पटरियों पर चलने वाली गाड़ियो को कुछ कम ताकत की जरूरत होती है। पटरियो की चौड़ाई देश-देश मे अलग-अलग है, पर अधिकतर बड़ी लाइने साढे पाच फुट चौड़ी होती है और छोटी लाइने सवा तीन फुट। टेढ़े-मेढ़े रास्तो से गुजरने के लिए छोटी लाइन अच्छी रहती है। पहाड़ो पर धरती बराबर नही

होती। ऐसे स्थानो पर छोटी लाइनो पर ही गाड़िया चलती है। कुछ स्थान ऐसे भी हैं जहा लोहे के मोटे-मोटे तार लटका कर उन पर रेल की पटरिया बिछा दी गई हैं और उन पटरियो पर रेलगाडिया चलती हैं।

आजकल भाप के अलावा बिजली, डीजल तेल और पेट्रोल से भी इजन चलने लगे हैं। बिजली से चलने वाली रेलो मे बिजली या तो बाहर से तारों के जरिए ली जाती है, या इंजन के अन्दर ही तेल से पैदा की जाती है।
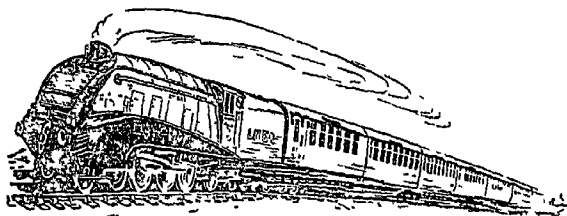
160 किलोमीटर प्रति घण्टा चलने वाली रेल

रेलगाड़िया अकसर सत्तर-अस्सी मील प्रति घटे की चाल से चलती हैं, पर कुछ गाड़ियो की चाल सौ मील प्रति घटे से भी ऊपर पहुच चुकी है। भाप से चलने वाली एक गाड़ी एक सौ छब्बीस मील की चाल से दौड़ चुकी है। डीजल से चलने वाली गाडिया 133 मील प्रति घंटे की चाल तक पहुच गई है। जर्मनी मे एक खास तरह के पखो की सहायता से चलने वाली गाडी लगभग 143 मील प्रति घंटे की चाल से चल चुकी है। अब तो इससे कई गुना तेज चलने वाली रेलों का आविष्कार हो चुका है।

संसार की सबसे लम्बी रेलवे लाइन सोवियत रूस में है। वह मास्को से ब्लाडीवोस्टक तक जाती है। उसकी लम्बाई 6,000 मील है। गाड़ी को एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुंचने मे नौ दिन लगते हैं। अमरीका मे 3,000 मील तक जाने वाली ऐसी गाडिया हैं जिनमें खाने-पीने, सोने, काम करने और मनोरजन वगैरह के सब साधन मिलते है। स्विटजरलैंड और दक्षिणी अमरीका में पहाड़ों पर चलने वाली कुछ गाड़िया समुद्रतल से 16,000 फुट तक की ऊचाई पर चलती है, जहा सास लेने के लिए

आक्सीजन गैस का इन्तजाम करना पड़ता है। भारत मे भी रेलगाड़ियां लगभग साढ़े सात हजार फुट की ऊँचाई तक पहुच चुकी है।

इस तरह रेलगाडियो की सहायता से हमारे लिए दूर-दूर के स्थानों तक आना-जाना बहुत आसान हो गया है।

मोटर

इस शताब्दी के आरम्भ मे मोटरगाड़ी का नाम इतना लोकप्रिय नही था जितना आज है। मोटर गाड़ी से पहले लोग घुड़सवारी को ही यातायात का सबसे तेज साधन मानते थे। लेकिन मोटर कार के आविष्कार के बाद स्थिति एकदम बदल गई।

अब मुसाफिरों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने के अलावा मोटरो, बसो और ट्रको से और भी बहुत से काम लिए जाते है। ट्रको में भर कर सामान ढोया जाता है। मोटरों से हमारे गांवों में चलते-फिरते सिनेमा, पुस्तकालय और दवाखाने आदि पहुच गए हैं। लड़ाई के दिनो में मोटरो से तरह-तरह के सामान लाने ले जाने का काम लिया जाता है। अकाल और बाढ जैसे संकटों में उनकी सहायता से पीडितो को भोजन और कपडे पहुचाए जाते है और सुख-शाति के दिनो मे मोटर सैर-सपाटे का अच्छा साधन है।
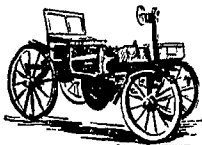
1857 की मोटर

शुरू-शुरू में मोटरे भाप से चलती थी। उन के पहिए लकडी या लोहे के होते थे। वे शकल-सूरत में भी भद्दी थी। गैस से चलने वाली गाडी, जिसे हम अब मोटर कार कहते है, 1885 में बनी।

1905 की मोटर

ऐसी गाडी सवसे पहले गोटलिव डेमला नामक एक जर्मन ने वनाई थी।

सन् 1914 की पहली वडी लडाई तक मोटरो मे लकडी या लोहे के पहिए होते थे। रवड के पहियो का चलन उस लड़ाई के वाद हुआ।

आजकल मोटर पेट्रोल और डीजल से चलती हैं। मोटर के इजन में पेट्रोल को हवा के साथ मिलाकर उसमे बिजली की चिनगारी से आग लगा दी जाती है। ऐसा करने से गैस पैदा होती है। यह गैस अधिक जगह घेरना चाहती है। लेकिन अधिक जगह न मिलने के कारण इसे दबना पडता है। इस दवाव से उसमे जो शक्ति पैदा होती है, उसी से मोटर चलती है।

ड्राइवर की सीट के ठीक आगे एक गोल पहिया सा लगा होता है। इसे 'स्टियरिंग व्हील' कहते है। इसकी सहायता से गाड़ी मोडी जाती है। ड्राइवर के पैरो के पास कुछ पुर्जे होते हैं जिनसे गाड़ी तेज करने या रोकने वगैरह के काम लिए जाते है। मोटरो मे कुछ ऐसी घडिया भी लगी होती है जिनसे गाड़ी को चाल और गाड़ी मे खर्च होने वाले पेटोल की मात्रा वगैरह का पता चलता रहता है। एक घडी से यह भी पता लगता है कि गाडी जब से बनी, तब से आज तक कितने किलोमीटर चल चुकी है।

समय के साथ-साथ मोटरे और वसे भी रग रूप बदलती रहती है। हर साल सुन्दर से सुन्दर गाडिया कारखानो से निकलती है जिससे हमारी यात्रा बराबर सुखद और सुगम होती जा रही है।
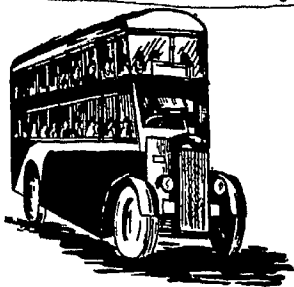
पुरानी और नई मोटरो में अव बहुत अन्तर हो गया है। अब छोटी और बडी हर प्रकार की मोटरें बनती हैं। हमारे देश में भी मोटरे वनाने के कारखाने खुल गए है।

मोटर के कारखाने मे जहां एक-एक पुर्जा जोड़कर मोटर कार बनाते है, उसे 'असेम्बली लाइन' कहते है।

पानी के जहाज

नाव और जहाजो मे बैठकर नदियो और समुद्रो की यात्रा करना कोई नई बात नही है। एक देश से दूसरे देश पहुंचने मे पानी के जहाज बहुत समय से काम मे आते रहे है। पहले जहाज कुछ छोटे होते थे। उनमे खाने-पीने की चीजें और दूसरे सामान अधिक नही भरे जा सकते थे। रास्ते मे समय भी बहुत लगता था। अब

पहले से समय कम लगता है और यात्रियों के लिए सुविधाए भी अधिक है। जहाजों का समय भी निश्चित होता है। नए ढंग के जहाजो में पुस्तकालय, अस्पताल और सिनेमा आदि भी होते है।

कुछ जहाजो की बनावट ऐसी है कि उन पर मौसम बदलने का असर नही होता। संकट के समय मुसाफिरो की जान बचाने के लिए जहाजों मे नावें भी होती है।

पानी के जहाज पहले अधिकतर लकड़ी के होते थे और हवा के जोर से चलते थे। अब वे लोहे के होते है और भाप से
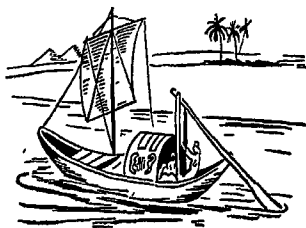
चलते है। भाप की सहायता से बहुत बड़े-बड़े पंखे पानी को पीछे फेंककर जहाज को
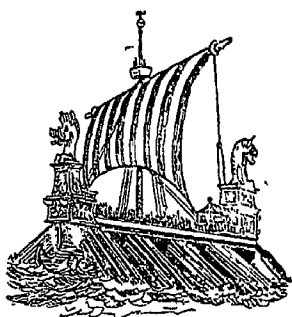
2000 साल पहले हवा से चलने वाला रोमन जहाज

आगे धकेलते है। ये पंखे बहुत भारी होते है। कुछ जहाजो में ये पंखे डीजल या बिजली से भी चलते है।

पानी के जहाज कई तरह के होते है। कुछ केवल मुसाफिरो के लिए होते है, कुछ सामान ढोने के लिए और कुछ दोनो कामो के लिए। सामान ढोने वाले जहाज़ हजारों मन कोयला, लोहा, अनाज, फल वगैरह दुनिया के एक कोने मे दूसरे कोने तक पहुचा देते है। एक तरह के जहाज 'टैंकर्स' कहलाते है। इनमे हजारो गैलन पेट्रोल और दूसरे
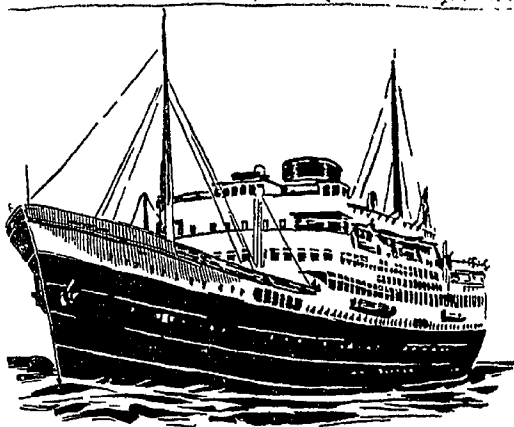
रासायनिक पदार्थ एक देश से दूसरे देश जाते है। कुछ जहाज दूसरे बड़े जहाजों को पानी मे खीचते हैं। समुद्र में जमी हुई बर्फ तोडने और टेलीफोन के तार लगाने के लिए विशेष प्रकार के जहाज होते हैं।

लड़ाई में भी कई तरह के जहाज काम मे आते हैं। उनमें से कुछ जहाज इतने
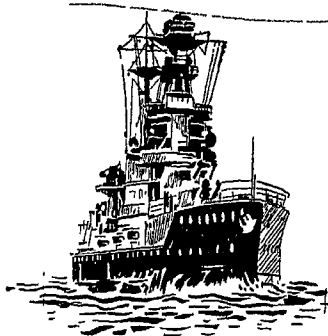
बड़े होते हैं कि उन पर हवाई जहाजो के उड़ने और उतरने के लिए अड्डे बने होते है। कुछ जहाजों पर गोला फेंकने वाली तोपे रहती है। दुश्मन के जहाजों को चुपचाप नीचे से सुरंग लगाकर डुबा देने के लिए पानी के अन्दर चलने वाली पनडुब्बियां भी होती हैं।

पानी के जहाजो ने समुद्र के अनेक छोटे-छोटे टापुओं तक पहुंचने में हमारी बड़ी सहायता की है। नए देशों की खोज में भी उन्होंने सदा हाथ बटाया है। कोलम्बस ने पानी के जहाज में बैठकर ही अमरीका की खोज की थी। लेकिन वह बहुत पुराने ढंग का जहाज था। इस तरह ससार के देशों को एक-दूसरे के पास लाने में पानी के जहाजों ने बहुत बड़ा काम किया है।

हवाई जहाज

आदमी सदा से चिड़ियों की तरह हवा में उड़ने का सपना देखता आया है। हर देश और हर जाति मे ऐसी कहानिया है जिनमे किसी न किसी रूप मे उड़ने वाले मनुष्यो या उड़न खटोलो का जिक्र आता है। हमारे देश में भी रामायण और दूसरी पुस्तकों में ऐसे
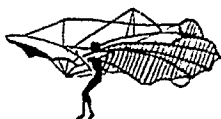
प्रसगो की कमी नही है। ये सब कहानिया कहाँ तक सच्ची है, यह कहना बहुत कठिन

है। पर यह बात निश्चित है कि अब से कोई ढाई सौ साल पहले बैलूनो या गुब्बारो की सहायता से हवा मे उडने की कोशिश की गई। शुरु में इन गुब्बारो में गर्म हवा भरी गई थी, पर वह भारी होती थी। बाद में हाइड्रोजन और हीलियम नाम की हलकी गैसे भरी जाने लगी। गैस के प्रयोग से एक जगह से दूसरी जगह जाने के लिए जेपलिन भी बनाए गए जो मशीनों की सहायता से चलते थे। लेकिन उनमे आग लग जाने का भय रहता था।

अमरीका के दो निवासी जो भाई-भाई थे, अब से ६५ वर्ष पहले हवाई जहाज मे बैठकर उडे। वे राइट भाइयो के नाम से प्रसिद्ध है। उस समय से लेकर आज तक विज्ञान दिन पर दिन उन्नति करता रहा है और एक से एक तेज उडने वाले हवाई जहाज बनते जा रहे है। आज हमारे पास जो हवाई जहाज हैं, वे कुछ घटो मे ही हमे हजारो मील ले जाते है। विज्ञान की इस खोज ने हमारे जीवन पर गहरा प्रभाव डाला है। अब ससार के सब देश एक-दूसरे के बहुत पास आ गए हैं। दुनिया के सब देश एक-दूसरे की जरूरते पूरी करने लगे है और उनकी आपस की जानकारी भी बढ गई है।
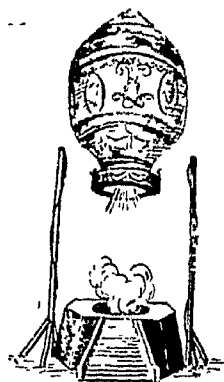
ऐसे-ऐसे हवाई जहाज भी बनाए गए हैं जो हवा और पानी, दोनो में आसानी के साथ उड सकते हैं। लडाई के दिनो मे कई तरह के नए हवाई जहाज बनाए गए। वे हवाई जहाज शत्रु देशो पर बम गिराने, बडी-बडी मजबूत छतरियो की सहायता से फौज उतारने और लड़ाई का सामान लाने ले जाने मे
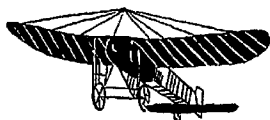
1909 का हवाई जहाज

बहुत उपयोगी सिद्ध हुए। उन्ही की सहायता से बाढ वाले स्थानों में भोजन का सामान पहुचाया जाता है, टिड्डी दल का सामना किया जाता है और जगल की आग बुझाई जाती है। आजकल हवाई जहाज डाक लाने ले जाने का काम भी करते है।

पानी पर उतरने वाला पहला हवाई जहाज

आखिर हवाई जहाज है क्या ? हवाई जहाज का ढाचा और उसका इजन दोनों ही उसे उड़ने में सहायता देते है। उसके पख और उसका ढाचा इस तरह का बनाया जाता है कि हवा मे दौड़ते समय उसे ऊपर जाने की शक्ति अपने आप मिलती रहती है। जितनी तेजी से वह दौडेगा, उतना ही ऊपर उठने के लिए जोर उसे मिलता जाएगा। जिस तरह नाव को आगे बढाने के लिए हम पानी को पीछे फेंकते है, उसी तरह हवाई जहाज के पंखे हवा को पीछे फेकते है। वे पंखे मशीनो और पेट्रोल की सहायता से बहुत ही तेजी से चलाए जाते है। हवाई जहाज को उडने और उतरने में भी उनसे सहारा मिलता है। हवाई जहाज पूंछ से दिशा बदलता है। उसे उड़ने के लिए पहले कुछ दूर तक तेजी से जमीन पर दौड़ना पडता है। पर ऐसे भी हवाई जहाज है जो दौड़े बिना ही ऊपर चढ जाते हैं। उन्हे 'हेलीकॉप्टर' कहते है। उनके ढाचे के ऊपर एक बडा पखा
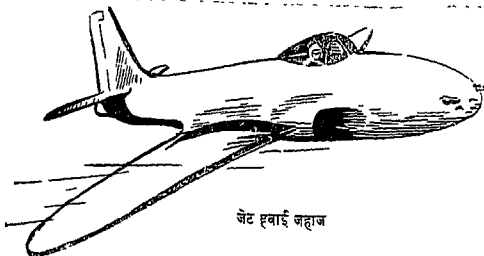
हेलीकॉप्टर

जेट हवाई जहाज
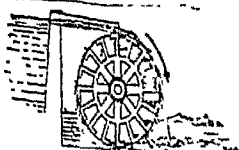
गिरता हुआ पानी बिजली पैदा करने का एक सस्ता साधन है। पहले एक या कई नलो के द्वारा
पानी का बहाव इस प्रकार बदल दिया जाता है कि वह बहुत जोर से गिरने लगे और इंजन चल
सके। इंजन चलने पर धुरी घूमने लगती है और बिजली पैदा करने वाली मशीन (जेनरेटर) काम
करने लगती है। वह बिजली तारो से दूर-दूर तक गाँवो और शहरो को भेजी जाती है।
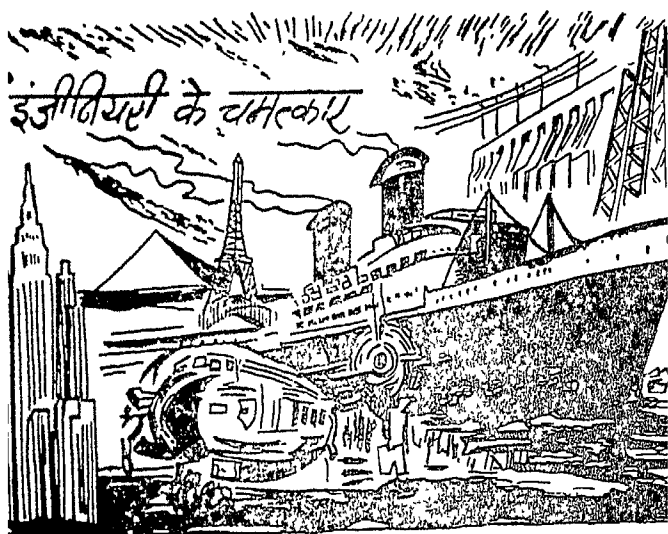
भाखड़ा बांध

हजारों बरस से आदमी संसार की सब वस्तुओं को अपने लिए उपयोगी बनाने की फिक्र में रहा है। इसलिए उसने संसार को सुन्दर और सुखदायी बनाने की बराबर कोशिश की है।

बिजली को 'आविष्कारों की माँ' कहा जाता है, क्योंकि उसके बिना दूसरी न न जाने कितनी खोजे हो ही नही सकती थी। बिजली भाप या तेल की शक्ति से भी पैदा की जाती है और पानी की शक्ति से भी तैयार होती है। पानी से बिजली बनाना सबसे सस्ता पडता है।

पानी मे कितनी शक्ति है, इसका पता तालाव या नदी के धीरे-धीरे वहते हुए पानी से नही लगाया जा सकता। इसकी शक्ति का कुछ अनुमान उस वाढ से लगाया जा सकता है जो अपने साथ गाव के गाव वहा ले जाती है।

वहुत पुराने समय से हमारे देश में पानी की शक्ति से कोई न कोई काम लिया जाता रहा है। पहले नदिया माल लाने और ले जाने का सवसे वडा साधन थी। वगाल और बिहार मे अब भी नावे इस काम मे आती है। पहाड़ी इलाको में झरनो से आटा पीसने की चक्कियां और लकडी चीरने की मशीने चलती है।

नदियो पर बाध वनाने से पानी की अपार शक्ति देश के लिए वडी लाभदायी बन जाती है। वाध से नदी का पानी रोक देने पर वाढ का डर जाता रहता है और उस पानी से सिंचाई की जाती है। इसके अलावा उस पानी से विजली भी वनाई जा सकती है। हमारे देश में कई स्थानो पर इस तरह विजली तैयार की जा रही है। इस काम के लिए कई बाध वनाए गए है। भाखडा वाध उनमे से एक है।

भाखडा वाध पजाव के अम्वाला जिले मे रोपड से 45 मील ऊपर सतलुज नदी पर बनाया गया है। इस जगह सतलुज ऐसी घाटी मे से गुजरती है जहा उसके दोनो किनारो पर ऊँचे-ऊँचे पहाड है। कम से कम खर्च मे ऊँचे से ऊँचा वाध वनाने के लिए ऐसा स्थान वहुत अच्छा रहता है। यहा 740 फुट ऊँचा यानी कुतुव मीनार से तीन गुना ऊँचा वाध वनाया गया है। एशिया मे इससे ऊँचा कोई वाध या इमारत नही है।

यह वडा काम शुरू करने से पहले रोपड से भाखडा तक 45 मील लम्वी रेल की वडी लाइन और एक वडी सडक बनानी पडी। मजदूरो और दूसरे काम करने वालो के लिए भाखडा से सात मील नीचे की ओर नगल मे एक छोटा सा शहर वसाया गया। वाध बनवाने से पहले नदी का वहाव वदलना पडता है। इसीलिए भाखड़ा मे 50 फुट चौड़ी दो सुरगे वनाई गई। उनमे से एक 2,575 फुट और दूसरी 2,387 फुट लम्वी है। नदी का पानी इन सुरगो से निकाल कर बाध की नीव की खुदाई का काम शुरू हुआ। नीव 150 फुट गहरी है।

भाखडा से सात मील नीचे नंगल नामक स्थान पर सतलुज नदी पर एक छोटा बाँध बना कर एक नहर निकाली गई है। इस नहर पर दो बिजली घर गंगूवाल तथा कोटला नामक स्थानों पर बनाए गए हैं। यह नहर 1,104 कि० मी० लम्बी है तथा इससे सन् 1967-1968 में पंजाब, हरियाणा तथा राजस्थान की 14 लाख 45 हजार हेक्टर भूमि की सिंचाई हुई, और लाखों एकड़ बंजर भूमि उपजाऊ हो गयी। भाखड़ा की बिजली से पंजाब और हरियाणा में उद्योगों का बडी तेजी से विकास हुआ। लाखों लोगों को रोजगार मिला तथा देश की समृद्धि में बढ़ोतरी हुई।

गंगवाल, कोटला तथा भाखडा बांध के बाए किनारे पर स्थित बिजली घरों की मिलीजुली क्षमता 604 मेगावाट है। एक और बिजली घर भाखड़ा के दाए किनारे पर बनाया जा रहा है। अनुमान है इस पर 59 करोड़ 70 लाख रुपये की लागत आएगी। इसका काम पाँच खडों में किया जा रहा है। चार खंडो का काम चालू हो चुका है।

हमारे देश में कई ऐसी योजनाएं चल रही है। भाखडा नगल सबसे बडी बहुद्देश्यीय योजना है। इस पर एक अरब 75 करोड़ 40 लाख रुपये की लागत आने का अनुमान है।

यह परियोजना जो सन् 1948 मे आरम्भ की गई, लगभग पूरी हो चुकी है। 22 अक्टूबर, 1963 को स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने इसे राष्ट्र को समर्पित किया था।

भाखड़ा बाध की 55 मील लम्बी झील मे 80 लाख एकड फुट (एक एकड़ फुट=43,560 घनफुट) पानी है जो देश भर के घरेलू उपयोग के लिए एक साल तक के लिए काफी है। इस बांध के बनाने मे 74 लाख घन गज मिट्टी और चट्टाने खोदी गईं।

भाखडा-नगल योजना के ये आठ विभाग है—भाखड़ा बांध और भाखड़ा बिजली घर, नगल बाध, नगल हाइडल चैनल, नगल हाइडल चैनल के दो बिजली घर, रोपड हैडवर्क्स और सरहिन्द का नवीनीकरण, भाखडा नहरे, विष्ट दोआब नहर और बिजली की सप्लाई के तारों का जाल।

भारतीय इंजीनियरों, स्थल सेना के इंजीनियरो, नाविकों और हजारो मजदूरो के प्रयत्नो से बने भाखड़ा बाध में 169 करोड रुपए की पूजी लगी है। इसके निर्माण में 150 व्यक्तियों ने अपने प्राणो की आहुति दी है।

भाखड़ा बांध मानव की बुद्धि, प्रकृति के विरुद्ध संघर्ष, लगन और त्याग की कहानी है। यह सारा का सारा प्रबन्ध सार्वजनिक क्षेत्र मे किया गया, जिसमें ठेकेदारो का उपयोग नही हुआ। भाखड़ा के इस तीर्थस्थल को देखने के लिए प्रतिदिन सैकडो यात्री आते हैं।

साबुन बनाना

प्रतिदिन काम में आने वाली यह चीज हर कोई अपने हाथ से बना सकता है। तरीका सीखने की देर है। फिर तो कुछ घटों मे ही महीने भर का साबुन आसानी से तैयार हो जाता है।

इस लेख में थोडे से शब्दो मे यह बताया गया है कि कपडे धोने और नहाने का साबुन किन तरीको से बनाना चाहिए। साबुन बनाने में कुल चार चीजे काम मे आती हैं —

1 तेल; 2 खार, सज्जी मिट्टी, सज्जी खार या पापड खार और चूना; 3 पानी, और 4 नमक।

तेल : तेल कैसा और कितना हो, यह इस बात पर निर्भर है कि हम साबुन कैसा बनाना चाहते है। फिर यह भी देखना जरूरी है कि तेल ऐसा हो जो अधिक महँगा न पडे। खाने के काम न आने वाले तेल से भी साबुन बनाया जा सकता है, जैसे महुआ, नीम और करजा।

खार सज्जी मिट्टी और दूसरे खार हर जगह आसानी से मिल जाते है। ये खार पडे-पडे उपजाऊ जमीन को नुकसान पहुचाते है। अगर इनसे कास्टिक सोडा बना लिया जाए तो कितना अच्छा हो। सज्जी मिट्टी को गरम पानी में घोल कर गरम-गरम ताजे बुझे चूने का काफी पानी मिला देना चाहिए। फिर उसे कुछ देर पड़ा रहने दे। थोड़ी देर में ऊपर कास्टिक सोडे की तह जम जाएगी।

पानी . पानी ऐसा वरतना चाहिए जो साफ सुथरा हो और खारा न हो।

नमक नमक आम तौर पर साबुन को दूसरी चीजो से अलग करने या साफ करने के लिए डाला जाता है।

बनाने का तरीका

तेल को मिलाने के कुछ नुस्खे नीचे दिए गए है। इनमें से किसी एक नुस्खे के अनुसार दो सेर तेल एक चौडे मुँह वाले वर्तन में डालिए। वर्तन को जरा गरम करिए और उसमें कास्टिक सोडा डालिए। थोडी ही देर में तेल और कास्टिक सोडा मिलकर एक गहरी झाग सी उठाएगे और वह ऊपर की सतह पर खौलती हुई नजर आएगी। हो सकता है कि शुरू में किसी कारण से झाग न उठे, पर तजर्बे से यह मुश्किल जल्दी दूर हो जाएगी। आग पर रखा हुआ यह घोल धीरे-धीरे गाढा होता जाएगा और आखिर उसमें से भाप उठनी बद हो जाएगी। फिर सारा घोल उफन कर ऊपरी सतह पर जम जाएगा। उस समय काफी सावधानी वरतनी चाहिए। कास्टिक सोडा थोडा-थोडा साथ में मिलाते जाना चाहिए। थोडे ही दिनों के तजर्बे से यह मालूम हो जाएगा कि कास्टिक सोडा कितना मिलाना काफी है और किस समय उसका पूरा असर तेल में आ चुकता है।

उसके बाद साबुन तैयार हो जाता है, पर उसमें अलग छूटा हुआ खार और ग्लिसरीन भी मौजूद रहती है। इसलिए उसमें नमक का पानी डालना जरूरी होता है, ताकि साबुन उन दोनों चीजों से अलग होकर नीचे बैठ जाए। पहले उसे ठंडा होने दिया जाता है और फिर उसकी घडाई की जाती है ताकि फालतू हिस्सा उसमें से छँट जाए। फिर साबुन को अलग निकाल कर नए सिरे से पिघलाया जाता है और साचो में डाल दिया जाता है। जब वह जम कर सख्त हो जाता है तब सांचों से निकाल कर उसकी छोटी-छोटी टिकिया बना ली जाती है। सूखने के बाद उसे काम मे लाया जा सकता है।

यदि सिर धोने का साबुन बनाना हो तो आग के ऊपर के घोल को कई बार आच देकर नीचे बैठने दिया जाता है और कास्टिक सोडे से उसे पूरी तरह अलग करना पड़ता है। उसके बाद मनचाहे रग और सुगध उसमें डाल सकते हैं। इस प्रकार नहाने और सिर धोने का साबुन तैयार हो जाता है।

तेल मिलाने के नुस्खे

अरडी का तेल	2 प्रतिशत
3. नीम का तेल	40 प्रतिशत
नारियल का तेल	40 प्रतिशत
मूंगफली का तेल	10 प्रतिशत
महुवे का तेल	7 प्रतिशत
रोज़िन	3 प्रतिशत
4 पूनल का तेल	50 प्रतिशत
नारियल का तेल	35 प्रतिशत
मूंगफली का तेल	15 प्रतिशत
5 तिल का तेल	15 प्रतिशत
मूगफली का तेल	50 प्रतिशत
अरडी का तेल	5 प्रतिशत
महुवे का तेल	20 प्रतिशत
6 चर्बी	43 प्रतिशत
मूंगफली का तेल	37 प्रतिशत
नारियल का तेल	16 प्रतिशत
रोज़िन	4 प्रतिशत
7. कुसुम का तेल	40 प्रतिशत
बिनौले का तेल	14 प्रतिशत

	नारियल का तेल	16 प्रतिशत
	रोजिन	3 प्रतिशत
8.	तिल का तेल	40 प्रतिशत
	नारियल का तेल	40 प्रतिशत
	बिनौले का तेल	20 प्रतिशत
9	महुवे का तेल	60 प्रतिशत
	नारियल का तेल	20 प्रतिशत
	मूंगफली का तेल	16 प्रतिशत
	रोजिन	4 प्रतिशत

घरेलू उद्योग धन्धे (2)

फल संरक्षण

एक समय था जब हर फल फसल के समय अपनी शक्ल दिखाकर चला जाता था और अगली फसल आने तक उसकी राह देखनी पडती थी। कई फल तो ऐसे थे जो दूसरे देशो तक पहुच नही पाते थे। सिर्फ किताबों से उनका नाम मालूम होता था। पर अब अधिकतर फलो का आनन्द हर मौसम और हर देश में लिया जा सकता है।

कहते है कि लखनऊ के नवाब वाजिद अली शाह को लखनऊ का दसहरी आम बहुत पसन्द था। वे आम की बहार मे दसहरो की फाकें कटवा कर शहद में रख देते थे और सर्दी के मौसम में उसे खाते थे। फल संरक्षण यानी फलो को सडने-गलने से बचा कर रखना कोई नई बात नही है। हर घर मे अचार और मुरब्बे डाले जाते हैं। घर की स्त्री का यह गुण माना जाता है कि वह तरह-तरह के अचार मुरब्बे डालना जानती हो।

फल पडे-पडे बिगड क्यो जाते है ? सूखे मेवो की तरह वे देर तक क्यो नही

रह सकते ? देखा गया है कि ताजे फलों में रहने वाले छोटे-छोटे कीटाणु जो अधिकतर उनके पानी के हिस्सो में होते है, फलों को देर तक नही रहने देते।

वे कीटाणु इतने छोटे होते हैं कि उन्हे सिर्फ खुर्दबीन से देखा जा सकता है। फलो, सब्जियो, दूध और यहा तक कि हवा और पानी में भी इस तरह के कीटाणुओं से मिलकर गैस पैदा करते है जिससे उनमे सड़ाध पैदा होने लगती है।

पानी जितनी आंच पर उबलना शुरू हो जाता है, उस आंच को 212 डिग्री की गर्मी कहते है। कीटाणु 212 डिग्री की गर्मी में जीवित नही रह सकते। बहुत ठड भी उन्हे नही सुहाती। बस, फल संरक्षण के दो तरीके निकल आए। पहला वह जिसमें उबलते पानी के द्वारा फल के कीटाणु मार दिए जाते हैं। दूसरा ठड पहुचाने का तरीका, जिसमें फलों के रहने की जगह इतनी ठंडी बना दी जाती है कि कीटाणु सुस्त पड़े रहते है और बढ नही पाते। ठंड पहुचाने की एक खास अलमारी होती है जिसे रेफ्रिजिरेटर कहते हैं। उसमें मशीन द्वारा गर्मी घटाने-बढ़ाने का प्रबन्ध रहता है। पर यह याद रखना चाहिए कि अधिक ठंड से कीटाणु मरते नही, सिर्फ सुस्त हो जाते हैं।

कीटाणुओ को मारने के कुछ और भी तरीके हैं। जैसे कुछ ऐसे मसाले और खाने के तेजाब है, जो उनको नष्ट कर देते है और नए कीटाणु नही पैदा होने देते। अचार डालने के लगभग सभी तरीकों में ये मसाले बरते जाते हैं। राई, कलौजी और नमक ऐसे ही मसाले है। तेल भी नए कीटाणु नही पैदा होने देता। अचार पर तेल की सतह एक चादर का काम करती है जिसे चीर कर हवा और हवा के साथ ही नए कीटाणु अचार तक नही पहुच पाते। इसके सिवा यदि कुछ कीटाणु अचार में रह भी जाते हैं तो वे भी हवा न पहुंचने के कारण मर जाते हैं। इस तरह तेल अचार को सुरक्षित रखता है। अचार में कभी-कभी सफेद रंग की फफूदी पड़ जाती है। उसके दो कारण होते हैं। या तो अचार डालने से पहले सब्जी और फलों को अच्छी तरह पानी में उबाला नही जाता और उसमें कीटाणु रह जाते है, या फिर तेल की कमी से नए कीटाणु पैदा हो जाते हैं। तेल में तली हुई चीज देर तक क्यों रहती है ? इसीलिए

कि आग की तेज आंच से एक तो कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, दूसरे उनके रोम-रोम में तेल समा जाता है जिससे नए कीटाणु पैदा नहीं होने पाते।

अचार डालना फलों को सुरक्षित रखने का ढंग तो है ही, इससे फलों में विशेष प्रकार का स्वाद भी आ जाता है। फलों को हम अलग अलग स्वाद के साथ रख सकते है, जैसे मीठी चटनी, मुरब्बा आदि।

फलो का वही स्वाद, रंग-रूप बनाए रखने के लिए डिब्बा बन्दी का तरीका निकला है। कैलिफोनिया, सिंगापुर और कश्मीर से बन्द डिब्बों में भर भर कर फल ससार के दूर-दूर के देशो मे पहुंचते हैं और अपने असली रूप, रंग, स्वाद और गुणों को अपने साथ ले जाते है। इन्ही तरीकों की कृपा से सिंगापुर का अनन्नास, कैलिफोनिया का स्ट्रॉबरी और आड़ू, कश्मीर की नाशपाती, चेरी तथा उत्तर प्रदेश के आम हम किसी भी मौसम और किसी भी देश में खा सकते है।

फलो की डिब्बाबन्दी इस प्रकार की जाती है। ताज़े और पके हुए फलों को धोकर एक खुले मुँह वाले डिब्बे मे रख देते हैं। एक अलग बर्तन में पानी उबाल कर उसमे जरा-सी चीनी छोड़ दी जाती है। चीनी नए कीड़े नही पैदा होने देती। पर बहुत थोड़ी डालनी चाहिए ताकि फल की अपनी मिठास दब न जाए। पानी इतना हो कि उसमे फल अच्छी तरह डूब जाएं। फिर उस उबलते हुए पानी यानी चाशनी को फलो वाले डिब्बे में
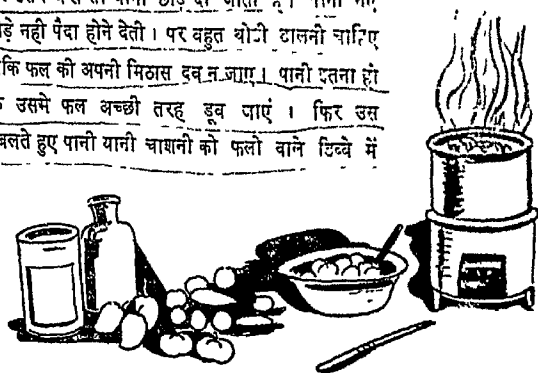
डालकर डिब्बे को गर्म पानी मे रखा जाता है। उससे फल के भीतर या बोतल के आस-पास के सब कीडे नष्ट हो जाते हैं। आखिरी काम यह करना होता है कि डिब्बे को इस

तरह मोहर लगाकर बन्द कर दिया जाए कि बाहर की हवा डिब्बे में किसी प्रकार भी न जा सके। मोहर लगाने के लिए अब ऐसी मशीने निकल चुकी है कि एक अनजान आदमी भी डिब्बे को आसानी से बन्द कर सकता है। बन्द करते ही डिब्बे को ठडे पानी में रख देते है। ऐसा करने से डिब्बे के अन्दर की चाशनी ठडी हो जाती है।

मीठे पानी के घोल की जगह नीबू और नमक का पानी भी इस्तेमाल होता है, पर उन्हे अधिकतर सब्जियो मे बरता जाता है। बाकी सब तरीका एक जैसा है। नीबू के पानी मे जरा-सी चीनी भी मिलाई जाती है। नीबू और नमक का प्रयोग जरा से फर्क के साथ अचार डालने मे भी होता है। जिस चीज का अचार डालना होता है, उसकी फाके काटकर उसमें नमक मल दिया जाता है और धूप में सूखने को डाल दिया जाता है। फिर अचार डालते वक्त उनमें नीबू का रस अथवा सिरका डाल दिया जाता है।

डिब्बाबन्दी अब बडे पैमाने पर होने लगी है। उसमे मशीनो का प्रयोग होता है और सफाई तथा स्वास्थ्य के नियमों का बहुत ध्यान रखा जाता है।
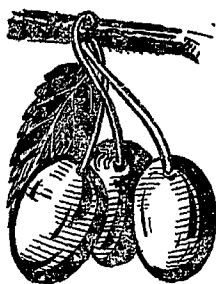
ताजमहल

का जन्म 1593 ई० में हुआ। 10 मई, 1612 को उनका विवाह शाहजादा खुर्रम के साथ हुआ। शाहजादा खुर्रम ही आगे चलकर शाहजहां के नाम से भारत के सम्राट हुए। शाहजहा और अर्जुमंद बानू एक-दूसरे से बेहद प्रेम करते थे। खुर्रम ने जब नूरजहां के व्यवहार से खुशी होकर अपने पिता जहागीर से विद्रोह किया, तो उन्हे देश से निकाल दिया गया। उस संकट काल में भी अर्जुमद बानू ने उनका साथ न छोड़ा। इस प्रेम का फल उन्हे उस समय मिला जब उनका खुर्रम शाहजहा के नाम से तख्त पर बैठा। उस समय मुमताज का दर्जा बहुत ही ऊंचा था। यहाँ तक कि शाही मोहर उन्ही के पास रहती थी।

मुमताजमहल बहुत ही दयालु और उदार थी। कहा जाता है कि वह हजारो रुपए रोज दान करती थी। उन्होंने न जाने कितनी अनाथ और असहाय लडकियो के दहेज का प्रबन्ध अपनी ओर से किया। जब बादशाह कही दौरे पर जाते या चढ़ाई करते, तो मलिका भी उनके साथ होती। एक बार दक्षिण के गवर्नर खानेजहा लोदी ने बादशाह के खिलाफ सिर उठाया। बादशाह उसे दबाने के लिए दक्षिण की ओर गए। मलिका भी उनके साथ थी। उसी समय बुरहानपुर (खानदेश) मे उनकी चौदहवी सतान शाहजादी गौहरआरा पैदा हुई। अपनी उस सतान को जन्म देकर मलिका सदा के लिए सो गई। यह घटना 28 जून, 1631 की है।

शाहजहां पर इस घटना का बहुत असर हुआ। उनके शोक की सीमा न थी। कहा जाता है कि शोक के कारण उनके बाल सफेद हो गए और उन्होने कई महीने तक राजकाज या दरबारी जलसों में कोई भाग नही लिया।

मलिका की लाश कुछ समय के लिए जैनाबाद के बाडे में दफना दी गई।

आगरा पहुचते ही सम्राट ने मलिका के मकबरे के लिए एक जगह पसंद की। यह जगह जयपुर के महाराज जयचन्द के अधिकार मे थी। सम्राट ने उसके बदले महाराज को दूसरी जगह उतनी ही जगह दे दी। छ महीने बाद सम्राट की आज्ञा से मलिका की लाश आगरे लाई गई और एक बार फिर कुछ दिन के लिए ताज बाग के उत्तर पश्चिमी कोने मे एक गुम्बदनुमा इमारत मे दफना दी गई। आजकल इस जगह एक खुला हुआ कटहरा दिखाई देता है। कटहरे के चारो तरफ लाल-पत्थर की दीवारे है। उसके पास ही एक बावली है।

उधर मकबरा बनाने का काम तेजी से होने लगा। एशिया के सब देशो से बड़े-बड़े कारीगर बुलाए गए। यह तो नही कहा जा सकता कि ताजमहल का नक्शा किसने बनाया, पर यह बात अवश्य ही कही जा सकती है कि उसे बनाने मे शाहजहा के शाही इजिनीयर, लाहौर के उस्ताद अहमद का बडा हाथ था। उस्ताद अहमद ने ही दिल्ली का लाल किला और जामा मस्जिद बनवा कर अपनी योग्यता दिखलाई थी। उनकी सहायता के लिए और भी कई बडे-बड़े इजिनीयर थे। पूरे काम की देखभाल मकरमत खा और मीर अब्दुल करीम नामक दो इजिनीयरों को सौंप दी गई थी। ताज का गुम्बद तुर्की के इस्माइल खा ने बनाया था। दरवाजो पर लिखे हुए कतबे अपने समय के सबसे बडे कातिब अब्दुल हक, उपनाम अमानत खा शीराजी, ने लिखे थे। इटली और फ्रास के कारीगरो ने सुनहरे कटहरे पर सजावट का काम किया था। कहा जाता है कि इस सुनहरे कटहरे मे 40 हजार तोला सोना लग गया था। बाद मे शाहजहा ने सोने के कटहरे की जगह सगमरमर का कटहरा बनवा दिया जिसमे हीरे और जवाहरात जडे हुए थे।

कटहरे की जाली के बेल बूटे

फारसी में एक मशहूर किताब 'बादशाहनामा' के अनुसार ताजमहल की नीव में पत्थर और चूना भरा गया है। चबूतरा ईंटों और चूने के मसाले से बनाया गया
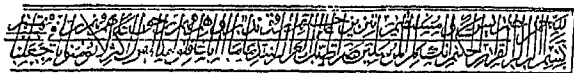
दरवाजो पर लिखे अरबी भाषा के कतबे का एक नमूना

है। चबूतरे के फर्श पर सफेद सगमरमर के टुकड़े लगे हैं। इस तरह मकबरे की पूरी इमारत बहुत पक्की नीव पर टिकी है।

असली मकबरा, पश्चिम की ओर की एक मस्जिद, पूर्व की ओर उसका 'जवाब', एक मेहमानखाना और दक्षिण मे सदर दरवाजा—ये सब इमारतें लगभग 17 वर्ष मे बनी। जिलौखाना और बाहर के खम्बे वगैरह बनने मे कोई पाच वर्ष लगे। ये सब बाद में बनाए गए थे।

ताजमहल मे सफेद सगमरमर काम मे लाया गया है। यह पत्थर जयपुर और जोधपुर से मगाया गया था। लाल पत्थर आगरे के ही रूपवास नामक स्थान से आया था।

ताजमहल और उसके साथ की इमारतो की लागत का सही अन्दाजा नही लग सकता। अनुमान किया जाता है कि इस काम पर उस समय लगभग सात करोड़ रुपया खर्च हुआ होगा। ब्यौरा तो 50 लाख के खर्च का ही मिलता है, पर यह फुटकर कामो और लगभग 20 हजार मजदूरों की मजदूरी पर ही खर्च हो गया था। इसमे बड़े-बडे कारीगरो और इजिनीयरों का वेतन शामिल नही है। वे सरकारी नौकर थे। इस रकम मे पत्थरो और हीरे जवाहरातो का खर्च भी नही जोडा गया। वे चीजे या तो सरकारी थी या शाहजहा की निजी सम्पत्ति थी।

ताज का एक हिस्सा

ताजमहल के आस-पास की इमारतें भी बहुत सुन्दर है, लेकिन ताजमहल की सुन्दरता से उनका क्या मुकाबला ? इसीलिए दुनिया भर से दर्शक और कलाकार ताजमहल को देखने आते हैं और उसे देखकर दंग रह जाते है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि ताजमहल दुनिया की सुन्दर से सुन्दर इमारतो मे से एक है। कला के पारखियों का कहना है कि ताजमहल की बनावट मे अनेक देशो की कलाओ जैसे प्राचीन भारत, अरब, ईरान, चीन और इटली की कला का सुन्दर संगम देखने को मिलता है।

शाहजहा ने अपनी प्रिय बेगम की अमर यादगार के रूप मे ताजमहल बनवाया था। वह ताज की कला पर ऐसा मुग्ध था कि अपने आखिरी दिनो मे उसे देख-देख कर सुख और शांति पाता था।

मदुरै का मन्दिर

दक्षिण भारत मे ईसा की सातवी सदी से मदिर बनने शुरू हुए और तब से लगभग अठारहवी सदी तक मन्दिर बनाने की कला में बराबर उन्नति होती गई। दूसरी कलाओ की भाति, मन्दिर बनाने की कला भी राजवशो के सहारे फली-फूली और उन्ही राजवशो के नाम पर मन्दिरों की बनावट की अलग-अलग शैलियो यानी ढंगो के नाम पडे। पल्लव, चोल, पाड्य, विजयनगर और नायक उनमे खास शैलियां है।

नायक शैली आखिरो है और सबसे अधिक विकसित या बढी-चढी है। उसका दूसरा नाम मदुरै शैली भी है। नायक राजाओ का राज्य 1550 ई० के आसपास शुरू हुआ। व्यापार, कला, साहित्य और धर्म का केन्द्र मदुरै, पाड्य राजाओ की राजधानी था। नायक राजाओ ने भी उसे अपनी राजधानी बनाया। उनके राज्यकाल मे बहुत अधिक मदिर बने। त्रिचिनापल्ली, श्रीरगम, चिदम्बरम और रामेश्वरम् के मन्दिर उनमे खास है। लेकिन मदुरै का मदिर इस
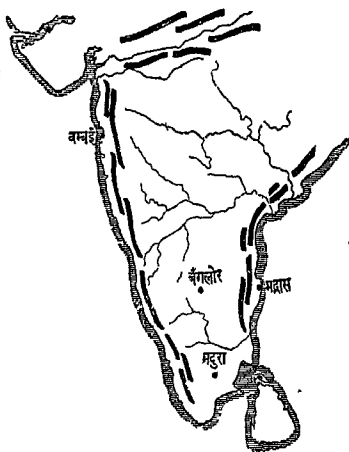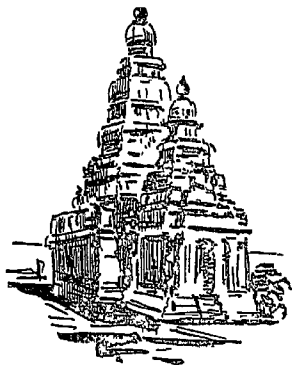
पल्लव—600 से 900 ई०

चोल—900 से 1150 ई०

पाड्य —1150 से 1350 ई०
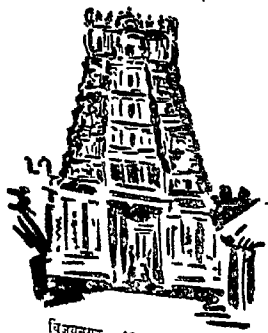
विजयनगर—1350 से 1565 ई०
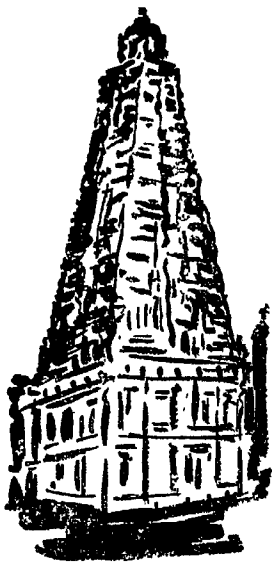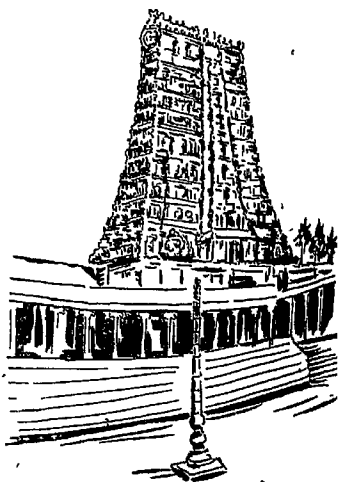
नायक या मदुरा—1600 ई० से—

शैली का सबसे अच्छा नमूना है।

दक्षिण भारत के बडे-बड़े मदिरो का श्रीगणेश प्राय: बहुत छोटे-छोटे मदिरों से हुआ। सभी राजवशो ने मदिर बनवाए, इसलिए धीरे-धीरे उनकी सख्या और आकार इतना बढ गया कि श्रीरगम जैसे बड़े मदिर एक अलग शहर जैसे जान पड़ते है। ऐसा लगता है कि मदुरै का मदिर भी किसी पुराने देवस्थान पर बना हुआ है। समय-समय पर वहा मदिरों की सख्या बढती गई, परन्तु उसके मुख्य भाग थोड़े ही समय के भीतर बने थे।

मदिर की इमारत बडी अनोखी और मन पर प्रभाव डालनेवाली है। उसके ऊँचे-ऊँचे गोपुरम अर्थात् चहारदीवारी के दरवाजे, खम्भों वाले बरामदे या बडे-बडे मडप, पत्थर की बडी-बडी मूर्तियो और खुदे हुए बेलबूटे तथा छत की रग-बिरंगी चित्रकारी देखने वाले को एकदम मोह लेती है। भारत के कोने-कोने से तीर्थयात्री और कला प्रेमी यहां दर्शन करने आते रहते हैं।

शहर में पहुचने से पहले कई मील से ही 150 फुट से भी अधिक ऊचे गोपुरम दिखाई पढने लगते है। पैदल आने वाले थके हुए यात्रियो का हारा हुआ मन भी उनके दर्शन से प्रसन्न हो उठता है।
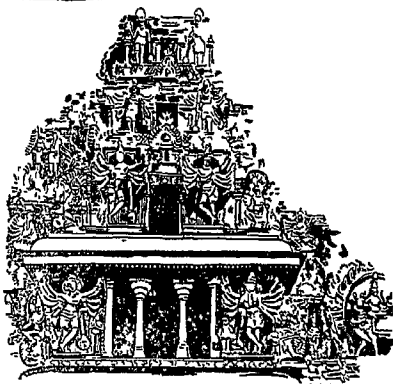
मदिर तीन चहारदीवारियो से घिरा है। चहारदीवारियो के बीच के स्थान प्राकार कहलाते है। उनमे कई मडप, मदिर, लम्बे बरामदे, गोदाम इत्यादि हैं। मुख्य मदिर दो है: सुन्दरेश्वर महादेव का और मीनाक्षी नाम से विख्यात पार्वती का।

मदिर की वाहरी चहारदीवारी 850 फुट लम्वी और 725 फुटी चौड़ी है। चहारदीवार मे चारो ओर ठीक वीचोंवीच एक-एक गोपुरम है, परन्तु मुख्य गोपुरम पूर्व की ओर है। गोपुरम कई मजिलो के है। वे नीचे चौड़े और ऊपर हर मंजिल पर कुछ संकरे होते जाते है। नीचे की मजिल पत्थर की है और ऊपर ईंट की। हर मजिल पर चारो ओर इतनी अधिक मूर्तिया है कि वस मूर्तिया ही मूर्तिया दिखाई देती है।

पूर्व के गोपुरम से घुसते ही सामने एक खम्भो वाला खुला वरामदा पड़ता है और उसके पीछे नंदी मडप है, जिसमें शिवजी की सवारी नंदी वैल की मूर्ति है। मदिर की दूसरी चहारदीवारी की लम्वाई-चौडाई 120×310 फुट है। उसमे भी चारो ओर गोपुरम है। किन्तु वे वाहरी चहारदीवारी के गोपुरो से कुछ छोटे है। तीसरी चहारदीवारी केवल 250×156 फुट है और उसमे एक ही दरवाजा पूर्व की ओर है। असली मंदिर इस चहारदीवारी से घिरा हुआ है। मदिर के दो भाग है। भीतरी गर्भगृह, जिसमें सुदरेश्वर महादेव की प्रतिमा है और उसके सामने खम्भो का मडप, जहा लोग भगवान के दर्शन करते हैं। दोनो भागो के वीच के रास्ते को अतराल कहते हैं। गर्भगृह की छत पर गुम्वद या कलश की शकल का एक छोटा शिखर या चोटी है।

मदिर के दक्षिणी भाग में शिव मदिर के वरावर पहली और दूसरी चहारदीवारी के बीच मे मीनाक्षी देवी अर्थात् पार्वती जी का मदिर है। मीनाक्षी का अर्थ है मछली जैसी सुन्दर आखों वाली। यह पार्वती के अति सुन्दर रूप का नाम है, जैसे शिव जी के सुन्दर रूप का नाम सुदरेश्वर है। मीनाक्षी मदिर में गर्भगृह बीच मे है और उसके चारो ओर खम्भो वाला मडप है। इस मदिर की अलग

चहारदीवारी 225×150 फुट लम्बी-चौडी है, किन्तु उसमें गोपुरम दो ही है, पश्चिम और पूर्व में। मीनाक्षी मंदिर के सामने एक तालाब है जिसका तमिल नाम पोट्रामरईकुलम अर्थात् 'सुनहली कमलिनियों वाला तालाब' है। तालाब के चारों ओर खम्भो वाला बरामदा है जिससे तालाब की शोभा बढ़ जाती है। उसकी छत पर रंग-बिरंगे चित्र है, जिसमे शिव जी के चौसठ अनोखे कामों के दृश्य आके गए है।
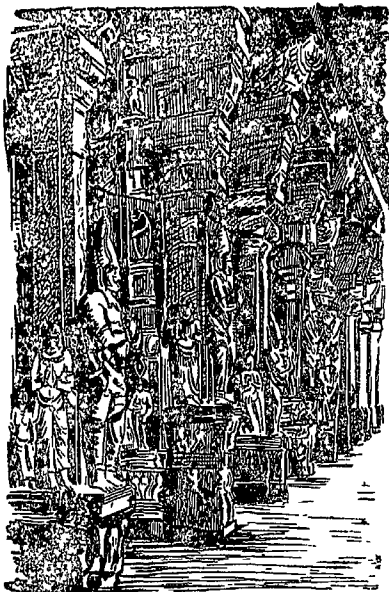
सुनहली कमलिनियो वाले तालाब के सामने खम्भो वाला बरामदा

सुब्रह्मण्य अर्थात् शिव-पार्वती के पुत्र कार्तिकेय का एक छोटा मदिर मीनाक्षी मदिर के द्वार की बगल में है। तालाब के पूर्व में एक ऊँचा गोपुरम है जिससे होकर दर्शक बाहर से सीधे ही भीतर के मदिर में आ सकते है। इस मदिर मे कुल मिलाकर ग्यारह गोपुरम है। मदिर में कई मडप है। उनमे से दो मंडपों की बात बता देना यहा काफी होगा। बाहरी चहारदीवारी के भीतर उत्तरपूर्व के कोने में सहस्र स्तम्भ मडप है। इसमे खम्भों की सख्या 985 ही है, फिर भी इसे हजार खम्भों वाला कहा गया है। इसके खम्भो पर तरह-तरह की मूर्तिया और बेल-बूटे खुदे है और खम्भे इस खूबी से लगाए गए है कि उनकी पातो के बीच का दृश्य किसी ओर से भी देखने पर

ऐसा लगता है जैसे एक लम्बा रास्ता हो। नायक वंश के राज्य की नींव डालने वाले विश्वनाथ के मन्त्री आर्यनाथ मुदली ने इस मंदिर को सन् 1660 के आस-पास बनवाया था।

नायक राजाओ मे तिरुमल नायक (1626 से 1652) को इमारतें बनवाने का सबसे अधिक शौक था। मदुरै मे उसका महल प्रसिद्ध है। इस मन्दिर मे भी कुछ इमारते बनवाकर उसने इसे काफी बढा दिया। मदिर के मुख्य गोपुरम के सामने सडक की दूसरी ओर पुदु मडप या बसन्त मडप उसी का बनवाया हुआ है। इसे तिरुमल की चाल्ट्र अर्थात् धर्मशाला भी कहते है। इसका निर्माण कार्य 1626 मे आरम्भ हुआ था और इसके बनाने में सात साल लगे। यह मडप लम्बे कमरे जैसा है। बीच के स्थान के दोनो ओर और दीवारो के साथ खम्भो की पाँतें है। खम्भो मे सुन्दर मूर्तिया और बेल-बूटे तो हैं ही, साथ ही दस खम्भो पर नायक राजाओ की प्रतिमाए भी खुदी हुई हैं।

पुदु मडप का एक दृश्य

मदुरै का मदिर बहुत अधिक स्थान घेरे हुए है। मदिर की चहारदीवारी के भीतर दुकाने हैं। स्थापत्य कला अर्थात् इमारत बनाने की कला के विचार से तो

यह मन्दिर सुन्दर और मनमोहक है ही, साथ ही यहा की मूर्तिकला भी सुन्दर है। मन्दिर के खम्भों के सामने देवी-देवताओ की बड़ी-बड़ी मूर्तिया है। पशु-पक्षी तो ऐसे बनाए गए है जैसे पत्थर के न होकर सचमुच के हो। देवताओ की मूर्तिया और पशु-पक्षियों को देखकर ऐसा लगता है जैसे मूर्ति बनाने वालो ने पत्थर को देख-देखकर नही, बल्कि हाथों से मोड़ कर या बड़े साचो मे ढालकर इन मूर्तियो को तैयार किया हो। इनमें उन पशुओ की मूर्तिया बहुत ही सुन्दर है जिनके धड़ और सिर अलग-अलग पशुओ के दिखाए जाते है। दीवारो और खम्भो पर बेल-बूटे इस खूबी से खोदे गए है कि कपड़े पर कसीदे के काम को भी मात करते है। देवी-देवताओ की अलग-अलग मूर्तियो के अलावा बहुत-से दृश्य भी पत्थरों पर खोदे गए है। इन दृश्यो का सबध रामायण, महाभारत या पुराणो की कथाओ से है। यहा की मूर्तियों की किसी ने गिनती तो नही की, लेकिन कहा जाता है कि कुल मूर्तिया तीन करोड़ से भी अधिक है।

एक खम्भे पर खुदी राम और सीता की मूर्ति

मदुरै बहुत पुराने समय से द्रविड़ सभ्यता का खास केन्द्र रहा है। यहा पाड्यों की राजधानी रही और चोल युग में यह एक खास नगर रहा। चौदहवी शताब्दी के प्रारम्भ में मुसलमानों ने इस पर अधिकार जमाया। लेकिन 50 साल बाद ही विजयनगर के राजाओं ने इसे अपने राज्य में मिला लिया और नायकों ने फिर से इसे दक्षिण की राजधानी बनाया। ऐसे राजनीतिक उलट-फेर होने पर भी मुदरै सस्कृति-केन्द्र बना रहा। मदुरै को गौरव के इस ऊचे पद पर बैठाने मे सुन्दरेश्वर और मीनाक्षी के मदिर का बहुत बडा हाथ है। इस समय हाथ के बुने कपड़ों के लिए भी मदुरै प्रसिद्ध है। लेकिन मुदरै का नाम सुनते ही सुनने वालों का ध्यान इस प्रसिद्ध मदिर और उसकी मूर्तियो की ओर बरबस खिंच जाता है।

सौन्दर्य की खोज में (3)

संगीत

घुमड़ते मेघो के स्वर पर जब मल्हार का राग अलापा जाता है, नदियो के किनारे जब वंशी की तान ऊची उठती है, वीणा की झकार जब रात के सन्नाटे में गूंजती है तो सुनने वाला सुध-बुध खो बैठता है। मनुष्य ही नही पशुओ और पक्षियो तक पर संगीत का प्रभाव पडे बिना नही रहता।

सगीत का प्रकृति से बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। मनुष्य ने प्रकृति से ही सगीत सीखा और अपने दुख-सुख के भावो को गीत मे प्रकट किया।

सगीत का इतिहास बहुत ही मनोरजक है। हर देश की अलग-अलग दशा होती है। इसलिए हर देश में अपने-अपने ढंग से सगीत पनपा और बढा।

यहूदी दुनिया की बहुत पुरानी कौम है। यहूदियो मे सगीत का बडा मान था। उनके पैगम्बर बड़े सगीतप्रेमी थे। अब से कोई तीन हजार साल पहले उनके बीच

संगीत की चर्चा होती थी। मिस्र की सभ्यता भी बहुत पुरानी है। वहां बांसुरी पर गाने का बड़ा चलन था। मिस्र की कब्रों में बहुत ही सुन्दर बांसुरियां मिली हैं। उनमें यहां तीन तरह के बाजों का चलन था। उनके एक बरतन भी था। झांझ, मजीरा और वायलन जैसे बाजे उनके यहां न थे। त्यौहारों और उत्सवों पर या किसी धर्म के काम के समय वे लोग नाचते-गाते थे। राजदरबार में भी नाच-गाना होता था। पेशेवर नाचने-गाने वाले भी थे। नाच-गाना सिखाने वाले स्कूल भी थे।

मिस्र का 4 हजार साल पहले का बरबत

अब से करीब ढाई हजार साल पहले यूनानियों ने मिस्र से गाने की विद्या सीखी। यूनान वाले पहले कविता और गाने को एक मानते थे। चारण या भाट जगह-जगह घूमते रहते थे और गा-गा कर कविता सुनाया करते थे। पिथागोरस ईसा से 582 वर्ष पहले हुआ था। पिथागोरस ने संगीत को ठीक रूप दिया। उसने दूर-दूर की यात्राएं कीं। वह मिस्र भी गया और वहां से ठीक से संगीत सीख कर लौटा। अपने देश में आकर उसने संगीत को ताल-स्वर में बांधा और उसके नियम-कायदे बनाए। फिर तो नाटकों में भी गानों को जगह मिली। यूनान में तार वाले बाजों और फूंक कर बजाए जाने वाले बाजों का चलन था। यूनान वाले गाजे-बाजे के साथ त्यौहार मनाते थे। कोई 2,400 साल पहले तो ओलम्पिक खेलों में, जो यूनान के राष्ट्रीय खेल थे, नगाड़े बजाने की होड़ होने लगी थी। इसी तरह एक खास त्योहार के समय बांसुरी बजाने की होड़ भी होती थी। यूनानी बांसुरी को शहनाई की तरह सीधी रखकर बजाते थे। एक
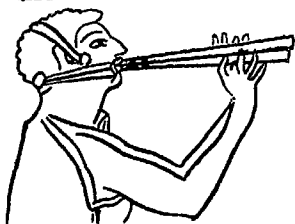
पुराने यूनान की दो मुंह वाली बांसुरी। गालों पर चमड़े की पट्टी देखिए। यह इसलिए है कि हवा भरने से गाल न फट जाएं।

बार एक बजाने वाले की बांसुरी का मुंह किसी कारण से रुध गया। उसने बांसुरी टेढ़ी कर ली और बजाता रहा। तब से बांसुरी को टेढ़ी करके बजाने का चलन हो गया।

रोम ने संगीत का पाठ यूनान से पढ़ा, इसलिए वहां यूनान के ही बाजों का चलन रहा। वहां बांसुरी का बहुत अधिक प्रचार हुआ। रोम में नाटक खेलते समय मीठी ध्वनि में बांसुरी बजाई जाती थी।

चीन वाले भी बहुत पुराने समय से संगीत के प्रेमी है। कहते है कि चीन में संगीत का चलन महात्मा लिंग लुन ने किया। उन्होंने नदी के किनारे चिड़ियों के एक जोड़े को गाते सुना और उससे संगीत सीख कर उसका प्रचार किया।

हमारे देश के संगीत की कहानी भी बहुत अनोखी है। हमारे संगीत का अपना निरालापन है। भारत में कला और धर्म का चोली दामन का साथ रहा है, इसीलिए संगीत को देवताओं से पैदा हुआ मानते हैं। कहते है कि भगवान शंकर ने पांच राग रचे और पार्वती जी ने छठे राग की रचना की। हमारे संगीत में गाना, बजाना और नाच तीनो शामिल है।

सामवेद और दूसरे वेदो की ऋचाएं और गाथाएं कुछ गाकर पढी जाती थी और कुछ बिना गाए पढी जाती थी। पढने मे स्वर-ताल का ध्यान रखा जाता था।

ऋग्वेद मे चार प्रकार के बाजों का वर्णन है : तार वाले बाजे, चमड़ा मढे हुए, धातु के और फूंककर बजाए जाने वाले। अथर्ववेद में ताल-स्वर के नियम बताए गए हैं। कई तरह के तारो वाले बाजो का वर्णन भी मिलता है उनमे एक बाजा ऐसा था जिसमे 100 तार रहते थे। दमामो मे भूमि-दुन्दुभी खास थी। बलिदान के समय यह दुन्दुभी बजाई जाती थी। किसी गड्ढे पर चमड़ा फैला दिया जाता था। फिर किसी लकड़ी से चमड़े को पीटा जाता था।

धीरे-धीरे नए-नए बाजे निकलते गए और अनुभव से बजाने के नए-नए ढंग भी निकले।

वेदो के समय के बाद सूत्रों का समय आया। उस युग मे कर्मकांड बहुत होते

थे। कर्मकांडो मे सगीत का खास स्थान था। इसलिए सगीत कला में और उन्नति

भारत मे तेईस सौ साल पहले प्रचलित वीणा

हुई। उस समय तरह-तरह के बाजे बने और उन्हे, अलग-अलग ढग से बजाने की विधिया सोची गईं। उस समय के ग्रथों मे सौ तार की वीणा और अलबु वीणा के नाम मिलते है। लेकिन तब लोग सगीत को देवता की चीज और बहुत पवित्र मानते थे। उसे अपने मनोरजन की चीज नही समझते थे।

उसके बाद रामायण और महाभारत का समय आया। सगीत पवित्र, धार्मिक चीज तो अब भी रहा, लेकिन अब वह राज-दरबार मे मनो-रंजन का साधन भी बन गया। फल यह हुआ कि बडे आदमी सगीत सीखने लगे और राजा लोग गवैयों का मान करने लगे। लेकिन सगीत को राज्य का सहारा तो मौर्यो के समय मे ही मिला। गवैयों, बाजे बजाने वालो और नाचने वालो को राज्य से सहायता मिलने लगी।

अठारह सौ साल पहले की वीणा

कुशान वश के सम्राट कनिष्क के दरबार मे महाकवि अश्वघोष रहते थे। वे कवि ही नही गायक भी थे। वे कविताए लिखते, मंडली बना कर निकलते और लोगो को अपने गीत गाकर सुनाते थे।

गुप्त राजाओ का समय सुनहला समय माना जाता है। सचमुच वह समय सुनहला कहलाने योग्य है। उस समय हमारे देश में कला और साहित्य की खूब उन्नति

हुई। सगीत भी खूब बढा। सम्राट् समुद्रगुप्त खुद सगीतप्रेमी और गायक थे। कुछ सिक्को पर वह वीणा बजाते दिखाए गए है। उसी समय पुराण भी रचे गए थे उनमे भी सगीत की चर्चा है। परन्तु सगीत पर सबसे अच्छा, पुराना ग्रथ नाट्यशास्त्र है। उसकी रचना भरत मुनि ने की थी। उस समय सगीत के स्वर यति, मूर्च्छना और ग्राम में बाटे जाते थे। फिर इन स्वरो को 21 विरामो में बाटा गया। वे विराम श्रुति कहलाते थे। श्रुति का अर्थ है गीत का उतना भाग जो सुना जाता है। उन श्रुतियों के सहारे स्वर निर्माण किया गया था। भरत मुनि ने राग-रागनियो के बारे मे कुछ नही लिखा। रागो की चर्चा तो बहुत बाद की चीज है।

वीणा बजाते हुए समुद्रगुप्त

हर्ष के समय मे सगीत का बहुत ही अधिक मान था। नालदा विश्वविद्यालय मे सगीत की शिक्षा मुफ्त दी जाती थी।

हर्ष के बाद के छः सौ साल भारत के इतिहास मे बड़े परिवर्तन के थे। उसके बाद राजपूतो के दरबार में सगीत की चर्चा आई। राजपूत राजा खुद सगीत जानते थे और कलाकारो का मान करते थे। पृथ्वीराज गाने और बजाने दोनो मे बहुत प्रवीण थे।

अब तक हमने उत्तर भारत के सगीत की चर्चा की है। अब तनिक दक्षिण भारत को ओर चले। सातवी और आठवी सदी मे दक्षिण मे भक्ति आन्दोलन चला और पूरे देश मे फैल गया। भक्ति आन्दोलन के फैलने मे सगीत ने बड़ी सहायता पहुचाई। भक्त कवियो ने जनता की समझ मे आनेवाली भाषा में गीत रचे और गा-गा कर भक्ति का प्रचार किया। इस युग मे मन्दिर सगीत के केन्द्र बन गए। मन्दिर के पुजारियो और साधु-सतो ने सगीत के प्रचार मे बहुत हाथ बटाया।

दक्षिण भारत मे भक्ति की जो लहर उठी वह उत्तर भारत भी पहुची। उत्तर भारत के गायक कवि जयदेव का नाम खास तौर से लिया जा सकता है। उनका 'गीत गोविन्द' बहुत सुन्दर गीति-काव्य है। उसमे भगवान कृष्ण की लीला मधुर पदों में गाई गई है। उस युग मे सगीत के एक बहुत बडे पडित सारगदेव हुए। उन्होंने

संगीत रत्नाकर नाम का एक बडा ग्रथ लिखा। सारगदेव तेरहवी सदी में हुए थे और दक्षिण के यादव राजाओ के दरबार मे रहते थे।

भारत का परिचय मुसलमान सभ्यता से होने पर फारस और अरब के सगीत का प्रभाव भारत के सगीत पर पडा। इस तरह सगीत विद्या के दो अलग-अलग स्कूल बन गए—एक उत्तर भारत का सगीत, दूसरा दक्षिण भारत का सगीत या कर्नाटकी स्कूल।

चौदहवी सदी के आरम्भ में अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में एक बडे कवि अमीर खुसरो थे। वे सगीत के बडे जानकार थे। उन्होंने फारस और अरब के सगीत को भारत के सगीत के साथ बडी ही सुन्दरता से मिलाया और बहुत-सी नई और मीठी ध्वनिया निकाली। वे ध्वनिया पुराने हिन्दू सगीत से बहुत मिलती-जुलती थी। फिर भी उनसे अलग थी। खुसरो बहुत ही चतुर थे। उन्होंने कई बाजे भी निकाले। उन्होंने वीणा से सितार और मृदग या पखावज से तबला ईजाद किया। अमीर खुसरो के समय में ही नायक गोपाल हुए थे। बैजू बावरा भी उस समय के बहुत प्रसिद्ध गायक थे। उनका गाना सुनकर लोग तन-बदन की सुधि भूल जाते थे।

औरगजेब के सिवा दूसरे सब मुगल बादशाह भी संगीत के बडे प्रेमी थे। उनके दरबारों में नामी गवैयों का जमघट लगा रहता था। अकबर संगीत और कला के सबसे बडे प्रेमी थे। प्रसिद्ध सगीतज्ञ तानसेन अकबर के ही दरबार के रत्नो में थे। खुसरो से लेकर तानसेन तक सगीत में जो नए प्रयोग किए गए, उनका फल यह हुआ कि देश के सगीत की ध्रुपद परम्परा लगभग समाप्त हो गई और एक नई परम्परा बननी शुरू हुई जिसे 'खयाल' कहते है।

बैजू बावरा

मुहम्मदशाह रंगीले भी सगीत के बहुत बडे प्रेमी थे। उनके दरबार के उस्ताद नियामत खाँ सदारग का नाम सभी सगीत प्रेमी जानते है। उन्होने सगीत की बडी उन्नति की। सदारग गाने तो लिखते ही थे।

उन्होंने खयाल को नए सुर में बांधा। आजकल खयाल उन्ही के बांधे सुर में गाया जाता है।

तानसेन

मुगलो के समय में ही भारत में कई बडे वैष्णव भक्त कवि हुए थे। उन्ही मे बगाल के चैतन्य महाप्रभु भी थे। उत्तर प्रदेश में तुलसीदास और सूरदास भी उसी समय हुए थे। महाराष्ट्र में सत तुकाराम और राजस्थान मे मीरावाई थी। इन भक्तों से भी सगीत को वहुत बल मिला। उनके पद अलग-अलग देशी ढगो से गाए जाते थे। इस प्रकार वहुत-सी नई तर्जों का जन्म हुआ।

अठारहवी और उन्नीसवी सदी मे भारत के इतिहास मे वड़े परिवर्तन हुए। मुगलो का राज्य टूट रहा था और अग्रेजों का सिक्का जम रहा था। इस बीच सगीत को भारत के खास-खास राजाओं और नवावो ने सहारा दिया। उनमें लखनऊ के नवाव वाजिद अली शाह का नाम विशेष रूप से लिया जा सकता है। उस समय सभी वडे-वडे गायको ने दिल्ली से भागकर लखनऊ की शरण ली। वही सगीत की एक नई तर्ज ठुमरी का जन्म हुआ। परन्तु लखनऊ की भी दशा ठीक न रही और सभी गायक ग्वालियर, रामपुर, इंदोर और दूसरी रियासतो में जा बसे। बाद मे ये स्थान सगीत और नृत्य की अलग-अलग शैलियो के केन्द्र बन गए।

उन्नीसवी सदी मे राष्ट्रीय आन्दोलन चला। जनता जागी और सुगबुगाने लगी। सगीत पर भी इसका प्रभाव पडा। सगीत, नृत्य और नाटक राष्ट्रीय भावना के प्रचार के साधन वने। कांग्रेस के जलसों में राष्ट्रीय गीत एक खास तर्ज से गाया जाता था। भातखडे और विष्णु दिगम्बर जैसे सगीत के पडितो ने सगीत में नए

वीणा

शहनाई

सितार

पखावज

मृदग

भातखण्डे
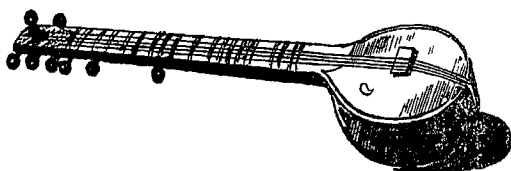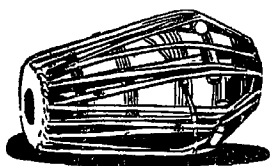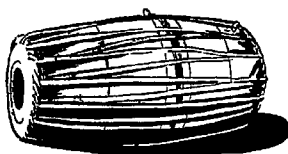
विष्णु दिगम्बर

प्राण फूकने का बीड़ा उठाया। सन् 1916 मे बड़ौदा मे पहला संगीत सम्मेलन हुआ। उसमे उस समय की हालत पर अच्छी तरह विचार किया गया। अब हम जाग गए थे। अपनी कला और सभ्यता को पहचानने लगे थे। इसलिए यह मांग हुई कि ठीक ढग से सगीत सिखाने का प्रवन्ध होना चाहिए। उसका फल यह हुआ कि ग्वालियर में गधर्व महाविद्यालय और लखनऊ मे हिन्दुस्तानी संगीत सिखाने वाला मैरिस कालेज, जिसे अब भातखण्डे सगीत विश्वविद्यालय कहते है, खोला गया।

भारत के सगीत का इतिहास बतलाया जा चुका। अब कुछ सगीत के रूप को भी जान लेना चाहिए। किसी गाने मे स्वर के उतार-चढाव के कुछ बंधे हुए नियमो को राग कहते है। साल में छ ऋतुएँ होती है। हर ऋतु का एक राग होता है। हर राग की पाच रागिनिया होती है। इसी तरह हर राग के आठ पुत्र और उनकी आठ भार्याएँ होती है। इन रागो को अलग-अलग ठाठो मे बाधा गया है। परन्तु विष्णु नारायण भातखण्डे ने इन रागो को केवल दस ठाठो मे ही बाधा है। हर राग का नाम किसी देवता, उस राग के बनाने वाले या उस राग के प्रेमी राजा के नाम पर रखा गया है। हर राग किसी खास ऋतु मे या दिन के किसी खास समय मे गाया जाता है। राग मे जो सबसे खास स्वर होता है उसी के हिसाब से समय ठीक किया जाता है।

राग दो प्रकार के होते है—शुद्ध और संकीर्ण। शुद्ध राग में कोई और राग नही मिला रहता। जहा कई रागों को मिलाकर एक राग बनाया जाता है, उसे सकीर्ण राग कहते है। किसी राग के खास स्वर को वादी कहते हैं। वह पूरे राग पर छाया रहता है। उसके बाद जिस स्वर का सबसे अधिक प्रभाव होता है, उसे सम्वादी कहते है। जिस स्वर को राग या रागिनी में बिलकुल छोड़ देते है, उसे विवादी कहते है।

भारत के गाने कई तरह के है, जैसे ध्रुपद, खयाल, टप्पा, ठुमरी, गजल, भजन ग्राम गीत। ध्रुपद और टप्पा के गाने वाले अब कम मिलते है। ध्रुपद के सर्वोत्तम और प्राय. अतिम आचार्य आजकल उस्ताद रहीमुद्दीन खां डागर हैं।

पुराने सगीतों पर भी नए-नए प्रभाव पड़ रहे है। कहा नही जा सकता कि आगे चलकर उनका यही रूप रहेगा या बदल जाएगा।

जिस प्रकार भारत की सभ्यता कई कौमो की मिली-जुली सभ्यता है, उसी प्रकार भारत के संगीत मे भी कई देशों और कौमों का दान है। इस दान ने सगीत के भंडारे को भरा है और उसमे बराबर निखार आया है।
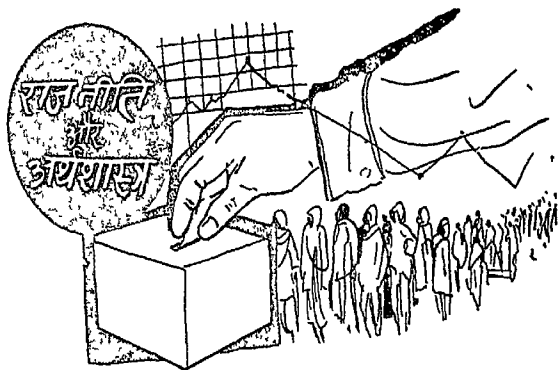
राज्य प्रबन्ध के बदलते रूप

मनुष्य की गिनती गिरोह बनाकर रहने वाले प्राणियो मे की जाती है। उसने धरती पर आने के समय से अब तक अनोखी उन्नति की है। इसका कारण मिल-जुल कर रहना ही है। आदमी की उन्नति का इतिहास उसके मिल-जुलकर रहने का इतिहास है। शुरू से ही मनुष्य व्यक्ति-व्यक्ति और टोली-टोली के आपसी सम्बन्धो को अच्छा बनाने और पूरे समाज को एक सूत्र मे बाध देने की कोशिश करता रहा है।

पहले लोग छोटे-छोटे समूह या टोलिया बनाकर रहते थे। शिकार और ढोर चराना उनका काम था। शिकार या चरागाहो की खोज मे ये टोलिया इधर-उधर घूमा करती थी। उस समाज मे कोई भी चीज किसी एक आदमी की न थी। सब

चीजें पूरी टोली की थी। हर टोली एक वश या कुनबा कहलाती थी। वे वश आज जैसे छोटे-छोटे न थे। एक-एक वश मे बहुत लोग थे। कभी-कभी एक वश बढकर कई टोलियो मे भी बंट जाता था।

एक ही वश की कई टोलिया कभी-कभी किसी जगह जत्थो मे इकट्ठी हो जाती थी। वैदिक समय में इस तरह इकट्ठा होने को 'ग्राम' कहते थे।

जब लोगो ने खेती-बाडी करना शुरु किया, तो वे घर बनाकर बसने लगे। वे जिन जमीन पर अधिकार करते, वहा बस्तिया बनाकर रहने लगते। एक-एक वश की टोलिया कई बस्तियों या 'ग्रामो' मे बस गई और इस तरह 'कबीले' बन गए। हमारे देश मे पुराने जमाने मे 'कबीलो' को 'जन' कहते थे और जिस इलाके मे कबीले के लोग बस जाते थे, वह 'जनपद' कहलाता था।

पहले टोलियो के पास न ज्यादा धन था, न कमाने के बडे साधन। इसलिए जो कुछ था, सब पर पूरी टोली का अधिकार था। सबको अपने हिस्से का काम करना पडता था, क्योकि उसके बिना टोली का जीना दूभर हो जाता। लेकिन कमाने के साधन बढने और अच्छे होने के साथ-साथ कुछ लोगो ने इन पर अधिकार करना आरम्भ किया। निजी धन के साथ-साथ समाज मे लोगो के अधिकारो और कर्तव्यो का झगड़ा चला। जमीन, पशुओ और हथियारो के लिए अलग-अलग टोलियो मे लडाइया भी होने लगी। लड़ाइयों में सेना की अगुआई, बस्तियो के प्रबध, लोगो की निजी सम्पत्ति के अधिकारो की रक्षा और आपसी झगड़े निबटाने के लिए 'राज्य' की जरूरत जान पड़ी।

वेदो में ऐसा वर्णन मिलता है कि राजा की जरूरत युद्धो के कारण हुई और राजा का चुनाव किया जाता था।

उस समय देश छोटे-छोटे राज्यो मे बटा था। बहुत से राज्यो मे 'गणतत्र' ढग का शासन था। गणतत्र दो प्रकार के होते थे। कुछ ऐसे थे जहा सब नागरिक एक सभा मे इकट्ठे होकर राज-काज चलाते थे। गण के मुखिया का भी सब मिलकर चुनाव करते थे। नागरिको को पूरी स्वतन्त्रता थी। उन लोगो मे बाकायदा वोट लेने,

नियम के साथ प्रस्ताव पेश करने और भाषण देने का चलन था। वोट को तब 'छन्द' और प्रस्ताव को 'ज्ञप्ति' कहते थे। जब किसी बात का निपटारा न हो पाता तो उस पर विचार करने के लिए समिति बनाई जाती थी, जिसे 'उद्वाहिका' कहते थे। कुछ दूसरी तरह के गणतन्त्र थे जिनमे परिवारो या गोत्रों के मुखिया इकट्ठे होकर राजकाज चलाते थे। वे 'वृद्ध' कहलाते थे।

वैदिक युग के 'जनराज्य' या गणराज्य बाद मे 'राष्ट्र' या 'जनपद' कहलाने लगे। जनपदो को जीत कर 'महाजनपद' बनाए गए। भारत में मौर्य साम्राज्य से तीन चार सौ साल पहले कई 'जनपद' थे और सोलह बड़े 'जनपद' या 'महाजनपद' बन गए थे। मगध के सम्राटो ने इन महाजनपदो और दूसरे जनपदों को जोड़कर साम्राज्य की नीव रखी। मौर्य सम्राट एक साम्राज्य बनाकर पूरे राष्ट्र को एक करना चाहते थे।

भारत से बाहर पश्चिमी देशो मे भी राज्य शासन संस्था का विकास लगभग इसी रीति से और लगभग इसी समय मे हुआ।

यूनान मे छोटे-छोटे कबीलो के कई 'जनराज्य' बने। एथेंस, स्पार्टा, कारिंथ आदि नगरो मे छोटे-छोटे राज्य थे। इन राज्यो की संख्या सैकड़ों में थी। राजकाज का ढंग अलग-अलग था। कुछ राज्यो मे गणतन्त्रो को मिटाकर बली लोग खुद राजा बन गए थे। पर दूसरे बहुत से राज्यो मे लोकतन्त्र के ढंग पर राजकाज चलता था। उदाहरण के लिए एथेंस यूनान का एक खास नगरराज्य था, जहा सब नागरिक इकट्ठे होकर अपना शासन चलाते थे। सभी बातें अधिक लोगों की राय से तय होती थी। 'लोक सभा' में हजारो नागरिक बैठते थे। उन्हे अपनी तरफ खींचने के के लिए भाषण देने का उन दिनो खूब अभ्यास किया जाता था। वोट के समय नागरिक 'हा' या 'ना' कहकर अपनी राय देते थे। जिसके पक्ष में आवाज ऊची सुनाई देती, वह जीता हुआ माना जाता था। इसलिए लोगो को समझाया जाता था कि खूब चिल्लाकर वोट दो। कानून सब नागरिको को समान मानता था, इसलिए अफसर रखने के लिए लाटरी डाली जाती थी।

(बायें) डेमस्थनीज एथेंस के नागरिकों के सामने भाषण दे रहा है। (ऊपर) किसी सीप या ठीकरे पर अपनी राय अथवा वोट लिख देने का भी चलन था।

स्पार्टा मे नागरिको को स्वस्थ और मजबूत बनाने पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता था। वे लोग छोटी आयु के बालको को माता-पिता से अलग कर विद्यालयो मे भेज देते थे। वहा उन्हे बहुत कठोर नियम कायदे मानने पडते थे। परन्तु यहा का शासन कुछ खास घरानो के ही हाथ में था, साधारण जनता के हाथ मे नही। वे खास घराने अपने को जनता से बडा और कुलीन मानते थे।

रोम में भी कई नगरराज्य थे जिनमें प्रजा ही राज्य के अफसरो का चुनाव करती थी। वहा भी अधिकतर राज्यो मे राजकाज कुछ कुलीन परिवारो के हाथ मे था। रोम में जनता और कुलीनो का भेद इतना बढ गया कि जनता ने उनका बहुत विरोध किया।

सिकन्दर

जूलियस सीजर

ईसा से कोई तीन सौ साल पहले भारत, यूनान और रोम सब जगह छोटे-छोटे गणतन्त्रो और लोकतन्त्रो का अन्त हो गया और सम्राटो ने छोटे-छोटे राज्यो को जीतकर साम्राज्य बनाने शुरू किए। यूनान मे सिकन्दर, भारत में मौर्य सम्राट और रोम मे जूलियस सीजर ने अपने-अपने साम्राज्य बना लिए।

सामन्तशाही

इस तरह के साम्राज्य बनने के बाद सामन्तशाही का जन्म हुआ। यद्यपि सम्राट सेना के बल पर बहुत-से देशों को जीत कर अपने अधीन कर लेते थे, परन्तु उस जमाने में ऐसे साधन न थे कि दूर-दूर के इलाकों को अकेले राजधानी से चलाया जाए। इसलिए सम्राट दूर-दूर के इलाकों में अपने सूबेदार रख देते थे। ये सूबेदार या सरदार अपने इलाके मे शासन करते थे, सेनाएं रखते थे और जनता से कर वसूलते थे। वे लोग एक बंधी हुई रकम सम्राट के खजाने में हर साल जमा करते थे और लडाई के समय अपनी सेनाएं लेकर सम्राट या महाराजा के लिए लड़ते थे। परन्तु अक्सर बलवान सम्राटों के मरने के बाद साम्राज्य को कमजोर देखकर सरदार लोग स्वतन्त्र हो जाते थे और अपने छोटे-छोटे राज्य बना लेते थे। हमारे देश में मौर्य साम्राज्य बनने से लेकर मुगल साम्राज्य के अन्त तक बराबर ऐसा होता रहा। दुनिया के दूसरे देशो का भी यही हाल था।

आज के राज्य

अठारहवी सदी मे यूरोप मे विज्ञान की कुछ नई खोजे हुई। उनमें भाप का इजन मुख्य है। उसने समाज का कायापलट कर दिया। नए-नए कल-कारखाने खुले। कल-कारखानो के खुलने से एक नया आन्दोलन छिड़ा। उस आन्दोलन ने सामन्तो का अन्त कर दिया और नए ढग की सरकारे सामने आई, जिन्हे जनता अपने चुने हुए लोगो के जरिए चलाने लगी।

राज्यो के रूप

शुरू से ही राजकाज चलाने के ढगो मे हेर-फेर होते रहे है। राज्यो के चार रूप हमारे सामने है :—

1 राजतन्त्र—इस प्रकार के शासन की बागडोर एक ही आदमी के हाथ मे होती है, जो आमतौर से राजा कहलाता है। वह कभी सलाहकारो की राय से राज

चलाता है और कभी बिल्कुल अपनी इच्छा और अपनी समझ से। इस प्रकार के शासन को राजतन्त्र कहते है। पुराने राजे-महाराजे अक्सर किसी की राय की परवाह किए बिना अपनी इच्छा से ही शासन करते थे। ऐसे राजाओं के शासन को स्वेच्छाचारी राजतन्त्र कहते है। लेकिन आज के युग में राजा-महाराजा भी अधिकतर जनता की राय के अनुसार ही राजकाज चलाते है। जैसे इग्लैंड में राजतन्त्र होते हुए भी राजा वहा की पार्लियामेंट की इच्छा के विरुद्ध कुछ नही कर सकता। राजतन्त्र की विशेषता यह है कि राज्य पर राजाओं का खानदानी अधिकार होता है।

2 **कुलीनतन्त्र**—ऐसे शासन मे सत्ता किसी एक आदमी के हाथ मे नही होती, बल्कि धनी और कुलीन परिवार या ऐसे परिवारो के कुछ लोग मिलकर राजकाज चलाते है।

3 **अधिनायकतन्त्र**—जब कोई आदमी अपने साहस, शासन करने की योग्यता, वीरता आदि गुणो से सारी जनता को वश में करके या जोर-जबरदस्ती, चालाकी और होशियारी से जनता के हाथो से सारी ताकत अपने लिए माग या छीन लेता है और फिर अपनी मर्जी से शासन करने लगता है तो ऐसे शासन को अधिनायकतन्त्र, तानाशाही या डिक्टेटरी कहते है। जर्मनी मे हिटलर और इटली में मुसोलिनी का शासन इसी प्रकार का था। पुराने समय मे रोम में जूलियस सीजर ने और फ्रांस में नेपोलियन ने भी ऐसे ही अधिकार पा लिए थे।

4 **लोकतन्त्र**—ऊपर बताए तीनो ढगो का शासन आजकल अच्छा नही माना जाता। आज के ससार ने लोकतन्त्र को अपनाया है। इसका अर्थ यह है कि राज्य का प्रबन्ध सब लोगों की राय से हो। जनता बिना किसी दबाव के अपनी मर्जी से उसमें मनचाहा हेर-फेर कर सके। जनता खुद अपने राज्य की मालिक हो।

राष्ट्रपति

उप-राष्ट्रपति

प्रधान मंत्री

मंत्रि-मंडल

संसद्

भारत मे प्रतिनिधि प्रणाली की सरकार का रूप

प्रतिनिधि प्रणाली

[illegible] ... परन्तु आज के [illegible] ... शासन प्रबन्ध [illegible] ... इस कारण 'प्रतिनिधि प्रणाली' का चलन हुआ। आज [illegible] जनता अपनी इच्छा के प्रतिनिधि चुन देती है। ये प्रतिनिधि थोड़े समय के लिए चुने जाते हैं। उस समय बीत जाने पर प्रतिनिधियों का फिर चुनाव होता है और जनता को मौका मिलता है कि [illegible] जिसे चाहे, उसे प्रतिनिधि चुने।

दल

देश का शासन किस तरह चलाना ठीक होगा, इस पर लोगो की अलग-अलग राय होती है। एक राय या विचार वाले लोग मिलकर दल बना लेते है। चुनाव मे अलग-अलग दल वाले आदमी खड़े करते हैं। जनता सबकी बाते सुनती है। फिर जिसे वह पसन्द करती है उसे वोट देती है।

लोकतंत्री शासन में कई दल जरूर रहते है।

धारा सभा

जनता के चुने हुए प्रतिनिधि एक जगह इकट्ठे होकर शासन का काम चलाते है। प्रतिनिधियो की यह सभा कई नामो से पुकारी जाती है जैसे धारा सभा, विधान सभा, संसद, एसेम्बली या पार्लियामेंट। यह सभा कानून बनाती है और इस बात की देखभाल करती है कि राजकाज उसकी इच्छा के अनुसार होता है या नही।

मंत्रिमंडल

ऊपर बताया गया है कि कई दल के लोग चुनाव लड़ते है। ऐसा हो सकता है कि किसी दल के ज्यादा और किसी के कम प्रतिनिधि चुने जाए। सभा मे जिस दल के प्रतिनिधि अधिक होते है उस दल के नेता को शासन का भार सौंपा जाता है। वह अपने साथी चुनकर मंत्रिमडल बनाता है। वे मन्त्री शासन के कामो का बटवारा कर राज-काज चलाते है। परन्तु दल सब के नेता की बात मानकर एक 'टीम' की तरह काम करते हैं। जब तक मंत्रिमडल पर आधे से अधिक प्रतिनिधियों का विश्वास रहता है, तब तक मंत्रिमडल शासन का काम चलाता है। अगर प्रतिनिधि सभा के आधे से अधिक लोग कभी कह दे कि उनका मंत्रिमडल पर विश्वास नही रहा, तो उसको तुरन्त हट जाना पडता है। फिर प्रतिनिधि सभा में जिस दल के अधिक लोग होते हैं, वह मन्त्रिमण्डल बनाता है।

प्रतिनिधि सभा अगर सरकार के खर्चे के प्रस्ताव को रद्द कर दे, या सरकार के किसी खास प्रस्ताव को मानने से इन्कार कर दे, तो ऐसा समझा जाता है कि मन्त्रिमण्डल पर प्रतिनिधियो का विश्वास नही रहा।

परन्तु अगर मन्त्रिमण्डल यह समझे कि देश की जनता उसके साथ है और प्रतिनिधि सभा जनता का ठीक प्रतिनिधित्व नही कर रही, तो वह प्रतिनिधि सभा को तोड़ कर फिर से चुनाव करा सकता है। नया चुनाव होने से यह बात साफ हो जाती है कि देश की जनता में से अधिक लोग किस नीति को पसन्द करते है।

आपको खुले मैदान के कुछ खेल बतलाएँगे।

फुटबाल

यह खेल शुरू मे रोम मे खेला जाता था। ब्रिटेन वालो ने यह खेल वही से सीखा। इसमे ग्यारह-ग्यारह खिलाडियो की दो टोलियाँ या टीमे होती हैं। यह खेल एक घण्टे का होता है। मैदान के दोनो सिरो पर आमने-सामने दो-दो बल्लियाँ लगा दी जाती है। इन दोनो बल्लियो के बीच की जगह गोल कहलाती है। एक टोली दूसरी टोली के गोल के भीतर गेद को पहुचाने की कोशिश करती है। गोल के भीतर गेंद पहुचा देने को 'गोल करना' कहते हैं। जिस टोली के गोल के भीतर गेद अधिक बार पहुचती है, वह टोली हार जाती है।

फुटबाल के खेल मे दोनो टीमे (टोलिया) अपने-अपने खिलाडियो को एक खास कायदे से खडा करती हैं। एक-एक खिलाडी दोनों पक्षो के गोल पर खडे रहते हैं। उन्हे गोलकीपर यानी गोल का रखवाला कहते है।

फिर दो-दो खिलाडी दोनो टीमो के गोलकीपरो से कुछ आगे बढकर उनके दाहिने और बाएँ खडे किए जाते है। उन्हे फुल बैक यानी पीछे रह कर गोल की रक्षा करने वाले कहते है।

फुल बैको के आगे तीन-तीन आदमी और खडे रहते हैं। एक-एक दाहिने, बाएँ और बीच मे। उनको हाफ बैक यानी अपने पाले के अधियारे पर रक्षा करने वाले कहते है।

उनके आगे दोनो टीमों के पाच-पाच खिलाडी रहते है। ये फार्वर्ड यानी अगुआ कहलाते है। दोनो टीमो के फार्वर्ड पूरे मैदान मे बढकर खेलते हैं।

मैदान के बीचो-बीच एक लकीर खिची रहती है। खेल शुरू होते समय दोनो तरफ के फार्वर्ड इस लकीर के पास अपने-अपने पाले मे खडे हो जाते है। तब चमडे
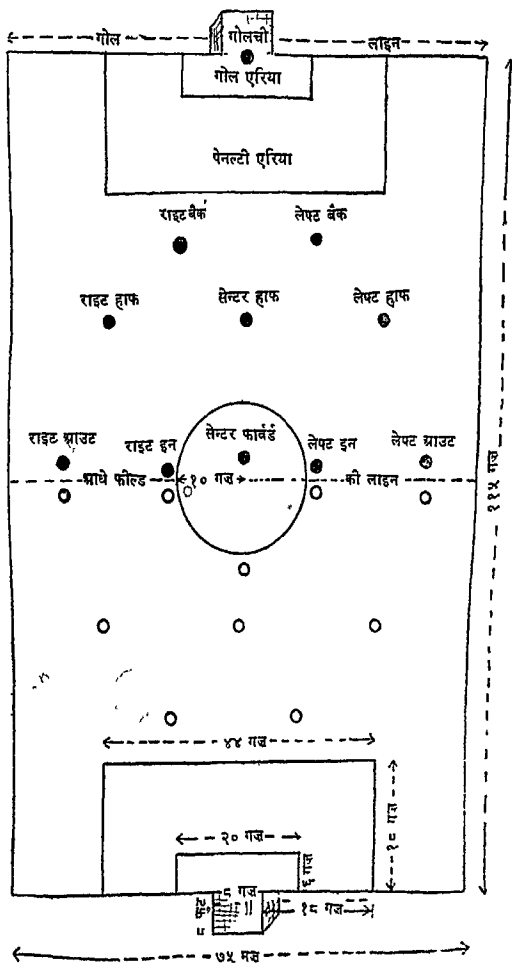
का एक गेद लाकर इस लकीर के बीचों-बीच रखा जाता है। एक आदमी खेल की निगरानी के लिए रहता है। उसे 'रैफ्री' कहते हैं। रैफी के सीटी बजाने पर खेल शुरू होता है। जिस टीम की बारी होती है, उसका बीच वाला फार्वर्ड पैर से गेद को ठोकर मारता है। इसे "किक लगाना" कहते हैं। इसके बाद खेल आरम्भ हो जाता है।

दोनो टीमे कोशिश करती है कि गेद उनके पाले में न आने पाए और वे उसे किक करती हुई दूसरी टीम के गोल की तरफ ले जाएँ और गोल कर दे। फार्वर्ड गेद को दूसरी टीम के पाले की तरफ बढते है। दूसरी टीम के फार्वर्ड रोकते है। अगर वे चूक गए, तो हाफ बैक रोकते है। अगर गेद उनसे भी न रुका, तो फुल बैक रोकते हैं। यदि वे भी न रोक सके, तो गोलकीपर पैर से किक लगाकर या हाथ से पकड़कर गेद को दूसरे पाले की ओर फेक देता है। जब गोलकीपर भी नही रोक पाता और गेद गोल के बीच से निकल जाता है, तो जिसके गोल से गेद निकल जाता है, वह टीम हार जाती है।

गोलकीपर के अलावा और कोई खिलाडी गेद को हाथ से नही छू सकता। गेद को मैदान के चौगिर्दा या सीमा के भीतर रखना पड़ता है। उसके भीतर ही खेल होता है।

इस खेल के खिलाडियो मे ताकत होनी चाहिए। फार्वर्डो को दौड़ने का भी अभ्यास होना चाहिए। पूरी टीम का मिलकर खेलना भी जरूरी है। कोई खिलाड़ा गेंद को अपने पास न रखे, बल्कि दूसरे पाले के खिलाडी के पास आते ही अपने दूसरे साथी को बढा दे। इस तरह एक-दूसरे को देते हुए गेद को गोल तक ले जाएँ।

भारत मे कलकत्ते की कई टीमे फुटबाल मे बहुत प्रसिद्ध है। मोहनबागान और ईस्ट बगाल के नाम खास तौर पर लिए जा सकते है।

हॉकी

हॉकी मे हिन्दुस्तान ने काफी नाम कमाया है। सन 1928 से 1960 तक हमारा देश ससार के सब देशो से हाकी मे विजयी रहा। 1960 मे रोम मे हुए ओलिम्पिक खेलों

मे भारत पाकिस्तान से हार गया। 1964 मे हुए खेलो मे भारत ने पुन. हॉकी का स्वर्णपदक प्राप्त कर लिया। परन्तु पिछले वर्ष मेक्सिको में हुए ओलिम्पिक खेलों में भारत केवल तीसरा स्थान प्राप्त कर सका। हॉकी का स्वर्ण पदक पाकिस्तान को मिला। ध्यानचन्द को अपने समय में हॉकी जगत का जादूगर कहते थे। इंडियन हॉकी एसोसिएशन की स्थापना 1920 ई० में हुई थी। यह सस्था हॉकी में हमारे देश की शिरोमणि सस्था है। इससे पहले 1896 ई० मे आगाखा हॉकी टूर्नामैंट की स्थापना हो चुकी थी और उससे हिन्दुस्तान मे हॉकी के खेल को काफी वढावा मिला था।

भारत में यह खेल यूरोप से आया। यूरोप में हॉकी का चलन बहुत पुराना है। इंग्लैंड मे एक समय लोगो को हॉकी खेलने का शौक इतना बढा कि स्त्रियों की भी हॉकी एसोसिशन वनाई गई। अव तो इंग्लैंड क्या, हमारे देश मे भी हर खेल के लिए स्त्रियों के सगठन वन गए है। भारत की स्त्रियो की हॉकी टीम विदेशों में जाकर भी खेल चुकी है।

हॉकी का खेल फुटवाल के खेल से अनेक बातों मे मिलता है। इसमें भी ग्यारह-ग्यारह खिलाडियो की दो टीमे होती है। हॉकी के खिलाडी भी फुटबाल के खिलाड़ियो की तरह खडे होते है। पाच आगे बढने के लिए और छ बचाव के लिए।

हॉकी पैर से नही खेली जाती। हॉकी खेलने के लिए नीचे थोड़ा मुड़ा हुआ लकड़ी का एक डडा होता है जिसे 'स्टिक' कहते है। इसका गेद छोटा और कड़ा होता है। गेद स्टिक से खेला जाता है। स्टिक वजन मे 18 से 24 औस तक होती है। गोलकीपर और वैक भारी स्टिको से खेलते है और फार्वर्ड हल्की से।

इस खेल मे हाथो की जादूगरी और पैरो की फुर्ती देखने लायक होती है। आगे वढने वाले एक ओर के खिलाडी गेंद को अपनी स्टिक के सहारे ऐसे चलाते है जैसे गेंद डंडे के साथ चिपका हुआ हो। दूसरी ओर के खिलाड़ी के सामने पड़ने हो उसे पलक मारते अपने दूसरे साथी के पास पहुचा देते है। कभी वाईं ओर कभी दाईं ओर गेंद उडती-सी दिखाई देती है।

हाकी का मैदान
७ गज
२५ गज की लाइन
१०० गज
१५ गज
८ गज
५५ से ६० गज

लेकिन दूसरी ओर के खिलाडी भी चिड़ियो की भाति उड़कर गेद को बीच मे ही राक कर दूसरी ओर धावा बोल देते है। गोल तब होता है जब हाफ बैकों और फुल बैको को पार कर और गोलकीपर को बेबस करके गेद गोल के डडो के बीच से निकल जाए।

क्रिकेट

इस खेल में भी ग्यारह-ग्यारह खिलाडियो की दो टोलियाँ या टीमे होती है। दोनों टीमे बारी-बारी से खेलती है। यह खेल गेद और बल्ले से खेला जाता है।

मैदान के बीचों-बीच एक चटाई-सी बिछी रहती है। उसके दोनों छोरो पर तीन-तीन डंडे गडे रहते है, जिन्हे विकेट कहते है।

खेलने वाली टीम के दो खिलाडी एक-एक विकेट के सामने हाथ में बल्ला लेकर खडे हो जाते है। अब दूसरी टीम का कप्तान अपने साथियों को खडा करता है। एक खिलाडी विकेट के पीछे गेद पकडने के लिए खडा किया जाता है। दो खिलाडी दोनों विकेटो के पास गेद फेकने के लिए खडे होते है। बाकी आठ मैदान में इधर-उधर खडे हो जाते है। इनका काम भी गेद पकडना होता है।

गेद फेकने वाला एक तरफ के विकेट के पास से सामने के विकेट को गिराने के लिए गेद फेकता है। खेलने वाली टीम का जो खिलाड़ी उस विकेट के पास रहता है, वह अपने बल्ले से गेद को मार कर दूर कर देता है। अगर वह हटा न सके और गेद जाकर विकेट से छू जाए, तो वह खिलाडी खेल से बाहर हो जाता है। इसे आउट होना कहते है। तब खेलने वाली टीम का कप्तान उसकी जगह बैठे हुए खिलाडियो में से एक को भेजता है।

गेद मारते ही खेलने वाली टीम के दोनो खिलाड़ी दौड़कर एक-दूसरे की जगह

पर पहुंच जाते हैं। अगर एक वार दोनो खिलाड़ी एक-दूसरे के विकेट तक पहुँच जाएँ, तो एक दौड या रन माना जाता है। इस प्रकार वे जितनी वार दौड़ सकें, उतने ही रन बनेंगे। गेद फेकनें वालो की टीम बल्ला मारने वालो के रन बनाने मे रुकावट डालती है। गेद पर वल्ले की चोट पडते ही वे लपककर गेंद को पकड लेते है और विकेट से छुआने की कोशिश करते है। अगर दौडने वाला विकेट तक न पहुँचा हो और गेंद विकेट से छुआ दी जाए, तो वह खिलाड़ी आउट हो जाता है।

आउट करने का एक ढग और भी है। वल्ले से मारने पर यदि गेद उछल जाए और उसे दूसरी टीम का खिलाडी लपक कर हाथ मे पकड़ ले, तो खिलाडी आउट माना जाता है।

यदि खिलाडी गेद को इतनी जोर से मारे कि वह मैदान के छोर तक पहुँच जाए, तो विना दौडे चार रन मान लिए जाते है। यदि गेद मैदान से वाहर निकल जाए, तो छ रन माने जाते है।

एक छोर से छ· बार गेद फेकने के वाद छ वार दूसरी छोर से फेंकी जाती

है। दूसरी छोर से फेकने के लिए दूसरा खिलाड़ी रहता है।

गेंद फेकने वाले वहुत ही होशियार होते है। वे कुछ ऐसे ढग से गेद फेकते है कि अनाडी खिलाड़ी तो एक ही बार में आउट हो जाए। गेद फेकने वाले की हमेशा यह कोशिश रहती है कि दूसरी टीम का खिलाडी गेद को मार न पाए और गेंद जाकर विकेट को छू ले। कभी-कभी गेद इतने धीरे आती है कि खिलाड़ी उसकी तेजी का गलत अन्दाजा कर लेता है और गेद विकेट को उडा देती है। वह कभी दाहिनी ओर टप्पा खाकर विकेटों की ओर आती है और कभी बाई ओर टप्पा खाकर उछलती और विकेटों को जा लगती है। गेंद फेकने वाला कभी घूमता हुआ गेद फेंकता है जो ऐसी दिखाई देती है कि इधर-उधर जा गिरेगी, पर वह ठीक स्थान पर टप्पा खाकर विकेट को उडा देती है।

उधर वल्लेबाज भी प्रत्येक प्रकार के गेद को मारने में चतुर होते है। वे गेद फेकने वाले को ऐसा छकाते है कि वह पसीने-पसीने हो जाता है, पर उन्हें आउट नही कर पाता। कभी दन से चौका और कभी छक्का जमाते है। देखने वालों को उस समय वडा आनन्द आता है। जब इधर गेद फेकनें वाला गेद को पूरी चतुराई से फेकता है और उधर वल्लेवाज रन पर रन बनाते जाते है।

जव एक-एक कर सभी खिलाड़ी आउट हो जाते है, तब दूसरी ओर के खिलाड़ी खेलते और पहले खेलनें वाले खिलाते है। दो-दो बार खेल चुकनें पर जिस टीम के रन अधिक होते है, उसकी जीत होती है।

क्रिकेट मे विकेट के पीछे गेद रोकने वाला बडे काम का होता है। वह गेद को इधर-उधर निकलनें से रोक कर लोक लेता है। यदि वह खिलाड़ी होशियार हो तो वहुत से रन वचा देता है और कभी-कभी आँख झपकते गेद को विकेटों से छुआकर उन्हे गिरा देता है और चिल्लाता है 'आउट'।

खेल ठीक से खेला जा रहा है या नही इसकी देखरेख के लिए एक आदमी होता है। वह अम्पायर कहलाता है। अम्पायर ऐसा आदमी होता है जो क्रिकेट का अच्छा खिलाडी हो और खेल की बारीकियो को समझ सके। वह किसी भी टीम का पक्ष नही लेता।

क्रिकेट मे इंग्लैंड, आस्ट्रेलिया, भारत, वेस्ट इंडीज़ और पाकिस्तान ने बहुत नाम किया है। भारत के लाला अमरनाथ, वीनू मनकड, हजारे, उमरीगर, मुश्ताक अपने समय में संसार के श्रेष्ठ खिलाड़ियों में रह चुके हे। प्रिंस दिलीप सिंह ने क्रिकेट खेलने में बहुत नाम कमाया था और उनकी वडी धाक थी।

कबड्डी

फुटबाल, हॉकी और त्रिकेट अदि खेल वाहर से आए है। इनके सामान पर बहुत पैसे खर्च होते है। खेल का मैदान भी बहुत रुपए और मेहनत से तैयार किया जाता है। पर कुछ देशी खेल ऐसे है जिनमे किसी सामान की जरूरत नही होती। उनमें आनन्द भी खूब आता है और कसरत भी हो जाती है। कबड्डी ऐसा ही खेल है।

चाँदनी रात मे या शाम के हलके-हलके प्रकाश मे खिलाडी इकट्ठे होते हैं। एक बड़े-से गोले में बीचो-बीच एक लकीर खीच दी जाती है। इस तरह दो पाले वन जाते है। दोनों टीमें एक-एक पाले मे खडी हो जाती हैं।

फिर एक टीम का एक खिलाड़ी 'कबड्डी······कबड्डी' कहता हुआ दूसरी ओर के खिलाड़ियों मे घुसता है। घुसने वाला कोशिश करता है कि सामने वाले किसी खिलाडी को छूकर, बिना पकडे गए अपने पाले में वापस आ जाए। उधर दूसरी ओर वाले इस ताक में रहते है कि खिलाडी की आख बचाकर उसको पकड ले। बिना पकडे गए वह जिसे छू लेता है, वह 'मर' जाता है। यदि पकड़ा जाता है तो वह खुद मर जाता है। जिस टीम के सब खिलाडी मर जाते है, वह हार जाती है।

इस खेल मे चौकसी, फुर्ती और बल की वडी जरूरत है। कबड्डी वोलने वाला देखता रहता है कि उसको पकड़ने के लिए कैसे घेरा जा रहा है। उधर किसी न किसी को छुए विना आना भी बेकार है। इसलिए वह ऐसे चलता है कि घिर न जाए और मौका पाते ही शेर की तरह झपट कर किसी को छू कर वापस चला आए।

उसके झपट्टा मारते ही सामने वाले खिलाडी तड़प कर उसको पकड़ लेते है। यदि उसकी सास टूट गई, तो वह् मर गया। लेकिन अगर वह अपने को छुडा ले या पकडने वालो को खीच कर बीच की रेखा तक पहुँचा दे तो पकडनेवाले मर जाते है।

खिलाड़ी को अपनें पाले में लौटले हुए भी पूरी सावधानो रखनी पडती है। दूसरी टीम के फुर्तीले खिलाड़ी लौटले ही उसका पीछा करते है।

सन् 1918 के वाद इस खेल में बहुत से हेरफेर हुए है। सन् 1936 में यह् खेल र्बलिन के अन्तर्राष्ट्रीय खेलों के मौके पर खेला गया था।

जवाहरलाल नेहरू

आधुनिक काल मे गाधी जी को छोड़, जवाहरलाल से अधिक लोकप्रिय भारतीय नेता दूसरा कोई नही हुआ। उन्हे भारत को समस्त जनता सच्चे दिल से प्यार करती थी। राष्ट्र के बालक तो उन्हे अपना चाचा मानते थे। जनता मे उन्हे स्फूर्ति मिलती थी और जनता के बीच वह जितने प्रफुल्ल रहते उतने और कही नही। भारी जनसमुदाय को देख वह ऐसे उत्साहित हो उठते कि उनकी सारी मुखमुद्रा उत्साह से भर जाती। भारी से भारी भीड़ से भी वह डरते नही थे, जनता को मन्त्र-मुग्ध करने का जो ढग उन्हे आता था, वह अनुपम था। जनता भी उन पर इतनी मुग्ध थी कि जिधर भी वह जाते, लाखो की सख्या मे वह एकत्रित होती।

जवाहरलाल नेहरू आधुनिक भारत के निर्माताओ मे थे। उनका नाम स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान मत्री और स्वाधीनता आन्दोलन के नेता के रूप मे ही नही

बल्कि मानवता के इतिहास में महामानव के रूप में ससम्मान स्मरण किया जाएगा।

उनका ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्व उन्हें अपने पिता मोतीलाल जी से विरासत में मिला था। मोतीलाल जी कहा करते थे कि "मुझे जवाहरलाल के बाप होने का फख्र है।" पंडित मोतीलाल नेहरू के पूर्वज दो शताब्दी पूर्व कश्मीर से आकर उत्तर प्रदेश में बस गए थे। उनका घराना प्रयाग के सुसंस्कृत, सम्पन्न और प्रतिष्ठित घरानों में था। वकील के रूप में मोतीलाल जी का देश भर में नाम था।

जवाहरलाल नेहरू का जन्म 14 नवम्बर, 1889 को हुआ था। पन्द्रह वर्ष की आयु तक उनकी शिक्षा-दीक्षा घर के सम्पन्न वातावरण में ही हुई। उसके बाद वह उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड भेजे गए। 1912 में वकालत की शिक्षा पूरी करके वे स्वदेश लौटे और प्रयाग में वकालत करने लगे।

1916 मे जब कांग्रेस का अधिवेशन लखनऊ में हुआ तब उन्होंने पहली बार महात्मा गांधी के दर्शन किए। उसी वर्ष उनका विवाह हुआ। उनकी पत्नी कमला नेहरू अत्यन्त विदुषी थी। उनकी पुत्री इन्दिरा प्रियदर्शिनी, जो आगे चलकर इन्दिरा गांधी के नाम से प्रसिद्ध हुईं, 1918 मे पैदा हुईं। आजकल आप भारत की प्रधान-मन्त्री है।

1919 मे अमृतसर में जलियावाला बाग के हत्याकांड ने भारतवासियो को हिला दिया। विदेशी शासको के अत्याचार की गूंज देश के कोने-कोने में फैल गई और जनता इस अन्याय से मुक्ति पाने के लिए बेचैन हो गई। देशबन्धु चित्तरंजन दास के साथ जवाहरलाल को अमृतसर की यात्रा करने का मौका मिला और वहां की दशा देख कर उनका चित्त उद्वेलित हो उठा। उन्होंने हृदय से अनुभव किया कि विदेशी शासन दमन और अन्याय पर टिका हुआ है। तभी उन्होंने निश्चय किया कि भारत की विदेशी शासन से पूर्ण मुक्ति ही उद्धार का एकमात्र उपाय है।

1921 में महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग का आन्दोलन छिड़ गया। जवाहरलाल जी पहली बार जेल गए और पूरी तरह राष्ट्रीय आन्दोलन के सैनिक बन गए। जवाहरलाल गांधीजी को अपना गुरु मानते थे और उनका उतना ही आदर करते थे, जितना अपने पिता का। अंग्रेजी सरकार ने भारतवर्ष में कुछ सुधार करने के

उद्देश्य से 'साइमन कमीशन' नाम से एक जाच कमीशन भेजा। कांग्रेस नें उसका बहिष्कार करने का निश्चय किया। लखनऊ मे एक विरोधी जुलूस का नेतृत्व जवाहरलाल ने किया था और पुलिस ने उन पर लाठिया बरसाई। जवाहरलाल नें अपनी आत्मकथा मे लिखा है कि "मेरा स्वाभिमान इन प्रहारो से तिलमिला उठा था और मेरी बड़ी इच्छा हुई कि पलट कर मैं उन्हें मारूं, पर गाधी जी ने अहिंसा की जो सीख दी थी वह मुझे रोकती रही और मैं निश्चल भाव से पुलिस के प्रहार सहता रहा।"

जवाहरलाल के त्याग, साहस और पराक्रम का भारतीय मानस पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह देश के सर्वप्रिय नेता बन गए और युवको के तो वह हृदय-सम्राट ही हो गए। 31 दिसम्बर, 1929 को पंजाब मे रावी के तट पर काग्रेस का जो अधिवेशन हुआ उसकी अध्यक्षता महात्मा गांधी नें जवाहरलाल को सौंपी थी। 1930 में सत्याग्रह आन्दोलन के कारण पहले जवाहरलाल और फिर गाधी जी जेल मे डाल दिए गए।

इन्ही दिनो जवाहरलाल की पत्नी कमला बहुत बीमार हो गई। उनका इलाज जर्मनी मे हो रहा था। उनकी अन्तिम घडी जानकर सरकार ने जवाहरलाल को रिहा कर दिया ताकि वे अपनी पत्नी के पास पहुच सके। जवाहरलाल हवाई जहाज से जर्मनी गए, पर वे कमला को बचा नही सके।

स्वदेश लौटते ही जवाहरलाल फिर से भारतीय राजनीति मे कूद पडे। 1942 में जब गाधीजी ने अग्रेजो के विरुद्ध "भारत छोडो" आन्दोलन छेडा तब फिर जवाहरलाल को जेल मे डाल दिया गया। इन्ही दिनो उन्होने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "डिस्कवरी ऑफ इण्डिया" लिखी, जो उनकी इतिहास-दृष्टि का प्रमाण है। 1945 मे जब दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त हुआ तो अग्रेज शासको नें काग्रेस के नेताओं को रिहा कर दिया और उनसे भारत की स्वाधीनता के बारे में बातचीत चलाई।

1946 के अन्तिम दिनों मे जब जवाहरलाल नेहरू भारत की अस्थायी सरकार के उपाध्यक्ष बनें तब मुस्लिम लीग नें मन्त्रिमण्डल मे भाग लेनें से इन्कार

कर दिया। अन्त में और कोई उपाय न देखकर देश का विभाजन स्वीकार कर लिया गया और देश पाकिस्तान और भारत इन दो भागों में बँट गया।

15 अगस्त, 1947 को भारत स्वाधीन हुआ। जवाहरलाल स्वाधीन भारत के पहले प्रधानमन्त्री बने। देश में अभूतपूर्व उल्लास की लहर दौड़ गई, पर यह लहर कुछ ही दिन चली, क्योंकि देश के विभाजन के साथ ही साम्प्रदायिक संघर्ष ने भीषण रूप धारण कर लिया।

जवाहरलाल इस भीषण नर-हत्याकाण्ड से बड़ ही दुखी हुए। उन्होने रात-दिन एक कर इस विशाल देश में फैले हुए उत्पात को ठण्डा किया और भारत आने वाले शरणार्थियों को फिर से बसने के लिए अनेक प्रयत्न किए। पर यह उत्पात तभी समाप्त हुआ जब गाधीजी ने 30 जनवरी, 1948 को अपने प्राणो की आहुति देकर देशवासियों की आँखें खोल दी। अपने पिता, माता और अपनी पत्नी की मृत्यु पर भी जवाहरलाल को इतनी वेदना नही हुई थी जितनी वेदना गाधीजी की मृत्यु से हुई।

उन्होंने अपनी वेदना को प्रकट करते हुए कहा, "हमारे जीवन से प्रकाश का लोप हो गया है··· ·····हर जगह अन्धकार ही अन्धकार नजर आता है। गांधीजी ने अपनी मृत्यु से हमे जीवन की महान वस्तुओ, जीवन सत्य, की याद दिलाई है, यदि हम इसे याद रखते हैं तो भारत के लिए यह शुभ होगा।"

अपने 17 वर्ष के प्रधानमंत्रित्व काल मे जवाहरलाल ने देश के भविष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने प्रतिदिन 11 घण्टे से 15 घण्टे तक अनवरत कार्य किया और नए भारत के निर्माण के उद्देश्य में अपने को खपा दिया।

उन्ही के निर्देशन में भारतवर्ष ने लोकतन्त्र का सिद्धात अपनाया। प्रत्येक वयस्क नागरिक को मतदान का अधिकार मिला। विभाजन के फलस्वरूप शरणार्थियो की विकट समस्या को हल किया गया। 570 देशी राज्यों को नई लोकतन्त्र व्यवस्था के अन्तर्गत लाया गया। 26 जनवरी, 1950 को नया सविधान बना और भारत को सम्पूर्ण प्रभुसत्तासम्पन्न गणराज्य घोषित किया गया। नई व्यवस्था का सूत्र, जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता का शासन रखा गया। नए सविधान के अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को अवसर की समानता दी गयी और धर्म को जनता का निजी मामला माना

गया। विभिन्न वर्गो के वीच सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन दिया गया। देश की आर्थिक, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक प्रगति के लिए योजनाओ का समारम्भ हुआ।

प्रधानमन्त्री के अलावा जवाहरलाल 17 वर्ष तक भारत के विदेशमंत्री भी रहे। इस कार्य में उन्होंने गाँधीजी की 'अहिंसा' की परम्परा को पूरी तरह निभाया। उन्होंने सभी देशो के साथ मित्रता निभानी चाही। उन्होने अपनी दूरदृष्टि से ससार के दो वडे शिविरो के मतभेद घटाने के पूरे प्रयत्न किए। उन्होने विभिन्न देशों मे मेल स्थापित करने के लिए जिन पचशील सिद्धातो का प्रतिपादन किया उसका हर जगह समर्थन हुआ।

वे इस देश की दरिद्र और अपढ जनता को सम्पन्न, सुसंस्कृत एवं शिक्षित वनाने के लिए निरन्तर उद्योग करते रहे।

1952 मे पहले आम चुनाव सम्पन्न हुए और 16 करोड 10 लाख व्यक्तियो ने मतदान किया। काग्रेस पार्टी को वहुमत प्राप्त हुआ।

2 अक्टूवर, 1952 को जवाहरलाल ने किसानो की सहायता के लिए सामुदायिक विकास कार्यक्रम शुरू किया।

प्रधानमन्त्री जवाहरलाल ने अनुभव किया कि जब तक उद्योग और कृषि के बीच तालमेल स्थापित नही किया जाएगा भारत की अपार जनता की समस्याए नही सुलझाई जा सकती।

इस दृष्टि से भारत का इस्पात-उत्पादन 10 टन से अधिक वढाने का निश्चय किया गया। आजादी के समय देश मे एक ही इस्पात कारखाना जमशेदपुर में था। इसके बाद ब्रिटेन की सहायता से एक सरकारी कारखाना दुर्गापुर मे और रूस की सहायता से भिलाई और वोकारो मे इस्पात कारखाने खोले गए।

इसी प्रकार अनेक वडे और छोटे वाध भी बनाए गए। इनमे पजाव मे भाखडा-नगल, उडीसा मे हीराकुड, मैसूर मे तुगभद्रा, आध्रप्रदेश मे नागार्जुन सागर, मध्यप्रदेश में गाधी सागर आदि प्रमुख है।

कृषि की सहायता के लिए सिन्दरी में रासायनिक खाद का कारखाना खोला गया और अनेक नए कारखाने स्थापित करने की योजनाए बनाई गईं। जमीन जोतने के लिए ट्रैक्टरो का प्रयोग शुरू किया गया और कृषि सहकारी समितिया बनाई गईं। भूमि के स्वामित्व की सीमा 30 एकड़ तय की गई।

नेहरू जी को आधुनिक युग के विज्ञान और टैक्नोलॉजी पर पूरी आस्था थी। इसलिए उन्होंने हर क्षेत्र मे विज्ञान के प्रयोग पर बहुत बल दिया। ट्रॉम्बे मे परमाणु भट्टी स्थापित की गई और कृषि तथा उद्योगों के क्षेत्र में विज्ञान के आधुनिकतम प्रयोग प्रारम्भ किए गए। जवाहरलाल स्वयं जब कभी गावो में दौरे पर जाते किसानों से पुराने तरीको को छोडने और वैज्ञानिक तरीको के अपनाने पर बहुत जोर देते। देश में अनेक प्रायोगिक मशीनी फार्म बनाए गए। इसके अलावा, राष्ट्रीय प्रयोगशालाए भी स्थापित की गई।

जवाहरलाल के अनुरोध पर रचनात्मक कार्य करने वाले स्त्री-पुरुषों की सहायता के लिए तीन अकादमियां—संगीतनाटक अकादेमी, साहित्य अकादेमी और ललित कला अकादेमी—भी स्थापित की गई।

प्रधानमन्त्री ने अपनी अनेक विदेश-यात्राओ के दौरान भारत के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो को भी व्यापक बनाया। उन्होंने जिस नीति पर देश को विदेशो मे आगे बढाया उसी के कारण आज ससार के देश भारत को जानते और पहचानते है।

पुनरुत्थानशील पूर्व को सगठित करने के अपने स्वप्नो को क्रियात्मक रूप देने के लिए उन्होंने बाण्डुग के एशियाई सम्मेलन में भाग लिया। यहां उनके 'पंचशील' के पांच सिद्धान्तों को एशियाई एकता के लिए दस सिद्धान्तों के रूप में स्वीकार किया गया।

1960 में वह न्यूयार्क में सयुक्त राष्ट्र महासभा में शामिल हुए। यहां पर उन्होंने विश्व के नेताओं से निरस्त्रीकरण के उपायों और तरीकों को खोज निकालने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा कि प्रारम्भ में सब राष्ट्रो को परमाणु परीक्षण समाप्त कर लेने चाहिए।

1961 में, बेलग्रेड मे तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन मे उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान

दिया। एशिया और अफ्रीका के अनेक नए देशो ने उनके इस विचार की, कि विश्व के दो बडे गुटों में से हमे किसी में भी सम्मिलित नही होना चाहिए, सराहना की।

1962 में चीन ने पचशील के सिद्धान्तो को ताक मे रखकर नेफा और लद्दाख में भारत पर अकारण आक्रमण कर दिया। इससे जवाहरलाल को बहुत धक्का लगा। वह दूसरों को भी अपने जैसा सच्चा मानते थे। उन्होने इतने पर भी चीन के साथ कटुता का व्यवहार नही किया। कोलम्बो सम्मेलन मे देशो ने जब भारत और चीन मे बातचीत के लिए कुछ प्रस्ताव रखे तो जवाहरलाल ने तुरन्त उन्हे मान लिया। परन्तु चीन ने बातचीत करने के लिए कोलम्बो प्रस्तावो को नही स्वीकार किया।

1964 में वह किसी देश के पहले प्रधानमन्त्री थे जिसने परमाणु परीक्षण निषेध की सन्धि पर हस्ताक्षर किए।

नेहरू जी ने अपने जीवनकाल मे सदा शाति के लिए प्रयत्न किया और युद्ध से दुनिया को बचाया। कोरियाई युद्ध उन्ही के प्रयत्नो से ही समाप्त हुआ। भारतीय सेनाए वहा शान्ति के लिए गईं। हिन्द-चीन में भी नेहरू जी ने शांति के लिए प्रयत्न किया और अन्त मे दोनो पक्ष युद्ध बन्द करने के लिए तैयार हुए। जनेवा का उच्च शिखर सम्मेलन जो 10 वर्षो बाद हुआ, वह भी नेहरू जी के ही प्रयत्नो से सम्भव हो सका था।

पण्डित नेहरू उपनिवेशवाद और गुलामी को शाति के लिए खतरनाक समझते थे। उनका विश्वास था कि जब तक यह दोनों बाते दुनिया मे रहेगी तब तक स्थायी शाति रहना कठिन है। इसलिए उन्होने सदा ही उन लोगो के समर्थन में आवाज उठाई जो अभी भी अपनी दासता की जजीर तोड़कर आजाद होने के लिए कठिन सघर्ष कर रहे है।

जवाहरलाल को भारत रत्न की उपाधि से विभूषित करते हुए भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद ने कहा था "हमे यह जान कर अभिमान होता है कि हमारी शाति-स्थापना की नीति को इस प्रकार सराहा जाता है तथा इस

प्रकार उससे हमारा सम्मान व प्रतिष्ठा बढ़ती है। नेहरू जी की आजीवन सेवाए वर्तमान इतिहास के हर पृष्ठ में स्वाणक्षिरो में अंकित रहेगी।"

नेहरू जी को बच्चो से भी बड़ा प्रेम था, क्योकि वह जानते थे कि यही बच्चे आगे बढकर देश का निर्माण करेंगे। बच्चे भी उन्हे चाचा नेहरू कहकर पुकारते थे। वह बालको को राष्ट्र का अमूल्य धन समझते थे। उन्होंनें बच्चों के कल्याण और विकास के लिए कई योजनाएं बनवाईं। इसीलिए, उनका जन्मदिवस देश में बालदिवस के रूप मे मनाया जाता है।

27 मई, 1964, सारे देश के लिए अपार शोक का दिन बन गया। उस दिन देश के प्यारे नेता जवाहरलाल नें सदा के लिए अपनी आंखें मूंद ली। 28 मई की सुवह राजकीय सम्मान के साथ जवाहरलाल का दाह-संस्कार किया गया। उनके दाह-संस्कार में शामिल होनें के लिए अनेक देशों के सरकारी प्रतिनिधि भारत आए।

कुछ समय बाद जवाहरलाल नेहरू की आखिरी वसीयत प्रकाशित हुई। वसीयत मे उन्होने कहा है :

भारतीय जनता से मुझे इतना प्रेम व स्नेह मिला है कि मै कुछ भी क्यो न करूँ उस प्रेम व स्नेह का एक कतरा भी मैं प्रतिदान में दे नही सका और दरअसल प्रेम जैसी बेशकीमती चीज का कोई प्रतिदान हो भी नही सकता। बहुत लोग सराहे गए है, कुछ को श्रद्धा मिली है, पर भारतीय जनता के सभी वर्ग के लोगों का स्नेह मुझे इतना ज्यादा मिला है कि मै उसके बोझ से दब गया हू, अभिभूत हो गया हू।"